श्रीयुत स्वर्गीय पं० संतलालजी विरचित

श्रीसिद्धचक्रविधान।

(हिंदीभाषा-छन्दोबद्ध)

जिसको

शोलापुरवासी गांधी हरिभाई देवकरण एण्ड संस् द्वारा संरक्षित

भारतीय जैनसिद्धांत प्रकाशिनी संस्था
७ वैशाख ष्ट्रीट, कलकत्ताके
जैनसिद्धांत प्रकाशक प्रेसमें

मंत्री—श्रीलाल जैन काव्यतीर्थने

श्री दिगम्बर जैन पंचायत कलकत्ताकी
सहायतासे
छपाकर प्रकाशित किया।

आषाढ सुदीमें कलकत्ते वासियोंने श्री अष्टाह्निका पर्व "श्री सिद्धचक्र विधान" की पूजन कर सानन्द मनाया। यह आयोजन सेठ श्रीराम कुंदनमल फर्मके मालिक जिनेन्द्रभक्त सेठ कुंदनमलजीने किया था। विधानके प्रतिष्ठापक थे-पं० श्रीनिवासजी शास्त्री और मंडल विविध रंगोंसे कलापूर्ण चित्रकारीके साथ रचा था-अनुभवी वयोवृद्ध विविध मण्डलोंके चित्रण निपुण भाई विलासरायजी चौधरीने। पूजनमें भक्ति रखनेवाले प्रायः सब ही भाई बहनोंने आठ दिन तक ठाट बाटसे भगवानकी भक्ति की परन्तु पुस्तकोंकी प्रतियोंका अभाव सबको खटकता रहा इसलिये विधान समाप्तिके दिन "श्रीसिद्धचक्र पाठ" छपानेके लिये लोगोंने इच्छा प्रकट की और अपनी अपनी रुचिके अनुसार सहायता स्वीकार किया; जिन्होंने जितना रुपया दिया है; उतनी प्रति उनको दे दी गई है। पुस्तक दो प्रतियोंकी सहायता से शुद्ध की गई है तौभी दृष्टि-दोषसे अशुद्धियोंका रह जाना संभव है। आशा है शोधकर आप पढेंगे और क्षमा करेंगे।

आज तक जितनी आत्मा रागद्वेषसे मुक्त होकर शुद्ध चैतन्यमय हुई हैं उनके समूहका नाम ही "सिद्धचक्र" है इसी अभिप्रायको प्रगट करनेवाला बीजाक्षर "ह्रीं" है। सिद्धोंमें मुख्य गुण आठ कर्मोंके नाशसे आठ उत्पन्न होते हैं इसलिये प्रथम दिन आठ गुणोंका सामूहिक पूजन
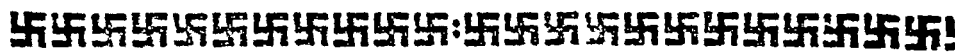
करते हैं। फिर कर्मों की प्रकृतियोंके भेद प्रभेदोंके अभावकी विवक्षासे १६ ३२ ६४ १२८ २५६ ५१२ १०२४ गुणोंकी कल्पनाकर अर्घ चढ़ाकर पूजन की जाती है जिससे सांसारिक आकुलताका नाश उतने समयके लिये हो जाता है। इसी परिणाम विशुद्धिका यह प्रभाव होता है कि मनुष्योंकी मानसिक चिन्ता और शारीरिक सब प्रकारकी व्याधियां नष्ट हो जाती हैं। जिसने भी भक्तिभावसे इस पूजनको किया है उसने अवश्य अभीष्ट फल पाया है इसलिये लोगोंमें इसका इतना प्रभाव है।

इस विधानको अल्पतम द्रव्यसे भी किया जाता है और अति प्रचुर द्रव्योंका संग्रह करके भी। अपनी शक्तिको न छिपाकर जो द्रव्य और भाव पूजन करता है उसे अवश्य सुफल मिलता है। जो शक्ति छिपाकर मायाके भक्त होकर पूजनपाठ करते हैं वे अत्यल्प फल पाते हैं। मंडल माडनेकी विधि तथा अन्य सामिग्री आदिका विवरण पं० श्रीनिवासजी शास्त्री ने जैसा लिखा है वैसा शक्त्यनुसार करके पुण्य उपार्जन करें।

धन्यवाद

इस पुस्तकको छपानेमें सहायता देनेवाले महाशयोंको धन्यवाद है जिनकी कृपासे यह ग्रंथ प्रकाशित हुआ।

निवेदक—

श्रीलाल जैन काव्यतीर्थ

मंत्री–भारतीय जैन सिद्धांत प्रकाशिनी संस्था कलकत्ता

फाल्गुन

विक्रम सं० २००५

श्री सिद्धचक्र विधानका महत्त्व और उसकी विधि ।

गृहस्थ जीवनको सार्थक बनानेके लिये एवं सांसारिक विभूतियोंको प्राप्त करनेके लिये भगवान जिनेन्द्रका पूजनादि विधान करना अन्यतम साधन है। यह निश्चित है कि ये पूजनादि विधान सविधि किये जांय तो गृहस्थको मनवांछित कार्यकी सिद्धि करते हैं इसमें थोड़ा भी संदेह नहीं है। प्रत्येक विधानकी विधि भिन्न भिन्न है किन्तु सबका उद्देश्य सुख शान्तिका मिलना है इसलिये सुख शान्तिके इच्छुकोंको अपनी मनोवृत्ति इन विधानोंके करनेमें लगाना चाहिये। जो गृहस्थ सम्पन्न होकर इन पूजा आदि विधानोंमें अपनी शक्ति एवं द्रव्यादि खर्च नहीं करते तो उनका द्रव्य पाना सार्थक नहीं कहा जासक्ता। जैन शास्त्रोंमें सिद्धचक्र विधान ऋषि मंडल विधान समोशरण विधान आदिका फल मुक्तिपद मिलना बतलाया है तो सांसारिक विभूतियोंको प्राप्ति होना, रोगादिकी शान्ति होना, भयंकर विषधर आदिसे रक्षा होना, पुत्र प्राप्ति होना और व्यापारादिमें धनप्राप्तिका होना आदि कुछ भी महत्त्व नहीं रखता है, वह तो स्वयमेव विधान-विधाताको प्राप्त होही जाता है।

श्रीसिद्धचक्र विधान करनेका महत्त्व आचार्योंने अचिन्त्य बतलाया है। इस विधान को सतीशिरोमणि श्रीमैनासुन्दरीने अपने स्वामी श्रीपाल एवं उनके सहयोगी अन्य योद्धाओंके कुष्ट रोगको दूरकरनेके लिये किया था। उसका यह परिणाम हुआ कि मंत्रोंके द्वारा यंत्रके अभिषेक छिड़कनेसे उनका वह कुष्टरोग विलीन होगया यह कथा पुराणोंमें प्रसिद्ध है। यह बात जरूर है कि यह विधान जितने जितने विशेष विशेष अवलम्बनोंके द्वारा किया जायगा वह उतनो ही विशेष फलप्रद होगा। किन्तु इस विधानको कर सब कोई सक्ते हैं। स्वल्प द्रव्य लगाकर भी हो सक्ता है और विशेष खर्चा करके भी हो सक्ता है। सब कोई अपने अपने भावोंके अनुसार उसके फलको प्राप्त करते हैं।

यह सिद्धचक्र विधान अष्टान्हिक पर्वमें कियाजाता है इसका खास कारण यह है कि अष्टान्हिक पर्वके दिन अत्यन्त पवित्र दिन हैं। इन दिनोंमें प्रत्येक स्थानके मंदिरोंमें पंचमेरु नन्दीश्वर पूजन मंडल मादकर बहुत ठाठबाटसे किया जाता है परन्तु ऐसा कोई नियम नहीं है कि यह सिद्धचक्र विधान अष्टान्हिकको छोड़ कर दूसरे समयमें नहीं हो सक्ता।

इस सिद्धचक्र विधानको किसी चौकी पर या कच्ची ईंटोंका एक चबूतरा बनाकर

पांच रंगोंका एक सुन्दर मंडल (वर्तुलाकार) गोल बनाना चाहिये। बीचमें ॐ बीजाक्षरको स्थापना करना चहिये और उसके चारो तरफ अष्ट दलका एक कमल बनाना चाहिये और उसमें अकारादि वर्णोंकी स्थापना करनी चाहिये तथा उसको तोन परिधिद्वारा वेष्टित करना चाहिये पश्चात सिद्धपरमेष्ठीके आठ गुणोंकी पूजाके लिये प्रथम कोष्ठमें आठ खाने बनाना चाहिये, उन खानोंमें "ह्रीं" बीजाक्षर स्थापन करना चाहिये इसी प्रकार सिद्धोंके १६ गुण ३२ गुण ६४ गुण १२८ गुण २५६ गुण ५१२ गुण और १०२४ गुणोंकी पूजा करनेके लिये उतने ही खाने बनाना चाहिये और उन खानोंमें "ह्रीं" बीजाक्षर स्थापन करना चाहिये। मंडलके बीचमें सिंहासनपर सिद्धचक्रमंत्र स्थापित करना चाहिये तथा मंडलके चारों तरफ अष्ट मंगलद्रव्य और अष्ट प्रातिहार्य स्थापन करना चाहिये, चारों कोनोंमें चार कलश स्थापित करना चाहये, उनकलशोंमें अक्षत सुपारी हल्दी दूर्वा आदि मंगलद्रव्य डालना चाहये, रोलीका स्वस्तिक लगाना चाहिये एवं टूल लपेटा हुआ श्रीफल ऊपर रखना चाहये। एक मंगल कलश जुदा स्थापित करना चाहिये और उसको भी उसी प्रकार सुसज्जित करना चाहिये, मंडपको अच्छी तरह चमर छत्र चंदनवार आदिके द्वारा सुसज्जित करना चाहिये। मंडलके चारोंतरफ चार दीपक और चार धूपदान स्थापित

प्रज्वलित करना चाहिये। प्रत्येक कोष्ठक
करना चाहिये तथा एक अखंडदीपक भी
में श्रीफल, श्रीफल चढानेकी शक्ति न हो तो सुपारी पुंगीफल या बादाम चढाना
चाहिये और अर्घ थालीमें चढाना चाहिये, मंडलके ऊपर चढाया जाय तो कोई
निषेध नहीं, चारों धूपदानमें धूप खेना चाहिये। इस विधानको कोई कोई विद्वान्
अभिषेक पूर्वक भी करते हैं और कोई विना अभिषेक के भी, हमारी समझसे अभिषेक
पूर्वक करनेमें विशेष महत्त्व है क्यों कि वह मंत्रों द्वारा किया हुआ अभिषेक विशेष
प्रभावक हो जाता है जो कि तुरंत आत्माके ऊपर असर डालता है अभिषेक पूर्वक-
जो विधान किया जाता है उसमें अर्घका चढाना, अभिषेका होना और धूपका खेना
ये सब क्रियायें एक साथ होती हैं।

विधान जिस दिनसे प्रारम्भ किया जाता है उसी दिनसे जपका प्रारम्भ हो
जाना चाहिये। जप प्रारम्भकी आदिमें मंगलकलश स्थापन करना चाहिये, जपमें
बैठनेवालोंको शुद्ध धोती चद्दर पहिनना चाहिये। प्रारम्भमें सकलीकरण क्रिया
करना चाहिये। पंचपरमेष्ठीकी पूजन करना चाहिये। उस स्थानके क्षेत्र-
पालके सत्कारार्थ अर्घ चढाना चाहिये। जापका मंत्र लोग भिन्न भिन लेते है किंतु
वह नहीं होना चाहिये। जाप्यमंत्र 'ॐ ह्रीं अर्हं अ सि आ उ सा अनाहतविद्यायै-

नमः' यह है, इसका जाप्य सवा लाख होना चाहिये, यदि इतना नहीं हो सके तो
५१ हजार अवश्य होना चाहिये तथा जाप्यमंत्रोंकी समाप्तीके दिन अर्थात् ९ वां
दिन होम विधान पूर्वक दशांश आहूती होना चाहिये। अंतिमदिन जलयात्रा होना
चाहिये। सौभाग्यवती स्त्रीयां किसी जलाशयके पास जाकर मंत्रोंसे शुद्ध किया हुआ
जल घटोंमें भरकर गाजे बाजेके साथ लावें। घड़ोंपर टूल लिपटा हुआ नारियल रहे
साथमें सब जनता एवं जुलूसका पूरा सामान रहे। कहीं कहीं रथयात्रा भी निकालते
हैं। फूलमालकी डाक भी करते हैं। पूर्ण कलशके जलसे पुण्याहवाचन करे। विधान
के करनेवालोंमें इन्द्र इन्द्राणीकी पोषाक भिन्न प्रकारकी होनी चाहिये। इंद्र
जिस प्रकार इस विधानमें प्रारम्भसे लेकर योग देता है उसी प्रकार इंद्राणीको भी
देना चाहिये। वे तथा आचार्य आदि पाठको करनेवाले भाई बहनें विधान समाप्ति
तक पूर्ण ब्रह्मचर्यसे रहें। नियमित आहार विहार करें। गृहस्थीके कामोंसे मनको
हटाकर इसी कामको अपना मुख्य काम समझें। विधानकी समाप्तिके पश्चात्
विधानकर्ता सहधर्मी भाइयोंको आहारादिसे संतुष्ट करे, शक्ति हो तो घर घर लाडू
बटवावे, विद्यादान अभयदानमें द्रव्य प्रदान करे। सबको योग्यता माफिक सतुष्ट
करे। पश्चात् विधानकी शांति विसर्जन करे। यह विधान जबसे प्रारम्भ हो और

जबतक समाप्त न हो मंदिरजीके बाहर नौवत (बाजा) बजाना चाहिये। प्रतिदिन ही भक्तिपाठ और मंगलाष्टक पढना चाहिये। एवं भगवानका अभिषेक होना चाहिये।

विधानकी यह संक्षिप्त विधि लिख दी गई है। इस विधिके लिखनेमें कोई त्रुटि रह गई हो तो विशेषज्ञ ठीक कर लें और देश कालके अनुसार विधिपूर्वक इस सिद्धचक्र विधानको उन्नत भावोंसे करें जिससे उनको अक्षय पुण्यका संचय हो।

मु० चिरहोली
पो० आवलखेडा
(आगरा)

निवेदक
श्रीनिवास जैन शास्त्री
कलकत्ता

"श्रीसिद्धचक्र विधान" छपानेमें सहायता

देनेवालोंकी नामावलि

नाम	सहायता	रसीद नं०
सेठ जुगमंदिर लालजी सीतल प्रसादजी	३०१)	६०
सेठ वैजनाथजी सरावगीकी धर्मपत्नी	३०१)	१५
सेठ चान्दमलजी छावड़ा की धर्मपत्नी	३०१)	
सेठ वसन्तलालज मालीरामजी	१५१)	६२
श्र महावीर प्रसादजी (सेढमलजी दयाचन्दजी) की धर्मपत्नी	११०)	२२
सेठ तेजमल छाव .। कोचर वासीकी धर्मपत्नी	१०१)	१

नाम	सहायता	रसीद नं०
सेठ शिवदेवजी (वलदेवदासजी शिवदेवजी) की धर्मपत्नी	१०१	५६
सेठ छोगमलजी फूलचन्दजी	७५)	
सेठ रामेश्वरजी सरावगीकी धर्मपत्नी	५१)	३८
सेठ जमनाधरजी सरावगीकी धर्मपत्नी	५१)	३१
सेठ वद्र दासजी सरावगी	५१)	२
सेठ चिरंजीलालजी सरावगी की माताजी	५१)	३
श्री देवेन्द्रकुमारजी सरावगी	२५)	४

नाम	सहायता	रसीद नं०
श्री हरनारायणजी सरावगी	२५)	५
श्री सरस्वती बाई	२५)	६
श्री फूलचन्दजी पाटणी	२१)	७
श्री प्यारेलालजी जैन	११)	८
श्री केसरीमलजी छाबड़ा	२१)	९
श्री रामेश्वरलालजी श्रीलालजी समस्तीपुर	११)	१०
श्री सुगुनचन्द गोधा	२१)	११
श्री बसन्तीलालजी सरावगी	५)	१२
श्री रतनलालजी कासलीवाल	.१	१३
श्री हरकचन्दजी छाबड़ा	२१)	१६
श्री मनोहरलालजी कानोड़ियाकी धर्मपत्नी	२५)	१७
श्री नरेन्द्र चन्दजी जैन	५)	१८

नाम	सहायता	रसीद नं०
श्री मदनलालकी माता	२)	१९
श्री भावरमलजी कटिहार	२१)	२०.
श्री ताराचन्द रामपालजी बड़जात्या, अजमेर	११)	१६
श्री तखतमलजीकी बहू (मा० श्रीरामकुन्दनमलजी)	११)	२३
श्री कालीचरणजीकी माता (मारफत श्रीराम कुन्दनमल)	२५)	२४
श्री गजमलजी भाभरी (मु: सांता जयपुर)	१५)	२५
श्री निमलालजी अजमेरा जयपुर	११)	२६
श्री ईश्वरदेवी जैन, पटना	२१)	.७
श्री लालचन्दजी सरावगी	५१)	२८

नाम	सहायता	रसीद नं०
श्री फूलचन्दजीकी माताजी	११)	२६
श्री ज्वालादत्त पुरुषोत्तम दासजी	११)	३०
श्री विश्वेश्वरलालजी सरावगी	२५)	३१
श्री वासुदेवजी सरावगी विसाऊ	२५)	३२
श्री रुघमानन्दजी सरावगी	५१)	३३
श्री श्रीलालजी चिरंजीलालजी सरावगी	५१)	३४
श्री सामलालजी सरावगी	४)	३६
श्री गोपीराम लादूरामजी सरा०	५१)	५४
श्री वंशीधरजी सरावगीकी धर्मपत्नी	५१)	५५
श्री भंवरीलालजी वाफलीवाल	११)	४२
श्री रामनारायणजी पांडे	२१)	३७

नाम	सहायता	रसीद नं०
श्री पन्नालालजी पांड्या	५१)	४३
श्री जौहरीलालजी कन्हैयालालजी	५१)	४१
श्री भीमसैन रामचन्द		
श्री प्रेमसुखजी जैसवाल	५)	५७
श्री जीतमलजी पांड्या मु० उह	५)	३९
श्री लादूरामजी सरावगी	२१)	४०
लोलचन्दजी कासलीवाल	५)	४४
अमरचन्द पन्नालालजी	५१)	५०
मेघराजजी हीरालालजी	५१)	५१
मदनलालजी गंगवाल	११)	६३
भंवरलालजी कासलीवाल	३१)	४६
जीतमलजी कासलीवालकी धर्मपत्नी	११)	६४

नाम	सहायता
रंगा रामजी सरावगी	५१)
प्रल्हादरायजी सरावगी	५१)
केसरीचन्दजी	५१)
केसरीचन्दजी हेमचन्दजी	५१)
फतेह चन्दजीकी धर्मपत्नियां	५१)
छोगमलजी फूलचन्दजी	७५)
मोहनलाल छाबड़ा	६३)
कुचामन निवासीकी धर्मपत्नी	
दीनानाथजी सरावगी	५१)
कालूराम लक्ष्मीनारायणजी	३१)
घासीलालजी छोगालालजी	२१)
राम नारायणजीकी मा	२१)
दीपराजजी गोगराजजी	२१)
गुप्तदान	५)

नाम	सहायता
गोगराज सरावगी	२१)
जयचन्दलालजी	११)
हुरखचन्दजी सेठी	११)
कन्हैयालालजी सरावगी	११)
रामकृष्णजीकी माता	७)
मोतीलालजी की माता	५)
अतमराम बोबू	५)
मंगल चन्दजी	५)
माणिकचन्दजी	५)
लाडो बाई	५)
हीरालालजीकी माता	५)
रामेश्वरजीकी धर्मपत्नी	५)
नागरमलजीकी माता	५)
आत्माराम जीकी माता	३)
पं० रूपचरणजी जैन (बी० आर० सी०)	३१)
बजरंगलाल (चंडीप्रसाद रामनिवास)	११)

॥ ॐ ॥

ॐ नमः सिद्धेभ्यः

कविवर पं० सन्तलालजी कृत

श्रीसिद्धचक्रविधान ।

मङ्गलाचरण ।

दोहा ।

जिनाधीश शिवईश नमि, सहसगुणित विस्तार ।
सिद्धचक्र पूजा रचौं, शुद्ध त्रियोग संभार ॥ १ ॥

शीलाश्रित धनपति सुधी, शीलादिक गुन खान ।
जिनपद अम्बुज भ्रमर मन, सो प्रशस्त यजमान ॥२॥
देश काल विधि निपुणमति, निर्मल भाव उदार ।
मधुरवैन नयना सुघर, सो याजक निरधार ॥३॥
रत्नत्रयमंडित महा, विषय कषाय न लेश ।
संशय हरण सुहित करन, करत सुगुरु उपदेश ॥४॥

छप्पय छन्द ।

निर्मल मंडप भूमि दरव-मंगल करि सोहत ।
सुरभ सरस शुभ पुष्प-जाल मंडित मन मोहत ॥
यथायोग्य सुन्दर मनोग्य, चित्राम अनूपा ।
दीरघ मोल सुडोल, वसन झखझोल सरूपा ॥
हो वित्तसार प्रासुक दरव, सरव अंग मनको हरे ।
सो महाभाग आनंद सहित, जो जिनेन्द्र अर्चा करे ॥५॥

स्थापना ।

दोहा ।

सुर मुनि मन आनन्द कर, ज्ञान सुधारस धार ।
सिद्धचक्र सो थापहूं, विधि-दव-जल उनहार ॥६॥

अडिल्ल ।

अर्हं शब्द प्रसिद्ध अर्द्ध मात्रिक कहा,
अकारादि स्वर मंडित अति शोभा लहा ।
अति पवित्र अष्टांग अर्घ करि लायके,
पूर्व दिशी पूजों अष्टांग नमायके ॥ ७ ॥

ॐ ह्रीं अ आ इ ई उ ऊ ऋ ॠ ऌ ॡ ए ऐ ओ औ अं अः पूर्वदिशि अनाहतपराक्रमाय सिद्धाधिपतये नमः, पूर्वदिशि अर्घ निर्वपामि स्वाहा ।

सोरठा ।

वर्ण कवर्ग महान, अष्ट पूर्वविधि अर्घ ले ।
भक्ति भाव उर ठान, पूजों हो आग्नेय दिश ॥ ८ ॥

ॐ ह्रीं अर्हं क ख ग घ ङ अनाहतपराक्रमाय सिद्धाधिपतये अग्निदिशि अर्घं नि० स्वाहा ।

वर्ण चवर्ग प्रसिद्ध, वसुविधि अर्घ उतारिके ।
मिलि है वसुविधि रिद्धि, दक्षिण दिश पूजा करों ॥९॥

ॐ ह्रीं अर्हं च छ ज झ ञ अनाहतपराक्रमाय सिद्धाधिपतये दक्षिणदिशि अर्घं० ।

वर्ण टवर्ग प्रशस्त, जलफलादि शुभ अर्घ ले ।
पाऊँ सब विधि स्वस्ति, नैऋत्य दिशि अर्चा करों ॥१०॥

ॐ ह्रीं अर्हं ट ठ ड ढ ण अनाहतपराक्रमाय सिद्धाधिपतये नैऋत्यदिशि अर्घं० ।

वर्ण तवर्ग मनोग, यथायोग्य कर अर्घ धरि ।
मिलि है सब शुभ योग, पूजन करि पश्चिम दिशा ॥११॥

ॐ ह्रीं अर्हं त थ द ध न अनाहतपराक्रमाय सिद्धाधिपतये पश्चिमदिशि अर्घं० ।

वर्ण पवर्ग सुभाग, करूँ आरती अर्घ ले ।
सब विधि आरति त्याग, वायव दिशि पूजा करों ॥१२॥

ॐ ह्रीं अर्हं प फ ब भ म अनाहतपराक्रमाय सिद्धाधिपतये वायव्यदिशि अर्घं० ।

वर्ण यवर्गी सार, दर्व अर्घ वसु द्रव्य करि।
भाव अर्घ उर धार, उत्तर दिशि पूजा करों ॥१३॥

ओं ह्रीं अर्हं य र ल व अनाहतपराक्रमाय सिद्धाधिपतये उत्तरदिशि अर्घं०।

शेष वर्ण चउ अन्त, उत्तम अर्घ बनाइकें।
नशे कर्म वसु भंत, पूजों हो ईशान दिशि ॥१४॥

ओं ह्रीं अर्हं श ष स ह अनाहतपराक्रमाय सिद्धाधिपतये ईशानदिशि अर्घं०।

छप्पय छन्द।

ऊरध अधो सुरेफ सु बिंदु हंकार विराजे,
अकारादि स्वर लिप्त कर्णिका अन्त सु छाजे।
वर्गन पूरित वसुदल अम्बुज तत्त्व संधि धर,
अग्रभागमें मंत्र अनाहत सोहत अतिवर॥
फुनि अति ही बेढ्यो परम, स्वर ध्यावत अरि नागकों।
ह्वै केहरि सम पूजन निमित, सिद्धचक्र मंगल करों ॥१५॥

ओं ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धपरमेष्ठिभ्यो नमः अत्रावतरावतर संवौषट् आह्वाननं।

अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्, सन्निधिकरणं परिपुष्पांजलिं क्षिपेत्।

दोहा

सूक्ष्मादिक गुणसहित हैं, कर्मरहित निःरोग।
सकल सिद्ध पूजों सदा, मिटै उपद्रव योग॥

इति यंत्रस्थापनार्थं पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

अथाष्टकं।

चाल-नन्दीश्वर द्वीपपूजाकी।

शीतल शुभ सुरभि सु नीर, कंचन कुम्भ भरों।
पाऊं भवसागर तीर, आनन्द भेंट धरों॥
अन्तरिगति अष्ट स्वरूप, गुणमई राजत हैं।
नमूं सिद्धचक्र शिव-भूप, अचल विराजत हैं॥ १॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धपरमेष्ठिभ्यो नमः श्रीसमत्त गाण दंमणवीरज सुहमत्तहेव अवग्गहणं अगुरुलघुमव्वावाहं अष्टगुणसंयुक्ताय जलं निर्वपामीति स्वाहा ॥१॥

चन्दन तुम वंदन हेत उत्तम मान्य गिना ।
नातर सब काष्ठ समेत, ईंधन ही थपना ॥
अन्तरिगति अष्ट स्वरूप, गुणमई राजत हैं ।
नमूं सिद्धचक्र शिव-भूप, अचल विराजत हैं ॥ २ ॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धपरमेष्ठिभ्यो नमः श्रीसमत्तणाणदंसणवीरज सुहमत्तहेव अवग्गहणं अगुरु लघु अव्वावाहं अष्टगुणसंयुक्ताय चन्दनम् ॥ २ ॥

दीरघ शशि किरण समान, अक्षत ल्यावत हूं ।
शशिमंडल सम वहुमान, पूज रचावत हूं ॥
अन्तरिगति अष्ट स्वरूप, गुणमई राजत हैं ।
नमूं सिद्धचक्र शिव-भूप, अचल विराजत हैं ॥ ३ ॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धपरमेष्ठिभ्यो नमः श्रीसमत्तणाणदंसणवीरज सुहमत्तहेव अवग्गहणं अगुरुलघुमव्वावाहं अष्टगुणसंयुक्ताय अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा ॥३॥

तुम चरणचंद्रके पास, पुष्प धरे सोहैं ।
मानू नक्षत्रनकी रास, सोहत मन मोहैं॥
अन्तरिगति अष्ट स्वरूप, गुणमई राजत हैं ।
नमूं सिद्धचक्र शिव-भूप, अचल विराजत हैं ॥ ४ ॥

ॐ ह्रीं णमोसिद्धाणं०, पुष्पं ॥ ४ ॥

उत्तम नेवज बहु भांति, सरस सुधा साने ।
अहिमिन्द्रन मन ललचाय, भक्षण उमगाने ॥
अन्तरिगति अष्ट स्वरूप, गुणमई राजत हैं।
नमूं सिद्धचक्र शिव-भूप, अचल विराजत हैं ॥५॥

ओं ह्रीं ० नैवेद्यं ॥५॥

फैली दीपनकी जोति, अति परकाश करै ।
जिम स्यादवाद उद्योत संशय तिमिर हरै ॥
अंतरिगति अष्ट सरूप, गुणमई राजत हैं ।
नमूं सिद्धचक्र शिव-भूप, अचल विराजत हैं ॥ ६ ॥

ओं ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धपरमेष्ठिभ्यो नमः श्रीसम्मत्तणाणदंसणवीर्यसुहमत्तहेव अवग्गहणं अगुरुलघुमव्वावाहं अष्टगुणसंयुक्ताय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ॥६॥

धरि अग्नि धूपके ढेर, गंध उडावत हूं ।
कर्मोंका धूप वखेर, ठोंक जरावत हूं ॥
अन्तरिगति अष्ट स्वरूप, गुणमई राजत हैं ।
नमूं सिद्धचक्र शिव-भूप, अचल विराजत हैं ॥७॥

ओं ह्रीं० धूपं ॥ ७ ॥

जिन धर्म वृक्षकी डाल, शिवफल सोहत हैं ।
इस शुभ फल कंचन थाल, भविजन मोहत हैं ॥
अन्तरिगति अष्ट स्वरूप, गुणमई राजत हैं ।
नमूं सिद्धचक्र शिव-भूप, अचल विराजत हैं ॥ ८ ॥

ओं ह्रीं० फलं ॥ ८ ॥

करि दर्व अर्घ वसु जात, यातैं ध्यावत हूं ।
अष्टांग सुगुण विख्यात, तुम ढिंग पावत हूं ॥

अंतरिगति अष्ट सरूप, गुणमई राजत हैं ।
नमूं सिद्धचक्र शिव-भूप, अचल विराजत हैं ॥ ९ ॥

ओं ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धपरमेष्ठिभ्यो नमः श्री समत्तणाणदंसणवीर्यसुहमत्त-हेत्र अवग्गहणं अगुरुलघुमव्वाबाहं अष्टगुणसंयुक्ताय अर्घं निर्वपामि स्वाहा ।

गीता छन्द ।

निर्मल सलिल शुभवास चन्दन, धवल अक्षत युत अनी ।
शुभ पुष्प मधुकर नित रमैं, चरु प्रचुरस्वाद सुविधि घनी ॥
करि दीपमाल उजाल धूपायन, रसायन फल भले ।
करि अर्घ सिद्ध समूह पूजत, कर्म दल सब दल मले ॥ १ ॥
ते कर्मप्रर्त नशाय युगपति, ज्ञान निर्मलरूप है ।
दुख जन्म टाल अपार गुण, सूक्षम सरूप अनूप है ॥
कर्माष्ट विन त्रैलोक्य पूज्य, अछेद शिव कमलापती ।
मुनि ध्येय सेय अमेय चहुंगुण ज्ञेय, ध्यो हम शुभमती ॥ २ ॥

ओं ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये नमः सम्मत्तणाणादि अठगुणाणं अनर्घपदप्राप्तये महार्घम् ।

अथ अष्टगुण अर्घ।

चौपाई।

मिथ्या त्रय चउ आदि कषाया, मोहनाश छायक गुण पाया।
निज अनुभव प्रत्यक्ष सरूपा, नमूं सिद्ध समकित गुणभूपा ॥ १ ॥

ओं ह्रीं सम्यक्त्वाय नमः-अर्घं ॥ १ ॥

सकल त्रिधा षट् द्रव्य अनन्ता, युगपत जानत हैं भगवंता।
निर आवरण विशद स्वाधीना, ज्ञानानन्द परम रस लीना ॥२ ॥

ॐ ह्रीं अनन्तज्ञानाय नमः अर्घं ॥ २ ॥

चक्षु अचक्षु अवधि विधि नाशी, केवल दर्श जोति परकाशी।
सकल ज्ञेय युगपत अवलोका, उत्तम दर्श नमूं सिद्धोंका ॥३ ॥

ओं ह्रीं अनन्तदर्शनाय नमः अर्घं ॥ ३ ॥

अन्तराय विधि प्रकृति अपारा, जीवशक्ति घाते निरधारा।
ते सब घात अतुल बल स्वामी, लसत अखेद सिद्ध प्रणमामी ॥४ ॥

ओं ह्रीं अनन्तवीर्याय नमः अर्घं ॥ ४ ॥

रूपातीत मन इन्द्रिय नाही, मनपर्यय हू जानत नाहीं।
अलख अनूप अमित अधिकारी, नमूं सिद्ध सूक्षम गुणधारी ॥ ५॥

ओं ह्रीं सूक्ष्माय नमः अर्घं ॥ ५ ॥

एक क्षेत्र अवगाह स्वरूपा, भिन्न भिन्न राजै चिद्रूपा।
निज परघात विभाव विडारा, नमूं सुहित अवगाह अपारा॥ ६॥

ओं ह्रीं अवगाहनाय नमः अर्घं ॥ ६ ॥

परकृत ऊँच नीच पद नाहीं, रमत निरंतर निजपदमांहीं।
उत्तम अगुरुलघू गुण भोगी, सिद्धचक्र ध्यावै नितयोगी ॥ ७।

ओं ह्रीं अगुरुलघुत्वात्मकजिनाय नमः अर्घं ॥ ७ ॥

नित्य निरामय भवभयभंजन, अचल निरंतर शुद्ध निरंजन।
अव्याबाध सोई गुण जानो, सिद्धचक्र पूजन मन मानो ॥ ८ ॥

ओं ह्रीं अव्याबाधाय नमः ॥ ८ ॥

यहां १०८ बार "ओं ह्रीं अर्हं असिआउसा नमः" मंत्रका जप करै

अथ जयमाला।

दोहा

जग आरत भारत महा, गारत करि जय पाय।
विजय आरती तिन कहूं, पुरुषारथ गुण गाय ॥१॥

पद्धरी छन्द

जय करण कृपाण सुप्रथमवार, मिथ्यात सुभट कीनो प्रहार।
दृढ़ कोट विपर्यय मति उलँघि, पायो सम्मकित थलथिर अभङ्ग।१।
स्वै पर विवेक अंतर पुनीत, स्वै रुचि वरतायो राजनीत।
जग विभव विभाव असार एह, स्वातम सुखरस विपरीत देह ॥२॥
तिन नाशन लीनो दृढ संभार, शुद्धोपयोग चित चरण सार।
निर्ग्रंथ कठिन मारग अनूप, हिंसादिक टारण सुलभ रूप।३।
द्वयवोस परीसह सहन वीर, बहिरंतर संयम धरण धीर।
द्वादश भावन दश भेद धर्म, विधि नाशन बारह तपसु पर्म ॥ ४ ॥

शुभ दयाहेत धरि समिति सार, मन शुद्धकरण त्रिय गुप्ति धार।
एकाकी निर्भय निर सहाय, विचरो प्रमत्त नाशन उपाय ॥ ५ ॥
लखि मोहशत्रु परचंड जोर, तिस हनन शुकल दल ध्यान जोर।
आनन्द वीररस हिये छाय, क्षायक श्रेणी आरम्भ थाय ॥ ६ ॥
बारम गुण थानक ताहि नाश, तेरम पायो निजपद प्रकाश।
नव केवललब्धि विराजमान, दैदीप्यमान सोहे सुभान ॥ ७ ॥
तिस मोह दुष्ट आज्ञा एकांत, थी कुमति स्वरूप अनेक भांति।
जिनवाणी करि ताको विहंड, करि स्याद्वाद आज्ञा प्रचंड ॥ ८ ॥
बरतायो जगमें सुमति रूप, भविजन पायो आनन्द अनूप।
थे मोह नृपति दुखकरण शेष, चारों अघातिया विधि विशेष ॥ ९ ॥
है नृपति सनातन रीति एह, अरि विमुख न राखे नाम तेह।
यों तिन नाशन उद्यम सु ठानि, आरंभ्यो परम शुकल सु ध्यान ॥ १० ॥
तिस बलकरि तिनकी थिति विनाश, पायो निर्भय सुखनिधि निवास।

यह अक्षय जीति लई अबाधि, पुनि अंश न व्यापो शत्रु बाध ।११।
शास्वत स्वाश्रित सुखश्रेय स्वामि, है शांति संत तुम कर प्रणाम ।
अंतिम पुरुषारथ फल विशाल, तुम बिलसौ सुखसौं अमित काल।१२।
ओं ह्रीं सम्मत्तणाणादि अट्ठगुणसंजुत्तसिद्धेभ्यो महार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।१२॥

घत्ता ।

परसमय विदूरित पूरित स्वैसुख समयसार चेतनरूपा ।
नानाप्रकार विकार हुतै सब टार लसै सब गुण भूषा ॥
ते निरावर्ण निर्देह निरूपम सिद्धचक्र परसिद्ध जजूं ।
सुर मुनि नित ध्यावैं आनन्द पावैं, मैं पूजत भवभार तजूं ॥

इत्याद्याशीर्वादः ।

॥ इति प्रथम पूजा सम्पूर्णम् ॥

अथ द्वितीय पूजा ।

छप्पय छन्द ।

ऊरध अधो सरेफ बिंदु हंकार बिराजे,
अकारादि स्वरलित कर्णिका अन्तसु छाजे ।
वर्गनिपूरित वसुदल अम्बुज तत्त्व संधिधर,
अग्रभागमें मंत्र अनाहत सोहत अतिवर ॥
फुनि अन्त ही वेढ्यो परम सुर, ध्यावत ही अरिनागको ।
है केहरिसम पूजन निमित, सिद्धचक्र मंगल करो ॥ १ ॥

ओं ह्रीं णमोसिद्धाणं श्रीसिद्धपरमेष्ठिभ्यो नमः षोडशगुणसंयुक्तसिद्ध परमेष्ठिन् अतरावतरावतर संवौषट् आह्वाननं । अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं । अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं ।

दोहा ।

सूक्ष्मादि गुण सहित है, कर्म रहित निररोग ।
सिद्धचक्र सो थापहूं, मिटै उपद्रव जोग ॥ २ ॥

अथाष्टकं ।

गीता छन्द ।

हिमशैल धवल महान कठिन पाषाण तुम जस रासतें,
शरमाय अरु सकुचाय द्रव ह्वै वही गंगा तासतैं ।
सम्बन्ध योग चितार चित भेटार्थ झारीमें भरूं,
षोडश गुणान्वित सिद्धचक्र चितार उर पूजा करूं ॥

ओं ह्रीं णमोसिद्धाणं श्रीसिद्धपरमेष्ठिभ्यो नमः श्रीसम्मत्तणाणदंसणवीर्यसुहमत्तहेव अवग्गहणं अगुरुलघु अव्वावाहं षोडशगुणसंयुक्ताय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

काश्मीर चंदन आदि अन्तर बाह्य बहुविधि तप हरे,
यह कार्य कारण लखि नमित मम भाव हू उद्यम करे ।
मै हूं दुखी भवतापसे घसि मलय चरनन ढिंग धरूं,
षोडश गुणान्वित सिद्धचक्र चितार उर पूजा करूं ॥

ओं ह्रीं णमोसिद्धाणं श्रीसिद्धपरमेष्ठिभ्यो नमः श्रीसमत्तणाण दंसणवीर्य सुहमत्तहेय अवग्गहणं अगुरुलघुमव्वावाहं सोलहगुणसंयुक्ताय चन्दनं।

सौरभ चमक जिस सह न सकि अम्बुज वसै सरतालमें,
शशि गगन बसि नित होत कृश अहिनिश भ्रमै इस ख्यालमें।
सो अक्षतौघ अखण्ड अनुपम पुंज धरि सन्मुख धरूं,
षोडश गुणान्वित सिद्धचक्र चितार उर पूजा करूं॥ अक्षतं॥
जग प्रगट काम सुभट विकट कर हट करत जिय घट जगा,
तुम शील कटक सुघट निकट सरचाप पटक सुभट भगा।
इम पुष्पराशि सुवास तुम ढिंग कर सुयश बहु उच्चरूं,
षोडश गुणान्वित सिद्धचक्र चितार उर पूजा करूं॥पुष्पं॥४॥
जीवन सतावत नाहिं अघावत क्षुधा डाइनसी बनी।
सो तुम हनी तुम ढिंग न आवत जान यह विधि हम ठनी॥

नैवद्यके संकेत करि निज क्षुधानाशन विधि वरूं,
षोडश गुणान्वित सिद्धचक्र चितार उर पूजा करूं ॥नैवेद्यं॥५॥
मैं मोह अन्ध अशक्त अरु यह विषम भववन है महा,
ऐसे रुलेको ज्ञानदुति विन पार निवरन हो कहा।
सो ज्ञान चक्षु उघार स्वामी दीप ले पाइन परूं,
षोडश गुणान्वित सिद्धचक्र चितार उर पूजा करूं ॥दीप॥६॥
प्रासुक सुगंधित द्रव्य सुन्दर दिव्य घ्राण सुहावनो,
धरि अग्नि दश दिश वास पूरित ललित धूम्र सुहावनो।
तुम भक्तिभाव उमंग करत प्रसंग धूप सु विस्तरूं,
षोडश गुणान्वित सिद्धचक्र चितार उर पूजा करूं ॥धूपं॥७॥
चित हरन अचित सुरंग रसपूरित विविध फल सोहने,
रसना लुभावन कल्पतरुके सुर असुर मन मोहने।

भरि थाल कंचन भेट धरि संसार फल तृषणा हरूं,
षोडश गुणान्वित सिद्धचक्र चितार उर पूजा करूं फलं ।८।
शुभ नीर वर काश्मीर चंदन धवल अक्षत युत अनी,
वर पुष्पमाल विशाल चरु सुरमाल दीपक दुति मनी ।
वर धूप पक्व मधुर सुफल लै अर्घ अठ विधि संचरूं,
षोडश गुणान्वित सिद्धचक्र चितार उर पूजा करूं ॥ अर्घं।३।

गीता छन्द ।

निर्मल सलिल शुभवास चन्दन धवल अक्षत युत अनी,
शुभ पुष्प मधुकर नित रमै चरु प्रचुर स्वाद सुविधि घनी ।
करि दीपमाल उजाल धूपाइन रसायन फल भले,
करि अर्घ सिद्ध समूह पूजत कर्मदल सब दलमले ॥
ते कर्मवर्त नशाय युगपत ज्ञान निर्मलरूप है,

दुख जन्म टाल अपार गुण सूक्षम सरूप अनूप है।
कर्माष्ट विन त्रैलोक्य पूज्य अछेद्द शिव कमलापती,
मुनिध्येय सेय अमेय चहूं, गुण ज्ञेय द्यो हम शुभमती ॥
ओं ह्रीं अर्हं सिद्धचक्राधिपतये नमः संमत्तणाणादि अट्ठगुणाणं महार्घं।

अथ सोलह गुण सहित अर्घं।

त्रोटक छन्द।

दर्शन आवर्णी परकर्त हनी, अथिता अवलोक सुभावघनी।
इक साथ समान लखो सब ही, नमुं सिद्ध अनंत द्रगन अबही ॥ १॥
ओं ह्रीं अनन्तदर्शनाय नमः अर्घं।

विधि ज्ञानावर्ण विनाश कियो, निज ज्ञान स्वभाव विकाश लियो।
समयांतर सर्व विशेष जनों, नमूं ज्ञान अनंत सु सिद्ध तनों ॥ २ ॥
ओं ह्रीं अनन्तज्ञानाय नमः अर्घं।

सुख अमृत पीवत स्वेद न हो, निज भाव विराजत खेद न हो।

असमान महाबल धारत हैं, हम पूजत पाप बिडारत हैं ॥ ३ ॥
ओं ह्रीं अतुलवीर्याय नमः अर्घं ।

विपरीत सभीत पराश्रितता, अतिरिक्त धरै न करै थिरता ।
परकी अभिलाष न सेवत हैं, निज भाविक आनन्द वेवत हैं ॥ ४ ॥
ओं ह्रीं अनन्तसुखाय नमः अर्घं ।

निज आतम विकाशक बोध लह्यो, भ्रमको परवेश न लेश कह्यो ।
निजरूप सुधारस मग्न भये, हम सिद्धन शुद्ध प्रतीति नये ॥ ५ ॥
ओं ह्रीं अनन्तसम्यक्त्वाय नमः अर्घं ।

निज भाव विडार विभाव न हो, गमनादिक भेद विकार न हो ।
निजथान निरूपम नित्य बसे, नमूं सिद्ध अनाचल रूप लसे ॥ ६ ॥
ओं ह्रीं अचलाय नमः अर्घं ।

चौपाई ।

गुणपर्यय परणतिके भेद, अति सूक्षम असमान अखेद ।

ज्ञान गहे, न कहै जड बैन, नमों सिद्ध सूक्षम गुण ऐन ॥ ७ ॥

ओं ह्रीं अनन्तसूक्ष्माय नमः अर्घं ।

जन्म मरण युत धरे न काय, रोगादिक संक्लेश न पाय ।

नित्य निरंजन निर अविकार, अव्याबाध नमों सुखकार ॥८॥

ओं ह्रीं अव्याबाधाय नमः अर्घं ।

एक पुरुष अवगाह प्रजंत, राजत सिद्ध समूह अनन्त ।

एकमेक बाधा नहिं लहैं, भिन्न भिन्न निजगुणमें रहैं ॥९॥

ओं ह्रीं अवगाहनगुणाय नमः अर्घं ।

काययोग पर्यापति प्रान, अनवधि छिन्न छिन्न ही मान ।

जरा कष्ट जग प्रानी लहै, नमों सिद्ध यह दोष न सहै ॥१०॥

ओं ह्रीं अजराय नमः अर्घं ।

काल अकाल प्राणको नाश, पावै जीव मरनको त्रास ।

तासौं रहित अमर अधिकार, सिद्ध समूह नमूं सुखकार ॥११।

ओं ह्रीं अमराय नमः अर्घं।

गुण गुण प्रति है भेद अनन्त, यो अथाह गुणयुत भगवन्त।
है परमाण अगोचर तेह, अप्रमेय गुण बंदूं एह ॥ १२ ॥

ओं ह्रीं अप्रमेयाय नमः अर्घं।

भुजंगप्रयात छन्द ।

अनूकर्मतें फर्स वर्णादि जानो,
किसी एक वीशेषको किं प्रमानो ।
पराधीन आवर्ण अज्ञान त्यागी,
नमूं सिद्ध अत्येन्द्रिय ज्ञान भागी ॥१३॥

ओं ह्रीं अतीन्द्रियोत्सवाय नमः अर्घं ।

त्रिधा भेद भावित महाकष्टकारे,
रमण भावसों आकुलित जीव सारे ।
निजानन्द रमणीय शिवनार स्वामी,

नमो पुरुष आकृत सवै सिद्धनामी ॥ १४ ॥

ओं ह्रीं अवेदाय नमः ।

त्रिशेषं सकल चेतना धार माही,
भगे लै भली विधि रहो भेद नाहीं ।
तथा हीन अधिकार्यको भाव टारी,
नमो सिद्ध पूरण कला ज्ञानधारी ॥१५॥

ओं ह्रीं अभेदाय नमः अर्घं।

निजानन्दरस स्वादमैं लीन अंता,
मगन हो रहै रागवर्जित निरंता ।
कहांलों कहूं आपको पार नाहीं,
धरो आपको आप ही आपमाही ॥१६॥

ओं ह्रीं निजाधीनजिनाय नमः अर्घं ।

यहां १०८ वार जाप देना चाहिये ।

अथ जयमाला ।

दोहा—पंच परम परमातमा, रहित कर्मके फंद ।
जगत प्रपंच रहित सदा, नमों सिद्ध सुखकंद ॥

तोटक छन्द ।

दुखकारन द्वेष विडारन हो, वश डारन राग निवारन हो ।
भवितारन पूरणकारण हो, सब सिद्ध नमों सुखकारण हो ॥
समयामृतपूरित देव सही, परआकृत मूरति लेश नहीं ।
विपरीत विभाव निवारन हो, सब सिद्ध नमो सुखकारन हो ॥२॥
अखिना अभिना अछिना सुपरा, अभिदा अखिदा अविनाशवरा ।
यमजाम जरा दुखजारन हो, सब सिद्ध नमों सुखकारन हो ॥३॥
निर आश्रित स्वाश्रित वासित हो, परकाश्रित खेद विनाशित हो ।
विधि धारन हारन पारन हो, सब सिद्ध नमों सुखकारन हो ॥ ४ ॥

अमुधा अछुधा अद्विधा अविधं, अकुधा सुसुधा सुबुधा सुसिधं ।
त्रिधि आरन जारन हारन हो, सब सिद्ध नमों सुखकारन हो ॥५॥
शरनं चरनं वरनं करनं, धरनं चरनं मरनं हरनं ।
तरनं भव वारिधि तारन हो, सब सिद्ध नमों सुखकारन हो।६।
भववास परास विनाशन हो, दुखरास विनाश हुताशन हो ।
निज दासन त्रासनिवारन हो, सब सिद्ध नमों सुखकारन हो।७।
तुम ध्यावत शाश्वत व्याधि दहै, तुम पूजत ही पद पूजि लहै ।
शरणागत संत उभारन हो, सब सिद्ध नमों सुखकारन हो। ८।

दोहा—सिद्धवर्ग गुण अगम है, शेष न पावैं पार ।
हम किह विधि वरणन करैं, भक्ति भाव उर धार ॥ ९॥

ओं ह्रीं अनन्तदर्शनज्ञानादिषोडशगुणयुक्तसिद्धेभ्यो महार्घं ।

इति द्वितीय पूजा सम्पूर्णम् ।

अथ तृतीय पूजा बत्तीस गुणसहित ।

छप्पय छन्द ।

ऊरध अधो सुरेफ सु बिंदु हकारं बिराजै
अकारादि स्वर लिप्तकर्णिका अंत सु छाजै ।
वर्गन पूरित वसुदल अम्बुजतत्व संधिधर,
अग्रभागमें मंत्र अनाहत सोहत अतिवर ॥
फुनि अति ह्री वेढ्यो परम, स्वर ध्यावत अरि नागको ।
केहरि सम पूजन निमित्त, सिद्धचक्र मंगल करो ॥१॥

ओं ह्रीं णमो सिद्धाणं श्री सिद्धपरमेष्ठिन बत्तीसगुणसहित बिराजमान अत्रावतरावतर संवौषट् आह्वाननं, अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं ।

दोहा ।

सूक्ष्मादि गुण सहित है, कर्म रहित निररोग ।

सकल सिद्ध सो थापहूं, मिटै उपद्रव योग ॥

इति यंत्रस्थापनं ।

अथाष्टकं ।

'प्रभु पूजो रे भाई' इस चालमें ।

तुम पूजोरे भाई, सिद्धचक्र बत्तीसगुण, तुम पूजोरे भाई ।
भवत्रासित आकुलित रहै, भवि कठिन मिटन दुखताई ॥
विमल चरण तुम सलिल धार दे, पायो सहज उपाई ।
तुम पूजोरे भाई ॥ सिद्धचक्र बत्तीसगुण, प्रभु तुम० ॥

ओं ह्रीं णमोसिद्धाणं श्री सिद्धपरमेष्ठिने श्री समत्तणाणदंसणवीर्य सुहमत्तवेव अवग्गाहणं अगुरुलघुमव्वावाहं वत्तीसगुणसंयुक्ताय जन्मजरारोगविनाशनाय जलं।१।

जगवंदन परसत पदचन्दन, महाभाग उपजाई ।
हरिहर आदि लोकवर उत्तम, कर धर शीश चढाई ॥
तुम पूजोरे भाई ॥ सिद्धचक्र बत्तीस गुण, तुम० ।

ओं ह्रीं नमो सिद्धाणं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने श्री समत्त णाण दंसण वीर्य सुहमत्तहेय अवग्गहणं अवगुरुलघुमव्वावाहं वत्तीसगुणसंयुक्ताय संसारतापविनाशनाय चन्दनं० ।२।

शिवनायक पूजन लाइक है, यह महिमा अधिकाई ।
अक्षयपद दायक अक्षत यह, सांचो नाम धराई ॥
तुम पूजोरे भाई ॥ सिद्धचक्र वत्तीस गुण, तुम० ।

ओं ह्रीं नमो सिद्धाणं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने श्रीसमत्तणाण दंसण वीर्य सुहमत्तहेव अवग्गहणं अगुरुलघुमव्वावाहं वत्तीसगुणसंयुक्ताय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं ॥ ३ ॥

कामदाह अति ही दुखदायक, मम उरसे न टराई ।
ताहि निवारण पुष्प भेट धरि, मांगू वर शिवराई ॥
तुम पूजोरे भाई ॥ सिद्धचक्र वत्तीस गुण, तुम० ॥

ओं ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने समत्तणाणदंसण वीर्य सुहमत्तहेव

---

१ । आप आप कर पुष्पचाप धर मम उर शरण उपाई ।
यह निश्चय करि, पुष्प भेंट धरि मॉगू वर शिवराई ॥ एसा पाठ "क" प्रतिमें है ।

अवग्गहणं अगुरुलघु अव्वाबाहं बत्तीसगुणसंयुक्ताय कामबाणविनाशनाय पुष्पं ॥४॥

चरुवर प्रचुर क्षुधा नहीं मेटत पूर परौ इन ताई ।
भेंट करत तुम इनहूं न भेटूं, रहूं चिरकाल अघाई ॥
तुम पूजोरे भाई ॥ सिद्धचक्र बत्तीस गुण, तुम० ॥

ओं ह्रीं नमो सिद्धाणं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने श्री समत्तणाणदंसण वीर्य सुहमत्तहेव अवग्गहणं अगुरुलघुमव्वाबाहं बत्तीसगुणसंयुक्ताय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं ॥ ५ ॥

दिव्य रतन इस देश कालमें, कहै कौन है नाई ।
तुम पदभेटे दीप प्रगट यह, चिंतामणि पद पाई ॥
तुम पूजोरे भाई ॥ सिद्धचक्र बत्तीस गुण, तुम० ॥

ओं ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने श्रीसमत्तणाणदंसण वीर्यसुहमत्तहेव अवग्गहणं अगुरुलघु अव्वाबाहं बत्तीसगुणसंयुक्ताय मोहांधकारविनाशनाय दीपं ॥ ६ ॥

धूप हुताशन वासनमें धर, दसदिश वास वसाई ।
तुम पद पूजत या विधि वसु विधि, इंधन जर हो छाई ॥

तुम पूजोरे भाई ॥ सिद्धचक्र बत्तीस गुण, तुम० ॥

ओं ह्रीं नमोसिद्धाणं श्री सिद्धपरमेष्ठिने श्री समत्तणाणदंसणवीर्यसुहमत्तहेव अवग्गहणं अगुरुलघुमव्वाबाहं बत्तीसगुणसंयुक्ताय अष्टकर्मदहनाय धूपं ॥ ७ ॥

सर्वोत्तम फल द्रव्य ठान मन, पूजूं हूं तुम पाई ।
जासौं जजैं मुक्तिपद पइये सर्वोत्तम फलदाई ॥
तुम पूजोरे भाई ॥ सिद्धचक्र बत्तीस गुण, तुम० ॥

ओं ह्रीं नमो सिद्धाणं श्री सिद्धपरमेष्ठिने श्री सम्मत्तणाणदंसण वीर्यसुहमत्तहेव अवग्गहणं अगुरुलघुमव्वाबाहं बत्तीसगुणसंयुक्ताय मोक्षफलप्राप्तये फलं ॥ ८ ॥

वसुविधि अर्घ देऊं तुम मम द्यौ, वसुविधि गुण सुखदाई ।
जासु पाय वसु त्रास न पाऊं, सन्त कहे हर्षाई ॥
तुम पूजोरे भाई ॥ सिद्धचक्र बत्तीस गुण, तुम० ॥

ओं ह्रीं नमोसिद्धाणं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने श्रीसमत्तणाणदंसण वीर्य सुहमत्तहेव अवग्गहणं अगुरुलघुमव्वाबाहं बत्तीसगुणसंयुक्ताय सर्वसुखप्राप्तये अर्घं ॥ ९ ॥

गीता छन्द ।

निर्मल सलिल शुभ वास चन्दन धवल अक्षत युत अनी,
शुभ पुष्प मधुकर नित रमें चरु प्रचुर स्वाद सुविधि घनी ।
वर दीपमाल उजाल धूपाइन रसायन फल भले,
करि अर्घ सिद्ध समूह पूजत, कर्मदल सब दलमले ॥
ते कर्मवर्त नसाय युगपत्त, ज्ञान निर्मल रूप है,
दुख जन्म टाल अपार गुण, सूक्षम स्वरूप अनूप है ।
कर्माष्ट बिन त्रैलोक्य पूज्य, अछेद शिव कमलापती,
मुनि ध्येय सेय अमेय चाहूं, ज्ञेय द्यो हम शुभमती ॥

ओं ह्रीं अर्हं सिद्धचक्राधिपतये नमः संमत्तणाणादि अष्टगुणाणं महार्घं ।

(नामावलि प्रत्येक अर्घ) अथ बत्तीस गुण सहित अर्घ।

पद्धडी छन्द ।

चेतन विभाव पुद्गल विकार, है शुद्ध बुद्ध तिसनि मत टार ।
द्रगबोध सुरूप सुभाव एह, नमूं साध चेतना सिद्ध देह ॥ १ ॥

ओं ह्रीं शुद्धचेतनाय नमः अर्घ ॥ १ ॥

मति आदि भेद विविछेद कीन, छायक विशुद्ध निज भाव लीन ।
निरपेक्ष निरन्तर निर्विकार, नमूं शुद्ध ज्ञानमय सिद्ध सार ॥ २ ॥

ओं ह्रीं शुद्धज्ञानाय नमः अर्घ ।

सर्वांग चेतना व्यासरूप, तुम हो चेतन व्यापक सरूप ।
परलेश न निज परदेश मांहि, नमूं शुद्ध सिद्ध चिद्रूप ताहि ॥ ३ ॥

ओं ह्रीं शुद्धचिद्रूपाय नमः अर्घ ।

अन्तर विधि उदय विपाकटार, तुम जातिभेद वाहिज विडार ।
निज परिणतिमें नहीं लेश शेष, नमूं शुद्धरूप गुणगण विशेष ॥४॥

ओं ह्रीं शुद्धसरूपाय नमः अर्घ ।

रागादिक परिणतिका विध्वंश, आकुलित भाव राखो न अंश।
पायो निज शुद्ध सरूप भाव, नमूं सिद्धवर्ग धर हिये चाव ॥ ५ ॥
ओं ह्रीं परम शुद्धसरूपभावाय नमः अर्घं।

दोहा—तिहूं कालमें ना डिगे, रहैं निजानन्द थान।
नमूं शुद्ध दृढ़ गुण सहित, सिद्धराज भगवान ॥ ६ ॥
ओं ह्रीं शुद्धदृढ़ाय नमः अर्घं।

निज आवर्तकमें वसे, नित ज्यों जलधि कलोल।
नमूं शुद्ध आवर्तको, करि निज हिये अडोल ॥ ७ ॥
ॐ ह्रीं शुद्धआवर्तकाय नमः अर्घं।

परकृत कर उपज्यो नहीं, ज्ञानादिक निज भाव।
नमो सिद्ध निज अमलपद, पायो सहज सुभाव ॥ ८ ॥
ओं ह्रीं शुद्धस्वयंभवे नमः अर्घं।

पद्धड़ी छन्द।

स्वैसिद्ध अनन्त चतुष्ट पाय, स्वैशुद्ध चेतना पुंजकाय।

स्वैशुद्ध सवै पायो संयोग, तुम सिद्धराज स्वैशुद्ध जोग ॥ ९ ॥

ॐ ह्रीं शुद्धयोगाय नमः अर्घं ।

एकेन्द्रिय आदिक जातभेद, हीनाधिक नाम प्रकृति छेद ।
संपूरण लब्धि विशुद्ध जात, हम पूजै हैं पद जोर हाथ ॥ १०॥

ओं ह्रीं शुद्धजाताय नमः अर्घं ।

दोहा—महातेज आनन्दघन, महातेज परताप ।
नमों सिद्ध निजगुण सहित, दीपै अनूपम आप ॥ ११ ॥

ओं ह्रीं शुद्धतपसे नमः स्वाहा ।

पद्धड़ी छन्द ।

वर्णादिकको अधिकार नाहिं, संस्थान आदि आकार नाहिं ।
अति तेजपिंडचेतन अखण्ड, नमूं शुद्ध मूर्तिक कर्म खण्ड ॥१२॥

ओं ह्रीं शुद्धमूर्तये नमः अर्घं ।

वाहिज पदार्थको इष्ट मान, नहिं रमत ममत तासों जु ठान ।
निज अनुभवरसमें सदा लीन, तुम शुद्ध सुखी हम नमन कीन।१३

ॐ ह्रीं शुद्धसुखाय नमः अर्घं।

दोहा—धर्म अर्थ अरु काम बिन, अन्तिम पौरुष साध।
भये शुद्ध पुरुषारथी, नमूं सिद्ध निरबाध ॥ १४ ॥

ओं ह्रीं शुद्धपौरुषाय नमः अर्घं।

पद्धड़ी छन्द।

पुद्‌गल निरमापित वर्ण युक्त, विधि नाम रचित तासों विमुक्त।
पुरुषांकित चेतनमयी प्रदेश, ते शुद्ध शरीर नमूं हमेश ॥ १५ ॥

ओं ह्रीं शुद्धशरीराय नमः अर्घं।

दोहा—पूरण केवल ज्ञान गम, तुम स्वरूप निर्बाध।
और ज्ञान जाने नहीं, नमों सिद्ध तज आध ॥ १६ ॥

ओं ह्रीं शुद्धप्रमेयाय नमः अर्घं।

दरशन ज्ञान सुभेद है, चेतन लक्षण योग।
पूरण भई विशुद्धता, नमों शुद्ध उपयोग ॥ १७ ॥

ॐ ह्रीं शुद्धोपयोगाय नमः अर्घं।

पद्धड़ी छन्द ।

परद्रव्य जनित भोगोपभोग, ते खेदरूप प्रत्यक्ष योग ।
निजरस स्वेदन है भोग सार, सो भोगो तुम हम नमस्कार ॥१८॥

ॐ ह्रीं शुद्धभोगाय नमः अर्घं ।

दोहा—निर्ममत्व युगपद लखो, तुम सब लोकालोक ।
शुद्ध ज्ञान तुमकों लखो, नमों शुद्ध अवलोक ॥ १९ ॥

ॐ ह्रीं शुद्धावलोकाय नमः अर्घं ।

पद्धड़ी छन्द ।

निरइच्छुक मन वेदी महान, प्रज्वलित अग्नि है शुक्लध्यान ।
निर्भेद अर्घ दे मुनि महान, तुम ही पूजत अर्हंत जान ॥ २० ॥

ओं ह्रीं अर्हं प्रज्वलितशुक्लध्यानाग्निजिनाय नमः अर्घं ।

दोहा—आदि अन्त वर्जित महा, शुद्ध द्रव्यकी जात ।
स्वयं सिद्ध परमात्मा, प्रणमूं सिद्ध निपात ॥ २१ ॥

ओं ह्रीं शुद्धनिपाताय नमः अर्घं ।

लोकालोक अनन्तवें, भाग वसो तुम आन ।
ये तुमसों अति भिन्न है, शुद्ध गर्भ यह जान ॥ २२ ॥

ओं ह्रीं शुद्धगर्भाय नमः अर्घं ।

लोकशिखर शुभ थान है, तथा निजातम वास ।
शुद्ध वास परमात्मा, नमों सुगुणकी रास ॥ २३ ॥

ओं ह्रीं शुद्धवासाय नमः अर्घं ।

अति विशुद्ध निज धर्ममें, वसत नशत सब खेद ।
परम वास नमि सिद्धको, वासी वास अभेद ॥ २४ ॥

ओं ह्रीं विशुद्धपरमवासाय नमः अर्घं ।

बहिरंतर द्वै विधि रहित, परमातम पद पाय ।
निरविकार परमातमा, नमूं नमूं सुखदाय ॥ २५ ॥

ओं ह्रीं शुद्धपरमात्मने नमः अर्घं

हीन अधिक इक देशको, विकल विभाव उछेद ।
शुद्ध अनन्त दशा लई, नमूं सिद्ध निरभेद ॥ २६ ॥

ओं ह्रीं शुद्ध अनन्ताय नमः अर्घं ।

त्रोटक छन्द ।

तुम राग विरोध विनाश कियो, निज ज्ञान सुधारस स्वाद लियो ।
तुम पूरण शांति विशुद्ध धरो, हमको इक देश विशुद्ध करो ॥२७।

ओं ह्रीं शुद्धशांताय नमः अर्घं ।

विद पंडित नाम कहावत है, विद अन्त जु अन्तहि पावत है ।
निज ज्ञान प्रकाश सु अन्त लहो, कुछ अंश न जानन माहिं रहो ।२८।

ओं ह्रीं शुद्धविदंताय नमः अर्घं ।

वरणादिक भेद विडारन हो, परिणाम कषाय निवारन हो ।
मन इन्द्रिय ज्ञान न पावत ही, अति शुद्ध निरूपम ज्योति मही ।२९।

ओं ह्रीं शुद्धज्योतिजिनाय नमः अर्घं ।

जन्मादिक व्याधि न फेरि धरो, मरणादिक आपद नाहिं वरो ।
निर्वाण महान विशुद्ध अहो, जिन शासनमें परसिद्ध कहो ।३०।

ओं ह्रीं शुद्धनिर्वाणाय नमः अर्घं ।

करि अन्त न गर्भ लियो फिरकें, जनमे शिववास जनम धरके।
जिनको फिर गर्भ न हो कबहूं, शिवराज कहाय नमूं अबहूं ।३१।

ओं ह्रीं शुद्धसंदभगर्भाय नमः अर्घं ।

जगजीवन काम नशायक हो, तुम आप महा सुखनाइक हो।
तुम मंगल सूरति शांति सही, सब पाप नशै तुम पूजत ही ।३२।

ओं ह्रीं शुद्धशांताय नमः अर्घं ।

दोहा—पंचपरमपदईश हैं, पंचमगति जगदीश।
जगत प्रपंच रहित बसे नमूं सिद्ध जग ईश ॥ ३३ ॥

ओं ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये नमः महार्घं निर्वपामि स्वाहा।

यहां १०८ बार जाप देना चाहिये।

अथ जयमाला।

दोहा—परम ब्रह्म परमातमा, परम ज्योति शिवथान।
परमातम पद पाइयो, नमों सिद्ध भगवान ॥ १ ॥

छन्द—कामिनी मोहन मात्रा २०।

जय मरण कष्टको टार अमरा भये,
जय जन्म व्याधि परिहार अज़रा भये।
जय द्विविध कर्ममल जार अमला भये,
जय दुविधि टार संसार अचला भये ॥ १ ॥
जय जगत वास तज जगत स्वामी भये,
जय विनाशनाम थिर परम नामी भये,।
जय कुबुधि रूप तजि विविधि रूपा भये,
जय निषध दोष तज सुगुण भूपा भये ॥ २ ॥
कर्मरिपु नाशकर परम जय पाइए,
लोकत्रयपूरि तुम सुजस घन छाइये।
इन्द्र नागेन्द्र धर सीस तुम पद जजैं,
महा वैराग रस पाग मुनिगण भजैं ॥ ३ ॥
विघन वन दहन दौं अघन घन पौन हो,

सघन गुण रासके, बासको भोन हो ।

शिव तिय वसकरन मोहनी मंत्र हो,
काल छयकार वैतालके यंत्र हो ॥ ४ ॥

कोटि थित क्लेशको पोट शिव कर रहो,
उपलकी नकल हो अचल इक थल रहो ।

स्वप्नमें हू न निज अर्थको पावही,
जे महा खलन तुम ध्यान धरि ध्यावही ॥ ५ ॥

आपके जाप बिन पाप सब भेंटही,
पापकी तापको पाप कब मेंटही ।

संत निज दासकी आस पूरी करो,
जगतसे काढ निज चरणमें ले धरो ॥ ६ ॥

धत्ता—जय अमल अनूपम शुद्ध स्वरूपं, निखिल निरूपं धर्म धरा ।
जय विघन नशायक मंगलदायक, तिहुं जगनायक परमपरा ॥

ओं ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये नमः द्वात्रिंशतगुणयुक्तसिद्धेभ्यो नमः पूर्णार्घं नि०

अथ चतुर्थ पूजा चौसठ गुण सहित।

अथ चतु:षष्टि दलोपरि चतुर्थ पूजा उच्यते।

छप्पय छन्द।

ऊरध अधो सुरेफ सु बिंदु हंकार बिराजे,
अकारादि स्वर लिप्त कर्णिका अन्त सु छाजे।
वर्गन पूरित वसुदल अम्बुज तत्त्व संधि धर,
अग्रभागमें मंत्र अनाहत सोहत अतिवर॥
फुनि अति हो वेढ्यो परम, स्वर ध्यावत अरि नागको।
है केहरि सम पूजन निमित, सिद्धचक्र मंगल करो॥

ओं ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धपरमेष्ठिन् अत्रावतरावतर संवौषट् आह्वाननं। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं। परिपुष्पांजलिं क्षिपेत्।

दोहा।

सूक्ष्मादिक गुण सहित हैं, कर्मरहित निररोग।
सिद्धचक्र (सकल सिद्ध) सो थापहूं, मिटै उपद्रव योग ॥

इति यंत्र स्थापनं।

अथाष्टकं।

चाल लावनी

सिद्धगण पूजो हरखाई, चौंसठ गुणनामा विधिमाला,
सुमरों सुखदाई, सिद्धगण पूजोरे भाई ॥ आंचली ॥
त्रिभुवन उपमा वास लखै, तुम पद अम्बुजके माई।
निर्मल जलकी धार देहु, अवशेष करणताई, ॥सिद्ध०॥
चौसठ गुणनामाविधिमाला, सुमरो सुखदाई ॥ सिद्ध० ॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने चौसठगुणसहित श्रीसमत्तणाण दंसण वीर्य सुहमत्तहेव अवग्गहणं अगुरुलघुमव्वावाहं जन्मजरारोगविनाशनाय जलं ॥१॥

तुम पद अम्बुज वास लेन मनु, चन्दन मन माई,
निजसों गुणाधिक्य संगतिको, लहिय न हर्षाई ॥सिद्ध०॥
चौसठ गुणनामा विधिमाला, सुमरो सुखदाई ॥सिद्ध०॥

ओं ह्रीं सिद्धपरमेष्ठिने चौसठ गुणसहित श्री समत्तणाणदंसण वीर्य सुहमत्तहेव अवग्गहणं अगुरुलघुमव्वावाहं संसारतापविनाशनाय चंदनं ॥२॥

क्षीरज धान सुवासित नीरज, करसों छरलाई ।
अंगुलसे तंदुलसों पूजत, अक्षय पद पाई ॥ सि० ॥
चौसठ गुण नामाविधिमाला सुमरों सुखदाई ॥ सि० ॥

ओं ह्रीं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने चौसठ गुणसहित श्रीसमत्तणाणदंसण वीर्य सुहमत्तहेव अवग्गहणं अगुरुलघुमव्वावाहं अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं ॥३॥

धूलि सार छवि हरण विवर्जित, फूलमाल लाई ।
काम शूल निरमूल करणकों, पूजहुं तुम पाई ॥ सि० ॥
चौसठ गुणनामा विधिमाला, सुमरों सुखदाई ॥ सि० ॥

ॐ ह्रीं सिद्धपरमेष्ठिने चौसठ गुणसहित श्रीसमत्तणाणदंसण वीर्य सुहमत्तहेव अवग्गहणं अगुरुलघुमव्वावाहं कामबाणविनाशनाय पुष्पं ॥ ४ ॥

भूख गार अक्षोण रसी हू, पूरति है नाई ।
चारुमाल तुम पद पूजत हों, पूरन शिवराई ॥ सिद्ध० ॥
चौंसठ गुणनामा विधिमाला, सुमरो सुखदाई ॥ सिद्ध० ॥

ॐ ह्रीं सिद्धपरमेष्ठिने चौसठगुणसहित श्रीसमत्तणाणदंसण वीर्य सुहमत्तहेव अवग्गहणं अगुरुलघुमव्वावाहं क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं ॥ ५ ॥

दीपनिप्रति तुम पद पूजत, शिव मारग दरशाई ।
घोर अंध संसार हरणको, भली सूझ पाई ॥ सिद्ध० ॥
चौसठ गुणनामा विधिमाला, सुमरो सुखदाई ॥ सिद्ध० ॥

ओं ह्रीं श्री सिद्धपरमेष्ठिने चौसठगुण सहित श्री समत्तणाण दंसण वीर्य सुहमत्तहेव अवग्गहणं अगुरुलघुमव्वावाहं मोहांधकारविनाशनाय दीपं ॥ ६ ॥

कृष्णागरु कर्पूर पूर घट, अगनीसे प्रजलाई ।

उडै धूम यह, उडे किधों जर करमनकी छाई। सिद्धगण पूजोरे भाई।
चोसठ गुण नामा विधि माला, सुमरो सुखदाई ॥ सिद्ध० ॥

ओं ह्रीं सिद्धपरमेष्ठिने चोसठगुणसहित श्री सम्मत्तणाणदंसणवीर्य सुहमत्तहेव अवग्गहण अगुरुलघुमव्वाबाहं अष्टकर्मदहनाय धूपं ॥ ७ ॥

मधुर मनोग सुप्रासुकफलसों, पूजों शिवराई ।
यथायोग विधि फलको दे गुण, फलकी अधिकाई ॥ सि० ॥
चोसठ गुणनामा विधि माला, सुमरो सुखदाई । सिद्धगण० ॥

ओं ह्रीं श्री सिद्धपरमेष्ठिने चौसठगुणसहित श्रीसमत्तणाणदंसण वीर्य सुहमतहेव अवग्गहणं अगुरुलघुमव्वाबाहं मोक्षफलप्राप्तये फलं ॥ ८ ॥

निरघ उपावन पावन वसुविधि, अर्घ हर्ष ठाई ।
भेट धरत तुम पद पाऊँ पद, निर आकुलताई ॥ सिद्ध० ॥
चौसठ गुणनामा विधिमाला, सुमरों सुखदाई ॥ सिद्ध० ॥

ओं ह्रीं श्री सिद्धपरमेष्ठिने चौसठ गुण सहित समत्तणाण दंसण वीर्य सुहमतहेव अवग्गहणं अगुरुलघुमव्वाबाहं सर्वसुखप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ६ ॥

अथ चौसठ गुण सहित अर्घ।

चाल छन्द।

चउ घाती कर्म नशायो, अरहंत परम पद पायो।
द्वै धर्म कहो सुखकारा, नमूं सिद्ध भए अविकारा ॥ १ ॥

ओं ह्रीं अरहंत जिनसिद्धेभ्यो नमः अर्घं।

संक्लेश भाव परिहारी, भए अमलअवधि बलधारी।
सो अतिशय केवलज्ञाना, उपजाय लियो शिवथाना ॥ २ ॥

ओं ह्रीं अवधिजिनसिद्धेभ्यो नमः अर्घं।

निर्मल चारित्र समारा, परमावधि पटल उघारा।
केवल पायो तिस कारण, नमूं सिद्ध भये जग तारण ॥ ३ ॥

ओं ह्रीं णमो परमावधिजिनसिद्धेभ्यो नमः अर्घं।

वर्द्धमान विशद परिणामी, सर्वावधिके हो स्वामी।

अन्तिम वसुकर्म नसाया, नमूं सिद्ध भये सुखदाया ॥ ४ ॥
ओं ह्रीं सर्वावधिजिनसिद्धेभ्यो नमः अर्घं ।

जिस अन्त अवधिको नाहीं, तुम उपजायो पद ताहीं ।
निर्मल अवधी गुणधारी, सब सिद्ध नमूं सुखकारी ॥ ५ ॥
ओं ह्रीं अनन्तावधिजिनसिद्धेभ्यो नमः अर्घं ।

तप बल महिमा अधिकाई, बुद्धि कोष्ठ रिद्धि उपजाई ।
श्रुत ज्ञान कोष्ठ भंडारी, नमूं सिद्ध भये अविकारी ॥ ६ ॥
ओं ह्रीं कोष्ठबुद्धिऋद्धिसिद्धेभ्यो नमः अर्घं ।

ज्यों बीज फले बहुरासी, त्यों छिनही बहु अभ्यासी ।
यह पावत ही योगीशा, भये सिद्ध नमूं शिव ईशा ॥ ७ ॥
ओं ह्रीं बीजबुद्धिऋद्धिसिद्धेभ्यो नमः अर्घं ।

पदमात्र समस्त चितारे, है रिद्धि यह पद अनुसारे ।
यह पाय यतीश्वर ज्ञानी, भये सिद्ध नमूं शिवथानी ॥ ८ ॥
ओं ह्रीं पादानुसारणीऋद्धिऋषिभ्यो नमः अर्घं ।

जो भिन्न भिन्न इक लारै, शब्दन सुन अर्थ विचारै ।
यह ऋद्धि पाय सुखदाता, नमूं सिद्ध भये जगत्राता ॥ ९ ॥
ओं ह्रीं संभिन्नश्रोतृऋद्धिऋषिभ्यो नमः अर्घं ।

मति श्रुत अर अवधि अनूपा, विन गुरुके सहज सरूपा ।
भयो स्वयंबुद्ध निज ज्ञानी, नमूं सिद्ध भये सुखदानी ॥ १०॥
ओं ह्रीं स्वयंबुद्धाणं नमः अर्घं ।

जो पाय न पर उपदेशा, जाने तप ज्ञान विशेषा ।
प्रत्येक बुद्ध गुण धारी, भये सिद्ध नमूं हितकारी ॥ ११ ॥
ओं ह्रीं प्रत्येकबुद्धऋद्धिऋषिभ्यो नमः अर्घं ।

गणधरसे समकित धारी, तुम दिव्यध्वनि अनुसारी ।
ज्ञानि निसिरताज कहाये, भये सिद्ध सुजस हम गाये ॥१२॥
ओं ह्रीं अर्हं बोधबुद्धाणं नमः अर्घं।

मन योग सरलता धारै, तिस अन्तर भेद उघारै ।

यो होय ऋजुमति ज्ञानी, नमूं सिद्ध भये सुखदानी ॥ १३ ॥

ओं ह्रीं ऋजुमतिऋद्धिऋषिभ्यो नमः अर्घं ।

वाके मनको सब वाता, जाने सो विपुल कहाता ।

तुम पाय भये शिवधामी, नमूं सिद्धराज अभिरामी ॥१४॥

ओं ह्रीं विपुलमतिऋद्धिऋषिभ्यो नमः अर्घं ।

सुर विद्याको नहीं चाहैं, निज चारित विरद निवाहैं ।

दस पूर्व ऋद्धि यह पायो, भये सिद्ध मुनिन गुण गायो ।१५।

ओं ह्रीं दसपूर्वऋद्धिऋषिभ्यो नमः अर्घं ।

चौदह पूरव श्रुतज्ञानी, जाने परोक्ष परमानी ।

प्रत्यक्ष लखो तिस सारूं भये सिद्ध हरो अघ म्हारूं ॥१६॥

ओं ह्रीं चौदहपूर्वऋद्धिऋषिभ्यो नमः अर्घं ।

सुन्दरी छन्द ।

ज्योतिषादिक लक्षण जानकैं, शुभ अशुभ फल कहत बखानिकैं ।

निमित ऋद्धि प्रभाव न अन्यथा, होय सिद्ध भये प्रणमूं यथा ।१७।

ओं ह्रीं अष्टांगनिमित्त रिद्धि रिपिभ्यो नमः अर्घं ।

बहुत विधि अणिमादिक रिद्ध जू, तप प्रभाव भई तिन सिद्ध जू

निष्प्रयोजन निजपद लीन है, नमूं सिद्ध भये स्वाधीन है॥१८॥

ओं ह्रीं विवर्णरिद्धिरिपिभ्यो नमः अर्घं ।

भूमि जल जंतु जिय ही ना हरैं, नमूं ते मुनि शिव कामिन वरैं

नेक नहिं बाधा परिहार हो, नमूं सिद्ध सभी सुखकार हो ।१९।

ओं ह्रीं विज्जाहरणरिद्धिरिपिभ्यो नमः अर्घं ।

जंघपर दो हाथ लगावहीं, अन्तरीक्ष पवनवत जावहीं ।

पाय ऋद्धि महामुनि चारणी, यथायोग्य विशुद्ध विहारणी ।२०।

ओं ह्रीं चारणरिद्धिरिपिभ्यो नमः अर्घं ।

खग समान चलै आकाशमें, लीन नित निज धर्म प्रकाशमें ।

शुद्ध चारण करि निज सिद्धता, पाइयो हम नमन करैं यथा ।२१।

ओं ह्रीं आकाशगामिनीरिद्धिरिपिभ्यो नमः अर्घं ।

वाद विद्या फुरत प्रमानही, वज्रसम परमतगिरि हानही ।
सव कुपक्षी दोष प्रगट करैं, स्यादवाद महादुतिको धरैं ॥२२॥

ओं ह्रीं परामर्शरिद्धिरिपिभ्यो नमः अर्घं ।

विषम जहर मिला भोजन करैं, लेत ग्रासहिं तिस शक्ती हरैं ।
ते महामुनि जग सुखदाय जू , हम नमें तिन शिवपद पाय जू ।२ ।

ओं ह्रीं आशीविषरिद्धिरिपिभ्यो नमः अर्घं ।

जो महाविष अति परचण्ड हो, दृष्टि करि तिन कीने खण्ड हो ।
सो यतीश्वर कर्म विडारकैं, भये सिद्ध नमूं उर धारकैं ॥ २४ ॥

ओं ह्रीं दृष्टिविषंविषरिद्धिरिपिभ्यो नमः अर्घ ।

अनशनादिक नित प्रति साधना, मरणकाल तई न विराधना ।
उग्र तप करि वसुविधि नासतैं, हम नमें शिवलोक प्रकाशतैं ।ः५।

ओं ह्रीं उग्रतपरिद्धि रिपिभ्यो नमः अर्घं ।

बढती नित प्रति सहज प्रभावना, उग्र तप करि क्लेश न पावना।
दीप्ति तप करि कर्म जरायकैं, भये सिद्ध नमूं सिर नायकैं ॥ २६ ॥

ओं ह्रीं दीप्ततपरिद्धिरिपिभ्यो नमः अर्घं।

अन्तराय भये उत्सव बढै, बाल चन्द्र समान कला चढै।
वृद्ध तपकी ऋद्धि लहै यती, भये सिद्ध नमत सुख हो अती ।२७।

ओं ह्रीं तपवृद्धिरिपिभ्यो नमः अर्घं।

सिंह क्रीडित आदि विधानतैं, नित बढावत तप विधि मानतैं।
महामुनीश्वर तप परकाशतैं, नमूं मुक्ति भये जगवासतैं ॥ २८ ॥

ओं ह्रीं महातपरिद्धिरिपिभ्यो नमः अर्घं।

सिषिरिगिरि ग्रीषम, हिम सरतटैं, तरु निकट पावस निजपद रटैं।
घोर परिषह करि नाही हटैं, भये सिद्ध नमत हम दुख कटैं ॥ २९

ओं ह्रीं घोरतपरिद्धिरिपिभ्यो नमः अर्घं।

महाभयंकर निमित मिलै जहां, निरविकार यती तिष्ठै तहां।
महापराक्रम गुणकी खान है, नमो सिद्ध जगत सुखदान है ॥ ३०॥
ओं ह्रीं घोरगुणरिद्धिरिपिभ्यो नमः।

सघन गुणकी रास महायती, रत्नराशि समान दिपै अती।
शेष जिन वर्णन करि थकि रहै, नमूं सिद्ध महापदको लहै ॥३१॥
ओं ह्रीं घोर गुणपरिक्रमाणं रिद्धिरिपिभ्यो नमः अर्घं।

अतुल बीर्य धनी हन कामको, चलत मन न लखत सुख धामको।
बालब्रह्मचारी योगीश्वरा, नमूं सिद्ध भये वसुविधि हरा ॥ ३२॥
ओं ह्रीं ब्रह्मचर्य रिद्धिरिपिभ्यो नमः अर्घं।

सकल रोग मिटै संस्पर्शते, महायतीश्वरके आमर्शतें।
औषधी यह ऋद्धि प्रभावना, भये सिद्ध नमत सुखपावना ॥ ३३॥
ओं ह्रीं आमर्षरिद्धिरिपिभ्यो नमः अर्घं।

मूत्रमें अमृत अतिशय वसै, जा परसतैं सब व्याधी नसै।

औषधी यह ऋद्धि प्रभावना, भये सिद्ध नमत सुख पावना ॥३४॥

ओं ह्रीं आमोसियऔषधिरिद्धिरिपिभ्यो नमः अर्घं ।

तन पसीजत जलकन लगतही, रोग व्याधि सर्व जन भगत ही ।
औषधी यह ऋद्धि प्रभावना, भये सिद्ध नमत सुख पावना ॥ ३५॥

ओं ह्रीं जलोसियरिद्धिरिपिभ्यो नमः अर्घं ।

हस्त पादादिक नखकेशमें, सर्व औषधी हैं सब देशमें ।
औषधी यह ऋद्धि प्रभावना, भये सिद्ध नमत सुख पावना ॥ ३६ ॥

ओं ह्रीं सर्वोसियरिद्धिरिपिभ्यो नमः अर्घं ।

अडिल—मन सम्बंधी वीर्य बढ़े अतिशय महा,
एक महूरत अन्तर श्रुत चिंतवन लहा ।
मनोबली यह ऋद्धि भई सुखदाइ जू,
भये सिद्ध सुखदाय जजूं तिन पांय जू ॥ ३७ ॥

ओं ह्रीं मनोबली रिद्धिरिपिभ्यो नमः अर्घं ।

भिन्न भिन्न अति शुद्ध उच्च स्वर उच्चरैं,
एक महूरत अन्तर श्रुत वर्णन करैं ।
बचनवली यह ऋद्धि भई सुखदाय जू,
भये सिद्ध सुखदाय जजूं तिन पांय जू ॥ ३८ ॥

ओं ह्रीं वचनबली रिद्धिरिपिभ्यो नमः अर्घं ।

खड्गासन इक अंग मास छै मास लो,
अचल रूप थिर रहै छिनक खेदित न हो ।
कायबली यह ऋद्धि भई सुखदाय जू,
भये सिद्ध सुखदाय जजों तिन पांय जू ॥ ३९ ॥

ओं ह्रीं कायबली रिद्धिरिपिभ्यो नमः अर्घं ।

अति अरस चरु क्षीर होय कर धरत ही,
बचन खिरत पर श्रवण तुष्टता करत ही ।

क्षीरश्रवी यह ऋद्धि भई सुखदाय जू,
भये सिद्ध सुखदाय जजूं तिन पांय जू ॥ ४० ॥
ओं ह्रीं क्षीरस्रावी रिद्धिरिषिभ्यो नमः अर्घं ।

रूखे भोजनसे करमें घृत रस आवे,
वचन सुनत परको घृत सम स्वादित ह्वै ।
सर्पिश्रावी यह ऋद्धि भई सुखदाय जू,
भये सिद्ध सुखदाय जजूं तिन पांय जू ॥ ४१ ॥
ओं ह्रीं सर्पिश्रावीरिद्धिरिषिभ्यो नमः अर्घं ।

हस्तकमलमें अन्न मधुर रस देत हैं,
मधुकर सम जिय वचन गंधको लेत है ।
मधुश्रावी यह ऋद्धि भई सुखदाय जू,
भये सिद्ध सुखदाय जजूं तिन पांय जू ॥ ४२ ॥
ओं ह्रीं मधुश्रावीरिद्धिरिषिभ्यो नमः अर्घं ।

अमृतसम आहार होय कर आयके,
वचनामृत दै सुक्ख श्रवणमें जायके ।
आमियरस यह ऋद्धि भई सुखदाय जू,
भये सिद्ध सुखदाय जजूं तिन पांय जू ॥ ४३ ॥
ओं ह्रीं अमियरसरिद्धिरिपिभ्यो नमः अर्घं ।

जिस वासन जिस थान आहार करैं यती,
चक्री सेना खाय अखे होवे अती ।
अक्षीण रसी यह ऋद्धि भई सुखदाय जू,
भये सिद्ध सुखदाय जजूं तिन पांय जू ॥ ४४ ॥
ओं ह्रीं अक्षीणरसरिद्धिरिपिभ्यो नमः अर्घं ।

सोरठा—सिद्धरास सुखदाय, वर्धमान नितप्रति लसे ।
नमूं ताहि सिर नाय, वृद्ध रूप गुण अगम है ॥ ४५ ॥
ओं ह्रीं वड्ढमाणसिद्धेभ्यो नमः अर्घं ।

रागादिक परिणाम, अन्तरके अरि नासके ।
लहि अरहंत सु नाम, नमों सिद्धपद पाइया ॥ ४६ ॥

ओं ह्रीं अरहन्तसिद्धेभ्यो नमः अर्घं ।

दो अन्तिम गुण थान, भाव सिद्ध इस लोकमें ।
तथा द्रव्य शिव थान, सर्व सिद्ध प्रणमूं सदा ॥ ४७ ॥

ओं ह्रीं णमो लोए सव्वसिद्धाणं नमः। अर्घं

शत्रु व्याधि भय नाहिं, महावीर धीरज धनी ।
नमूं सिद्ध जिननाह, संतनिके भवभय हरै ॥४८ ॥

ओं ह्रीं भयवदो महावीरवड्ढमाणं नमः अर्घं ।

क्षपकश्रेणी आरूढ़, निजभावी योगी यथा ।
निश्चय दर्श अमूढ़, सिद्ध योग सब ही जजों ॥ ४९ ॥

ओं ह्रीं णमो योगसिद्धाणं नमः अर्घं ।

वीतराग परधान, ध्यान करे तिनको सदा ।

सोई ध्येय महान, णमो सिद्ध हम अघ हरो ॥ ५० ॥
ओं ह्रीं णमो ध्येयसिद्धाणं नमः अर्घं ।

लोक शिखर शिव थान, अचल विराजत सिद्ध जिन ।
लोकवास सर्वान, भए सिद्ध प्रणमूं सदा ॥ ५१ ॥
ओं ह्रीं णमों सव्वसिद्धाणं नमः अर्घं ।

औरन करत कल्याण, आप सर्व कल्याणमय ।
सोई सिद्ध महान, मंगलहेतु नमूं सदा ॥५२॥
ओं णमो स्वस्तिसिद्धाणं नमः अर्घं ।

तीन लोकके पूज, सर्वोत्तम सुखदाय है ।
जिन सम और न दूज, तिनपद पूजों भाव युत ॥ ५३ ॥
ओं ह्रीं अर्हं सिद्धाणं नमः अर्घं ।

लोकोत्तम परधान, तिन पद पूजत हैं सदा ।
तातैं सिद्ध महान, सर्व पूज्यके पूज्य हो ॥ ५४ ॥
ओं ह्रीं अर्हं सिद्ध सिद्धाणं नमः अर्घं ।

परम धरम निज साध, परमातम पद पाइयो ।
सोई धर्म अबाध, पूजत हमको दीजिये ॥ ५५ ॥
ओं ह्रीं परमातमसिद्धाणं नमः अर्घं ।

सर्व रिद्ध नव निद्ध, सिद्ध भये नहिं सिद्ध हो ।
निजपद साधत सिद्ध, होत सही तिनको णमों ॥ ५६ ॥
ओं ह्रीं परमसिद्धाणं नमः अर्घं ।

परमागमकी शाख, परम अगम गुणगण सहित ।
सोई मनमें राख, श्रद्धायुत पूजा करों ॥ ५७ ॥
ओं ह्रीं परमागमसिद्धाणं नमः अर्घं ।

गुण अनंत परकाश, महाविभव मय लसत है ।
आवर्णित पद नाश, ते पूजूं प्रणमूं सदा ॥ ५८ ॥
ओं ह्रीं णमो प्रकाशमानसिद्धाणं नमः अर्घं ।

स्वयं सिद्ध भगवान, ज्ञानभूत परकाश मय ।
लसत नमूं मन आन, मम उर चिंता दुख हरो ॥ ५९ ॥

ओं ह्रीं णमो स्वयंभूसिद्धाणं नमः अर्घं ।

मन इन्द्रियसों भिन्न, मन इन्द्री परकाश कर ।
सोई ब्रह्म अखिन्न, साधित सद्ध भए नमूं ॥ ६० ॥

ओं ह्रीं णमो ब्रह्मसिद्धाणं नमः अर्घं ।

द्रव्य अनन्त गुणात्म, परणामी परसिद्धके,
सोई पद निज आतम, साधत सिद्ध अनन्त गुण ॥ ६१ ॥

ओं ह्रीं णमो अनन्तगुणसिद्धाणं नमः अर्घं

सर्व तत्त्वमय पर्म, गुण अनन्त परमातमा ।
सो पायो निजधर्म, परम सिद्ध तिनको नमूं ॥ ६२ ॥

ओं ह्रीं णमो परमअनन्तसिद्धाणं नमः अर्घं ।

लोक सिखरके वास, पायो अविचल थान निज ।
सव लोक परकाश, ज्ञानज्योति तिनको नमों ॥ ६३ ॥

ओं ह्रीं लोकवाससिद्धाणं नमः अर्घं ।

अथ जयमाला ।

दोहा—तीर्थंकर त्रिभुवन धनी, जापद करत प्रणाम ।
हम किह मुख वर्णन करैं, तिन महिमा अभिराम ॥ १ ॥

चौपाई ।

जय भवि कुमुदन मोदन चंदा, जय दिनन्द त्रिभुवन अरिविंदा ।
भव-तप हरण शरण रस कूपा, मद ज्वर जरन हरण घन रूपा ॥२॥
अकथित महिमा अमित अथाईं, निर उपमेय सरसता नांई ।
भावलिंग विन कर्म खिपाई, द्रव्य लिंग विन शिवपद पाई ॥ ३ ॥
नय विभाग विन वस्तु प्रमाणा, दया भाव विन जिन कल्याणा ।
पंगु सुमेरु चूलिका परसै, गुंग गान आरंभे स्वरसै ॥ ४ ॥
यों अजोग कारज नहिं होई, तुम गुण कथन कठिन है सोई ।
सर्व जैन शासन निजमाहीं, भाग अनन्त धरै तुम नाहीं ॥ ५ ॥
गोखुरमें नहीं सिंधु समावै, वायस लोक अन्त नहिं पावै ।

तातें केवल भक्ति भाव तुम, पावन करौ अपावन उर हम ॥ ६ ॥
जे तुम यश निज मुख उच्चारै, ते तिहुं लोक सुजस विस्तारै ।
तुम गुण गान मात्र कर प्रानी, पावै सुगुण महासुखदानी ॥ ७ ॥
जिन चित ध्यान सलिल तुमधारा, ते मुनि तीरथ है निरधारा ।
तुम गुण हंस तुम्हीं सरवासी, वचन जालमें लेत न फासी ॥ ८ ॥
जगत बंधु गुणसिंधु दयानिधि, बीजभूत कल्याण सर्वसिधि ।
अक्षय शिव स्वरूप श्रिय स्वामी, पूर्ण निजानन्द विश्रामी ॥ ९ ॥
शरणागत सर्वस्व सुहितकर, जन्म मरण दुख आधि व्याधि हर ।
संत भक्ति तुम हो अनुरागी, निश्चै अजर अमर पद भागी ॥ १०॥

ॐ ह्रीं चतुःषष्टिदलोपरिस्थितसिद्धेभ्यो नमः महार्घं निर्वपामि स्वाहा ।

घत्तानन्द छन्द ।

जय सुखसागर सुजस उजागर, गुणगण आगर तारण हो ।
संत उधारण विपति विडारण, सुख विस्तारण कारण हो ॥

तुम गुण गान परम फलदान, सो मंत्र प्रमान विधान करूं।
जहरी कर्मनि वैरी की कहरी, असहैरी भवकी व्याधि हरूं॥

इत्याद्याशीर्वादः।

इति चतुर्थपूजा सम्पूर्ण ॥

अथ पंचमी पूजा।

छप्पै छन्द।

ऊरध अधो सुरेफ सु विंदु हंकार बिराजै,
अकारादि स्वर लिप्त कर्णिका अन्त सु छाजै।
वर्गन पूरित वसुदल अम्बुज तत्त्व संधिधर,
अग्रभागमें मंत्र अनाहत सोहत अतिवर ॥
फुनि अन्त ही वेढ्यो परम, सुर ध्यावत अरि नाशको।
केहरि सम पूजन निमित्त, सिद्धचक्र मंगल करौ ॥ १ ॥

ओं ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धपरमेष्ठिन् अष्टाविंशत्यधिकशत १२८ गुण-

सहित विराजमान अत्रावतरावतर संवौषट् आह्वाननं, अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं । अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

दोहा—सूक्ष्मादि गुण सहित है, कर्म रहित निररोग ।
सिद्धचक्र सो थापहूं, मिटै उपद्रव योग ॥

इति यंत्रस्थापनं ।

अथाष्टकं ।

चाल बारामासा छन्द ।

चन्द्रवर्ण लखि चन्द्रकान्तमणि, मनतैं श्रवै हुलसधारा हो ।
कंज सुवासित प्रासुक जलसों, पूजूं अंतर अनुसारा हो ॥
लोकाधीश शीश चूड़ामणि, सिद्धचरण उर धारा हो ।
चौसठ दुगुण सुगुण मणि सुवरण सुमिरतही भव पारा हो ।१।

ओं ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने एकसे अठाईस गुणसंयुक्ताय श्री समत्त-णाणदंसणवीर्य सुहमत्तहेव अवग्गहणं अगुरुलघुमव्वाबाहं जन्मजरारोगविनाशनाय जलं।१।

सुरमन मणिधर जास वास लहि, मद तजि गंध लुभावत हैं।
सो चन्दन नन्दनवन भूषण, तुम पद कमल चढ़ावत हैं॥
लोकाधीश०, चौसठ० ॥ २ ॥

ओं ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने एकसे अट्ठाईसगुणसंयुक्ताय श्री समत्त णाण दंसण वीर्य सुहमतहेव अवग्गहणंअगुरुलघुमव्वावाहं संसारतापविनाशनाय चन्दनं०

चंपक हीके भ्रम भ्रमरावलि, भ्रमत चकित चकराज भए,
शशि मण्डल जानो सो अक्षत, पुंजधार पद कंज नये।
लोकाधीश शीश चूडामणि, सिद्ध चरण उर धारा हो,
चौसठ दुगुण सुगुण मणि सुवरण सुमिरत ही भवपारा हो॥

ओं ह्रीं सिद्धपरमेष्ठिने १२८ गुणसहित श्रीसमत्तणाण दंसण वीर्य सुहमत्तहेव अवग्गहणं अगुरुलघुमव्वावाहं अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा॥ ३ ॥

मदन वदन दुतिहरन वरन रति लोचन अलिगण छाय रहे।
पुष्पमाल वासित विसाल सो, भेंट धरत उर काम दहै॥
लोकाधीश० चौसठ० ॥

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने १२८ गुण संयुक्ताय श्रीसमत्तणाणदंसण वीर्य सुहम-तहेव अवग्गहणं अगुरुलघुमव्वावाहं कामवाणविनाशनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा। ४

चितवत मन वरणत रसना रस, स्वाद लेत ही तृप्त थये।
जन्मांतरहू छुधानिवारैं, सो नेवज तुम भेट धरै ॥
लोकाधीश शीश चूड़ामणि, सिद्धचक्र उरधारा हो।
चौसठ दुगुण सुगुण मणि सुवरन, सुमरत ही भवपारा हो ॥

ओं ह्रीं सिद्धपरमेष्ठिने १२८ गुणसहित श्री समत्तणाणदंसण वीर्य सुहमत्तहेव अवग्गहणं अगुरुलघुमव्वावाहं क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं नि० ॥ ५ ॥

लवमणिप्रभा अनूपम सुर निज, शीश धरणकी रास करे हो।
या विन तुच्छ विभव निज जानें, सो दीपक तुम भेट धरे हो ॥
लोकाधीश०, चौसठ० ॥

ओं ह्रीं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने १२८ गुणसंयुक्ताय श्रीसमत्तणाणदंसण वीर्य सुहमत्त-हेव अवग्गहणं अगुरुघुमव्वावाहं मोहांधकारविनाशनाय दीपं ॥ ६ ॥

नीलंजसा करी नभमें ज्यों, ऋषभ भक्तिकर नृत्य कियो हो।

सो तुम सन्मुख धूप उड़ावत, तिस छविको नहि भाव लियो हो।
लोकाधीश शीश चूडामणि, सिद्धचक्र उरधारा हो।
चौसठ दुगुण सुगुण मणि सुवरन सुमिरत ही भवपारा हो॥

ओं ह्रीं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने १२८ गुणसंयुक्ताय श्रीसमत्तणाणदंसण वीर्य सुहमत्तहेव अवग्गहणं अगुरुघुमव्वाबाहं अष्टकर्मदहनाय धूपं ॥ ७ ॥

सेव रंगीले अनार रसीले, केलाकी लै डाल फली हो।
डाली हू नृपमाली हू, नांतर प्रासुकताकी रीति भली हो॥
लोकाधीश०, चौसठ० ॥

ओं ह्रीं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने १२८ गुणसंयुक्ताय श्रीसमत्तणाणदंसण वीर्य सुहमत्तहेव अवग्गहणं अगुरुघुमव्वाबाहं मोक्षफलप्राप्तये फलं ॥ ८ ॥

एकसे एक अधिक सोहत वसु, जाति अर्घ करि चरण नमूं हूं।
आनंद आरति आरत तजिकै, परमारथ हित कुमति वमूं हूं॥
लोकाधीश०, चौसठ० ॥

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने १२८ गुणसंयुक्ताय श्रीसमत्तणाणदंसणवीर्य सुहमत्तहेव अवग्गहणं अगुरुलघुमव्वावाहं अनर्घपदप्राप्तये अर्घं ।

गीता छन्द ।

निर्मल सलिल शुभ वास चन्दन धवल अक्षत युत अनी,
शुभ पुष्प मधुकर नित रमैं चरु प्रचुर स्वाद सुविधि घनी ।
वर दीपमाल उजाल धूपाइन रसायन फल भले,
करि अर्घ सिद्ध समूह पूजत, कर्मदल सब दलमले ॥
ते कर्मवर्त नसाय युगपत, ज्ञान निर्मल रूप है,
दुख जन्म टाल अपार गुण, सूक्षम स्वरूप अनूप है ।
कर्माष्ट बिन त्रैलोक्य पूज्य, अछेद शिव कमलापती,
मुनि ध्येय सेय अमेय चाहूं, ज्ञेय द्यो हम शुभमती ॥

ॐ ह्रीं अष्टाविंशतिअधिकशतगुणयुक्तसिद्धेभ्यो नमः पूर्णार्घं ।

अथ एकसै अठाईस गुण सहित अर्घ ।

त्रोटक छन्द ।

निरबाध सु तत्त्व सरूप लखो, इक लेश विशेष न शेष रखो ।
अति शुद्ध सुभाविक छायक है, नमूं दर्श महासुखदायक है ॥ १ ॥

ओं ह्रीं सम्यग्दर्शनाय नमः अर्घं ।

निरमोह अकोह अबाधित हो, परभाव थकी न बिराधित हो ।
निरसंस चराचर जानत हैं, हम सिद्ध सु ज्ञान प्रमानत हैं ॥२ ॥

ॐ ह्रीं सम्यग्ज्ञानाय नमः अर्घं ।

सब राग विरोध निवारन है, निज भाव थकी निज धारन है ।
परमें न कभू निज भाव वहै, अति सम्यक्चारित्र नाम यहै ॥३॥

ओं ह्रीं सम्यक्चारित्राय नमः अर्घं ।

उतपाद विनाश न बाध धरैं, परनाम सुभाव नहीं निसरै ।
तुम धारत हो यह धर्म महा, हम पूजत हैं पद शीश यहां ॥४॥

ओं ह्रीं अस्तित्वधर्माय नमः अर्घं ।

निज भावनतैं व्यतिरिक्त न हो, प्रनमों गुणरूप गुणात्मन हो।
यह वस्तु सुभाव सदा विलसो, हम पूजत हैं सब पाप नसो ॥५॥

ओं ह्रीं वस्तुत्वधर्माय नमः अर्घं ।

परमाण न जानत हैं तिनको, छिन्न रोग न आवत है जिनको।
अप्रमेय महागुण धारत हैं, हम पूजत पाप विडारत हैं ॥६॥

ओं ह्रीं अप्रमेयधर्माय नमः अर्घं ।

गुणपर्य प्रमाण दसा नित ही, निजरूप न छांड़त हैं कित ही।
जिन वैन प्रमाण सु धारत हैं, हम पूजत पाप विडारत हैं ॥७॥

ओं ह्रीं अगुरुलघुधर्माय नमः अर्घं ।

जितने कछु है परिणाम विषैं, सब चित्त स्वरूप सुजान तिसैं।
मुख चेतनता गुण धारत हैं, हम पूजत पाप विडारत हैं ॥८॥

ॐ ह्रीं चेतनत्वधर्माय नमः अर्घं ।

जिन अंग उपंग शरीर नहीं, जिन रंग प्रसंग सु तीर नहीं।
नभसार अमूरति धारत हैं, हम पूजत पाप विडारत हैं ॥९॥

ॐ ह्रीं अमूर्तित्वधर्माय नमः अर्घं ।

परको न कदाचित धर्म गहैं, निजधर्म सरूप न छांडत हैं ।
अतिउत्तम धर्म सु धारत हैं, हम पूजत पाप विडारत हैं ॥ १० ॥

ओं ह्रीं समकितधर्माय नमः अर्घं ।

जितने कछु हैं परिणाम विषैं, सब ज्ञान स्वरूप सु जान तिसैं ।
मुख ज्ञानमई गुण धारत हैं, हम पूजत पाप विडारत हैं ॥ ११ ॥

ओं ह्रीं ज्ञानधर्माय नमः अर्घं ।

चिन्मय चिन्मूरति जीव सही, अति पूरणता विन भेद कही ।
निज जीव सुभाव सुधारत हैं, हम पूजत पाप विडारत हैं ॥ १२ ॥

ओं ह्रीं जीवधर्माय नमः अर्घं ।

मनको नहिं वेग लखावत हैं, जिस वेन नहीं बतलावत हैं ।
अति सूक्षम भाव सु धारत हैं, हम पूजत पाप विडारत हैं ॥ १३ ॥

ओं ह्रीं सूक्ष्मधर्माय नमः अर्घं ।

परघात न आप न घात करैं, इक खेत समूह अनन्त वरैं ।
अवगाह सरूप सुधारत है हमत पूजत पाप विडारत हैं ॥ १४ ॥

ओं ह्रीं अवगाहधर्माय नमः अर्घं ।

अविनाश सुभाव विराजत हैं, विन बाध सरूप सु छाजत हैं ।
यह धर्म महागुण धारत हैं, हम पूजत पाप विडारत हैं ॥ १५ ॥

ओं ह्रीं अव्याबाधधर्माय नमः अर्घं ।

निजसों निजकी अनभूति करैं, अपनो परसिद्ध सुभाव वरैं ।
निज ज्ञान प्रतीति सुधारत हैं, हम पूजत पाप विडारत हैं ॥१६॥

ओं ह्रीं स्वसंवेदनज्ञानाय नमः अर्घं ।

निज ज्योति स्वरूप उद्योतमई, तिसमें परदीस रहैं नित ही ।
यह ताप स्वरूप उधारत हैं, हम पूजत पाप विडारत हैं ॥ १७॥

ओं ह्रीं स्वरूपतापतपसे नमः अर्घं ।

निज नंत चतुष्टय राजत हैं, द्रिग ज्ञान बलासुख छाजत हैं ।
यह आप महागुण सारत हैं, हम पूजत पाप विडारत हैं ॥ १८॥

ओं ह्रीं अनन्तचतुष्टयाय नमः अर्घं ।

सुख समकित आदि महागुण को, तुम साधित सिद्ध भए अबहो।
यह उत्तम भाव सुधारत हैं, हम पूजत पाप विडारत हैं ॥ १९॥

ओं ह्रीं सम्यक्त्वादिगुणात्मकसिद्धेभ्यो नमः अर्घं ।

दोहा—निश्चय पंचाचार सब, भेद रहित तुम साध ।
चेतनकी अति शक्तिमें, सूचत सब निरबाध ॥ २० ॥

ओं ह्रीं पंचाचारचार्येभ्यो नमः अर्घं ।

चौपाई ।

सब विकलप तजि भेद सरूपी, निज अनभूति मग्न चिद्रूपी ।
निश्चय रत्नत्रय परकासो, पूजूं भाव भेद हम नासो ॥ २१ ॥

ओं ह्रीं रत्नत्रयप्रकाशाय नमः अर्घं ।

करण भेद रत्नत्रय धारी, कर्म भेद निज भाव संसारी ।
करता भेद आप परिणामी, भेदाभेद रूप प्रणमामी ॥ २२ ॥

ओं ह्रीं स्वरूपसाधकसर्वसाधुभ्यो नमः अर्घं ।

मनोयोग कृत जियसंसारी, क्रोधारम्भ करत दुखकारी।
तासों रहित सिद्ध भगवाना, अन्तर शुद्ध करूं तिन ध्याना।२३

ॐ ह्रीं अकृतमनःक्रोधसंरम्भमनोगुप्तये नमः अर्घं।

परके मन क्रोधी संरम्भा, करत मूढ़ नाना आरम्भा।
सिद्धराज प्रनमूं तिस त्यागी, निर्विकल्प निज गुणके भागी।२४।

ॐ ह्रीं अकारितमनःक्रोधसंरम्भनिर्विकल्पधर्माय नमः अर्घं।

भुजंगप्रयात छन्द।

मनोयोग रंभा प्रशंसीक रोधा, निजानंदको भान ठाने अबोधा।
महानिंदनी भावको त्याग दीना, निजानंदको स्वाद ही आप लीना

ॐ ह्रीं नानुमोदितमनःक्रोधसंरम्भसानंदधर्माय नमः अर्घं।

मनोयोग क्रोधी समारंभ धारी, सदा जीव भोगे महाखेद भारी।
महानंद आख्यातको भाव पायो, नमों सिद्ध सो दोष नाहीं उपायो॥

ओं ह्रीं अकृतमनक्रोधसमारंभपरमानंदाय नमः अर्घं।

दोहा—समारम्भ क्रोधित सुमन, परकारित दुख नाहिं।
परमातम पद पाइयो, नमूं सिद्ध गुण ताहि ॥ २७ ॥
ओं ह्रीं अकारितमनःक्रोधसमारम्भपरमानन्दाय नमः अर्घं ।

भुजंगप्रयात छन्द ।

समारम्भ क्रोधी मनोयोग माही, धरे मोदना भावका जीव ताही ।
भये आप संतुष्ट ये त्याग भावा, नमूं सिद्ध सो दोषनाहीं उपावा ।२८।
ओं ह्रीं नानुमोदितमनःक्रोधसमारम्भपरमानंदसंतुष्टाय नमः अर्घं ।

पद्धड़ी छन्द ।

निज क्रोधित मन आरम्भ ठान, जग जिय दुखमें सुख रहै मान ।
सो आप त्याग संक्लेश भाव, भये सिद्ध नमूं धर हिये चाव ॥ २९ ॥
ओं ह्रीं अकृतमनःक्रोधारम्भस्वसंस्थानाय नमः अर्घं ।
क्रोधित मनसो आरम्भ हेत, प्रेरित निज अपराध लेत ।
जग जीवनकी विपरीत रीति, तुम त्याग भये शिव वर पुनीत ।३०।
ओं ह्रीं अकारितमनःक्रोधारम्भबन्धसंस्थानाय नमः अर्घं ।

क्रोधित मनसो आरंभ देख, जिय मानत है आनंद विशेख।
तुम सत्य सुखी इह भाव छार, भये सिद्ध नमूं उर हर्ष धार ॥३१॥
ओं ह्रीं नानुमोदितमनःक्रोधारम्भसंस्थानाय नमः अर्घं।

दोहा

मान योग मन रंभमें, वरतत है जगजीव।
भये सिद्ध संक्लेश तजि, तिन पद नमूं सदीव ॥ ३२ ॥
ओं ह्रीं अकृतमनोमानसंरम्भसाधर्माय नमः अर्घं।

मान उदय मन योगतें, परको रम्भ करान।
त्याग भये परमातमा, नमूं सरन पर हान ॥ ३३ ॥
ओं ह्रीं अकारितमनोमानसंरम्भअनन्यशरणाय नमः अर्घं।

मान सहित मन रम्भमें, जगजिय राखै चाव।
नमों सिद्ध परमातमा, जिन त्यागो इह भाव ॥ ३४ ॥
ओं ह्रीं नानुमोदितमनोमानसंरम्भसुगुणभावाय नमः अर्घं।

अडिल्ल छन्द ।

समारम्भ परिवर्तमान युत मन धरै,
विकलपमई उपकरण विविध इकठे करै ।
महा कष्टको हेत भाव यह ना गहो,
प्रणमूं सिद्ध अनन्त सुखातम गुण लहो ॥ ३५ ॥

ओं ह्रीं अकृतमनोमानसमारम्भसुखात्मगुणाय नमः अर्घं ।

मान सहित मनयोग द्वार चितवन करै,
समारम्भ पर कृत्य करावन विधि वरै ।
तहां कष्टको हेत भाव यह ना गहो,
प्रणमूं सिद्ध अनन्यगुणातम पद लहो ॥ ३६ ॥

ओं ह्रीं अकारितमनोमानसमारम्भ अनन्यगताय नमः अर्घं ।

जोडे चित न समाज विविध जिस काजमें,
समारम्भ तिस नाम सो मति जिनराजमें ।

मानै मानी मन आनन्द सु नमतिसे
नमूं सिद्ध है अतुल वीर्य त्यागत तिसे ॥ ३७ ॥
ओं ह्रीं नानुमोदितमनोमानसमारंभअनन्तवीर्याय नमः अर्घं ।

अशुभ काज परिवर्त नाम आरम्भको,
मान सहित मन द्वार तास उद्यम गहो ।
जगवासी जिय नित प्रति पाप उपाय है,
णमो सिद्ध या रहित अतुल सुखराय है ॥ ३८ ॥
ओं ह्रीं अकृतमनोयोगमानारम्भअनन्तसुखाय नमः अर्घं ।

दोहा—मनो मान आरम्भके, भये अकारित आप ।
अतुल ज्ञान धारी भए, नमत नसै सब पाप ॥ ३९ ॥
ओं ह्रीं अकारितमनो मानारम्भअनन्तज्ञानाय नमः अर्घं ।

मनो मान आरम्भमें, नानुमोदि भगवंत ।
गुण अनन्त युत सिद्धपद, पूजत हैं नित संत ॥ ४० ॥

ओं ह्रीं नानुमोदित-मनोमान आरम्भअनंतगुणाय नमः अर्घं ।

गीताछन्द ।

जो अशुभ काज विकल्प हो, संरम्भ मनयुत कुटिलता ।
कर कर अनादित रंकजिय, बहु भांति पाप उपावता॥
सो त्याग सकल विभाव यह तुम, सिद्ध ब्रह्मस्वरूप हो ।
हम पूजि हैं नित भक्ति युत, तुम भक्ति वत्सलरूप हो ॥४१॥

ओं ह्रीं अकृतमनोमायासंरम्भब्रह्मस्वरूपाय नमः अर्घ ।

दोहा—मायावी मनतें नहीं, कबहुं अरम्भ कराय ।
सिद्ध चेतना गुण सहित, नमूं सदा मन लाय ॥ ४२ ॥

ओं ह्रीं अकारितमनोमायासंरम्भचेतनाय नमः अर्घं ।

मायावी मनतें कभी, रंभानन्द न होय ।
सिद्ध अनन्य सुभाव युत, नमूं सदा मद खोय ॥ ४३ ॥

ओं ह्रीं नानुमोदितमनोमायासंरम्भ अनन्यस्वभावाय नमः अर्घं ।

पद्धडी छन्द ।

मायावी मनतें समारंभ, नहिं करत सदा हो अचल खंभ ।
तुम स्वानुभूति रमणीय संग, नित नमन करों धरि मन उमंग ।४४

ओं ह्रीं अकृतमनोमायासमारंभस्वानुभूतिरताय नमः अर्घं ।

मन वक्र द्वार उपकर्ण ठान, विधि समारंभको नहिं करान ।
निज साम्य धर्ममें रहो लिप्त, तुम सिद्ध णमों पद धार चित्त ।४५

ओं ह्रीं अकारितमनोमायासमारंभसाम्यधर्माय नमः अर्घं ।

दोहा—मायावी मनमें नहीं, समारंभ आनन्द ।
नमों सिद्धपद परम गुरु, पाऊं पद सुख वृन्द ॥४६॥

ओं ह्रीं नानुमोदित मनोमायासमारंभगुरवे नमः अर्घं ।

पद्धड़ी छन्द ।

वहु विधिकर जोडै अशुभ काज, आरम्भ नाम हिंसा समाज ।
मायावी मन द्वारै करेय, तुम सिद्ध नमूं यह विधि हरैय ॥४७॥

ओं ह्रीं अकृत मनोमायारम्भपरमशांताय नमः अर्घं ।

पूर्वोक्त अकारित विधि सरूप, पायो निर आकुल सुख अनूप ।
सर्वोत्तम पद पायो महान, हम पूजत हैं उर भक्ति ठान ॥४८॥

ओं ह्रीं अकारित मनोमायारंभनिराकुलाय नमः अर्घं ।

दोहा—मायावी आरम्भ करि, मनमें आनन्द मान ।
सो तुम त्यागो भाव यह, भये परम सुख खान ॥ ४९ ॥

ओं ह्रीं नानुमोदितमनोमायारंभअनन्तसुखाय नमः अर्घं ।

लोभी मन द्वारे नहीं, करै सदा समरंभ ।
हम अनन्तद्रिग सिद्धपद, पूजत हैं मनथंभ ॥५०॥

ओं ह्रीं अकृतमनोलोभसंरम्भअनन्तद्रगाय नमः अर्घं ।

लोभी मन समरंभको, परसों नाहिं कराय ।
दृगानन्द भावातमा, सिद्ध नमूं मन लाय ॥ ५१ ॥

ओं ह्रीं अकारितमनःलोभसंरंभदृगानन्दभावाय नमः अर्घं ।

लोभी मन समरंभमें, मानै नहीं आनन्द।
नमूं नमूं परमातमा, भये सिद्ध जगवंद ॥ ५२ ॥
ओं ह्रीं नानुमोदितमनोलोभसंरंभसिद्धभावाय नमः अर्घं ।

समारम्भ नहि करत हैं, लोभी मनके द्वार।
चिदानन्द चिद्देव तुम, नमूं लहूं पद सार ॥५३॥
ओं ह्रीं अकृतमनोलोभसमारम्भचिद्देवाय नमः अर्घं ।

परसों भी पूर्वोक्त विधि, कबहूं नहीं कराय।
निराकार परमात्मा, नमूं सिद्ध हर्षाय ॥ ५४ ॥
ओं ह्रीं अकारितमनो लोभसमारंभअनाकाराय नमः अर्घं ।

ऐसे ही पूर्वोक्त विधि, हर्षित होवे नाहिं।
चित्सरूप साकारपद, धारत हूं उरमाहिं ॥ ५५ ॥
ओं ह्रीं नानुमोदितमनो लोभसमारम्भसाकाराय नमः अर्घ ।

रचना हिंसा काजकी, लोभी मनके द्वार।

नहीं करैं हैं ते नमूं, चिदानन्द पद सार ॥ ५६ ॥

ओं ह्रीं अकृतमनोलोभारंभचिदानंदाय नमः अर्घं ।

लोभी मन प्रेरित नहीं, परको आरम्भ हेत।

चिनमय रूपी पद धरै, नमूं लहूं निज खेत ॥ ५७ ॥

ओं ह्रीं अकारितमनोलोभारम्भचिन्मयस्वरूपाय नमः अर्घं ।

मन लोभी आरंभमें, आनन्द लहे न लेस।

निजपदमें नित रमत हैं, ध्याऊं भक्ति विशेष ॥ ५८ ॥

ओं ह्रीं नानुमोदितमनोलोभारंभस्वरूपाय नमः अर्घं ।

अडिल्ल छन्द।

क्रोधित जिय वचयोग द्वार उपयोगको,

रचना विधि संकल्प नाम समरंभ सो।

तामें करैं प्रवृत्ति पाप उपजावते,

नमूं सिद्ध या बिन वचगुप्ति उपावते ॥ ५९ ॥

ओं ह्रीं अकृतवचनक्रोधसंरंभवाग्गुप्ताय नमः अर्घं ।

क्रोध अग्नि करि निज उपयोग जरावही,
वचन योग करि विधि संरंभ करावही ।
सो तुम त्याग विभाव सुभाव सरूप हो,
नमूं उरानन्द धार चिदानन्द रूप हो ॥ ६० ॥

ओं ह्रीं अकारितवचनक्रोधसंरंभस्वरूपाय नमः अर्घं ।

सोरठा—क्रोधित निज वच द्वार, मोदित हो संरंभमें ।
सो तुम भाव विडार, नमूं स्वानुभव लब्धियुत ॥ ६१ ॥

ओं ह्रीं नानुमोदितवचनक्रोधसंरंभस्वानुभवलब्धये अर्घं ।

दोहा—क्रोध सहित वाणी नहीं, समारंभ परवृत्त ।
स्वानुभूति रमणी रमण, नमूं सिद्ध कृतकृत्य ॥ ६२ ॥

ओं ह्रीं अकृतवचनक्रोधसमारंभस्वानुभूतिरमणाय नमः अर्घं ।

समारंभ क्रोधित जिये, प्रेरित पर वच द्वार ।

नमूं सिद्ध इस कर्म बिन, धर्मधरा साधार ॥ ६३ ॥

ओं ह्रीं अकारितवचनक्रोधसमारंभसाधारणधर्माय नमः अर्घं ।

समारंभ मय वचन करि, हर्षित हो युत क्रोध ।

नमूं सिद्ध या विन लहो, परम शांति सुख बोध ॥ ६४ ॥

ओं ह्रीं नानुमोदितवचनक्रोधसमारंभपरमशांताय नमः अर्घं।

छन्द मोतियादाम ।

वैर वचयोग धरै जिय रोष, करैं विधि भेद अरम्भ सदोष ।

तजो यह सिद्ध भये सुखकार, नमूं परमामृत तुष्ट अवार ।६५।

ओं ह्रीं अकृतवचनक्रोधारम्भपरमामृततुष्टाय नमः अर्घं ।

अकारित वैन सदा युत क्रोध, महा दुखकार अरम्भ अवोध

भये समरूप महारस धार, नमें हम सिद्ध लहैं भवपार ।६६

ओं ह्रीं अकारितवचनक्रोधारम्भसमरसाय नमः अर्घं ।

दोहा—नानुमोद आरम्भमें, क्रोध सहित वच द्वार ।

परम प्रीति निज आतमरति, नमूं सिद्ध सुखकार ॥ ६७ ॥

ओं ह्रीं नानुमोदितवचनक्रोधारंभपरमप्रीतये नमः अर्घं ।

अडिल्ल ।

वचन द्वार संरम्भ मानयुत जे करैं,
जोड़ करन उपकरण मानसो ऊचरैं ।
नाना विधि दुख भोग निजातमको हरैं,
नमूं सिद्ध या विन अविनश्वर पद धरैं ॥ ६८ ॥

ओं ह्रीं अकृतवचनमानसंरम्भ अविनश्वरधर्माय नमः अर्घं ।

मान प्रकृति करि उदै करावै ना कदा,
वचन न करि संरम्भ भेद वरणूं यदा ।
मन इन्द्रिय अव्यक्त स्वरूप अनूप हो,
नमूं सिद्ध गुण सागर स्वातम रूप हो ॥ ६९ ॥

ओं ह्रीं अकारितवचनमानसंरम्भअव्यक्तस्वरूपाय नमः अर्घं ।

सोरठा—नानुमोद वच योग, मान सहित संरम्भ मय।
दुर्लभ इन्द्री भोग, परम सिद्ध प्रणमूं सदा ॥ ७० ॥
ओं ह्रीं नानुमोदितवचनमानसंरम्भदुर्लभाय नमः अर्घं ।

चौपाई ।

समारंभ जिन वैन न द्वार, करत नहीं है मान संभार।
ज्ञान सहित चिन्मूरति सार, परम गम्य है निर आकार ॥७१॥
ओं ह्रीं अकृतवचनमानसमारंभपरमगम्यनिराकाराय नमः अर्घं ।

वचन प्रवृत्ति मानयुत ठान, समारंभ विधि नाहिं करान।
शुद्ध स्वभाव परम सुखकार, नमूं सिद्ध उर आनन्द धार ॥७२॥
ओं ह्रीं अकारितवचनमानसमारंभपरमस्वभावाय नमः अर्घं ।

वचन प्रवृत्ति मानयुत होय, समारंभ मय हर्षित सोय।
त्यागत एक रूप ठहराय, नमूं एकत्व गती सुखदाय ॥ ७३ ॥
ओं ह्रीं नानुमोदितवचनसमारंभएकत्वगताय नमः अर्घं ।

मानीजिय निज वचन उचार, वरतत है आरंभ मझार।
परमातमं हो तजि यह भाव, नमूं धर्मपति धर्म स्वभाव ॥ ७४ ॥
ओं ह्रीं अकृतवचनमानारंभपरमात्मधमराजधमस्वभावाय नमः अर्घं ।

सोरठा—मानी बोले बैन, परप्रेरण आरम्भमें।
सो त्यागो तुम ऐन, शाश्वत सुख आतम नमूं ॥ ७५ ॥
ओं ह्रीं अकारितवचनमानारम्भशाश्वतानन्दाय नमः अर्घं ।

हर्षित वचन उचार, मान सहित आरम्भमय।
सो तुम भाव विडार, निजानन्द रस घन नमूं ॥ ७६ ॥
ओं ह्रीं नानुमोदितवचनारंभमानअमृतपूरणाय नमः अर्घं ।

पद्धड़ी छन्द।

धरि कुटिल भाव जो कहत वैन, संरम्भ रूप पापिष्ट एन।
तुम धन्य धन्य यही रीति त्याग, हो वेहद धर्मस्वरूप भाग ।७७।
ओं ह्रीं अकृतवचनमायासंरंभअनंतधर्मैकरूपाय नमः अर्घं ।

मायायुत वचननको प्रयोग, संरंभ करावत अशुभ भोग ।
तुम यह कलंक नहीं धरो लेश, हो अमृत शशी पूजूं हमेश ।७८।

ओं ह्रीं अकारितवचनमायासंरंभअमृतचन्द्राय नमः अर्घं ।

वचमायायुत संरंभ कीन, सो पापरूप भावी मलीन ।
तिस त्याग अनेक गुणात्म रूप, राजत अनेक मूरत अनूप ।७९।

ओं ह्रीं नानुमोदितवचनमायासंरंभअनेकमूर्तये नमः अर्घं ।

तुम समारंभकी विधि विधान, नहीं करत कुटिलता भेद ठान ।
हो नित्य निरञ्जन भाव युक्त, मैं नमूं सदा संशय विमुक्त ॥८०॥

ओं ह्रीं अकृतवचनमायासमारंभनित्यनिरञ्जनस्वभावाय नमः अर्घं ।

दोहा—मायायुत निज बैनतैं, समारंभके हेत ।
नहीं प्रेरित परको नमूं, निजगुण धर्म समेत ॥ ८१ ॥

ओं ह्रीं अकारितवचनमायासमारंभआत्मैकधर्माय नमः अर्घं ।

मायाकरि बोलत नहीं, समारंभ हर्षाय ।
सूक्ष्म अतीन्द्रिय वृप नमूं, नमूं सिद्ध मन लाय ॥ ८२ ॥

ओं ह्रीं नानुमोदितवचनमायासमारंभपरमसूक्ष्माय नमः अर्घं ।

मायायुत आरंभकी, वचन प्रवृत्ति नशाय ।
नमूं अनन्त अवकाश गुण, ज्ञान द्वार सुखदाय ॥ ८३ ॥

ओं ह्रीं अकृतवचनमायारम्भअनन्तावकाशाय नमः अर्घं ।

मायायुत आरम्भ मय, मेट वचन उपदेश ।
भये अमल गुण ते नमूं, रागद्वेष नहीं लेश ॥ ८४ ॥

ओं ह्रीं अकारितवचनमायारम्भअमलगुणाय नमः अर्घं ।

मायायुत आरम्भ मय, मेट वचन आनन्द ।
भये अनन्त सुखी नमूं, सिद्ध सदा सुखवृन्द ॥ ८५ ॥

ओं ह्रीं नानुमोदितवचनमायारम्भनिरवधिसुखाय नमः अर्घं ।

अडिल्ल छन्द ।

जो परिग्रहको चाह लोभ सो मानिये, विधि विधान ठानत संरंभ बखानिये
वचन द्वार नहीं करे नमूं परमातमा, सब प्रत्यक्ष लखें व्यापक धर्मातमा ।

ओं ह्रीं अकृतवचनलोभसंरंभव्यापकधर्माय नमः अर्घं ।

वर्तावन संरंभ हेत परके तईं,
लोभ उदै करि वचन कहै हिंसामई ।
नमूं सिद्ध पद यह विपरीति सु जिन हरो,
सकल चराचर ज्ञानी व्यापक गुण वरो ॥ ८७ ॥
ओं ह्रीं अकारितवचनलोभसंरंभव्यापकगुणाय नमः अर्घं ।

लोभी वच संरंभ हर्ष परकाशनं,
नाना विधि सञ्चरे पाप दुख राशनं ।
सो तुम नाशत शाश्वत ध्रुवपद पाइयो,
नमूं अचल गुण सहित सिद्ध मन भाइयो ॥ ८८ ॥
ओं ह्रीं नानुमोदितवचनलोभसंरंभअचलाय नमः अर्घं ।

सोरठा—समारम्भके वेन, लोभ सहित पर आसतजि ।
तज निरलम्बी ऐन, नमूं सिद्ध उर धारिके ॥ ८९ ॥
ओं ह्रीं अकृतवचनलोभसमारंभनिरालंबाय नमः अर्घं ।

समारंभ उपदेश, लोभ उदै थिति मेटिकें ।

पायौ अचल स्वदेश, नमूं निराश्रय सिद्ध गुण ॥ १० ॥
ओं ह्रीं अकारितवचनलोभसमारम्भनिराश्रयाय नमः अर्घं ।
नानुमोद वच लोभ, समारंभ परवृत्तमें ।
नमूं तिन्हैं तजि क्षोभ, नित्य अखण्ड विराजतें ॥ ११ ॥
ओं ह्रीं नानुमोदितवचनलोभसमारम्भअखण्डाय नमः अर्घं ।
दोहा—लोभ सहित आरंभको, करत नहीं व्याख्यान ।
नूतन पंचम गति लहो, नमूं सिद्ध भगवान ॥ १२ ॥
ओंह्रीं अकृतवचनलोभारम्भपरीतावस्थाय नमः अर्घं ।
लोभ वचन आरंभको, कहत न परके हेत ।
समैसार परमातमा, नमत सदा सुख देत ॥ १३ ॥
ओं ह्रीं अकारितवचनलोभारम्भसमयसाराय नमः अर्घं ।
सोरठा—नानुमोद वच द्वार, लोभ सहित आरम्भमय ।
अजर अमर सुखदाय, नमूं निरन्तर सिद्धपद ॥ १४ ॥

ओं ह्रीं नानुमोदितवचनलोभारम्भनिरंतराय नमः अर्घं ।

अडिल्ल—क्रोधित रूप भयंकर हस्तादिक तनी,
करत समस्या सो संरम्भ प्रकाशनी ।
सो तुम नाशो काय गुप्ति करि यह तदा,
दृष्टि अगोचर काय गुप्ति प्रणमूं सदा ॥ ९५ ॥

ओं ह्रीं अकृतकायक्रोधसंरंभकायगुप्तये नमः अर्घं ।

सोरठा—पर प्रेरण निज काय, क्रोध सहित संरम्भ तज ।
चेतन मूरति पाय, शुद्ध काय प्रणमूं सदा ॥ ९६ ॥

ओं ह्रीं अकारितकायक्रोधसंरंभशुद्धकायाय नमः अर्घं ।

हर्षित शीश हिलाय, क्रोध उदय समरम्भमें ।
त्यागत भये अकाय, नमूं सिद्ध पद भावयुत ॥ ९७ ॥

ओं ह्रीं नानुमोदितकायक्रोधसंरंभ अकायाय नमः अर्घं ।

समारम्भ विधि मेटि, कायिक चेष्टा क्रोधकी ।
स्वै गुणपर्य समेट, भक्ति सहित प्रणमूं सदा ॥ ९८ ॥

ओं ह्रीं अकृतकायक्रोधसमारंभस्वान्वयगुणाय नमः अर्घं ।

दोहा—समारम्भ विधि क्रोध युत, तनसों नहीं कराय ।
नित प्रति रति निजभावमें, बंदूं तिनके पाइ ॥ ९९ ॥

ओं ह्रीं अकारितकायक्रोधसमारम्भभावरतये नमः अर्घं ।

समारम्भ सो कायसों, क्रोध सहित परसंस ।
स्वै अभिन्न पद पाइयो, नमूं त्याग सरवंस ॥ १०० ॥

ओं ह्रीं नानुमोदितकायक्रोधसमारम्भसान्वयधर्माय नमः अर्घं ।

क्रोधित कायारम्भ तजि, परसों रहित स्वभाव ।
शुद्ध द्रव्यमें रत नमूं, निज सुख सहज उपाव ॥ १०१ ॥

ओं ह्रीं अकृतकायक्रोधारंभशुद्धद्रव्यरताय नमः अर्घं ।

क्रोधित कायारम्भ नहीं, रंच प्रपंच कराय ।
पंच रूप संसार हनि, नमूं पंचमगति राइ ॥ १०२ ॥

ओं ह्रीं अकारितकायक्रोधारम्भसंसारछेदकाय नमः अर्घं ।

क्रोधित कायारम्भमें, हर्ष विषाद विडार ।

अनेकान्त वस्तुत्व गुण, धरै नमों पद सार ॥ १०३ ॥

ओं ह्रीं नानुमोदितकायक्रोधारम्भजैनधर्माय नमः अर्घं ।

मान सहित संरम्भकी, तनसो रचना त्याग ।
पर प्रवेश विन रूप निज, लियो नमूं बडभाग ॥ १०४ ॥

ओं ह्रीं अकृतमानकायसंरंभस्वरूपगुप्तये नमः अर्घं ।

मान उदय संरंभ विधि, तनसों नहीं कराय ।
निज कृत पर उपकार जिन, लियो नमूं तिन पाइ ॥ १०५ ॥

ओं ह्रीं अकारितमानकायसंरम्भनिजकृतये नमः अर्घं ।

मान सहित संरंभमें, तिनसों हर्ष न लेश ।
ध्यान योग निज ध्येय पद, भावित नमूं अशेश ॥ १०६ ॥

ओं ह्रीं नानुमोदितमानकायसंरंभध्येयभावाय नमः अर्घं ।

मदयुत तनसों रंच भी, समारंभ विधि नाहिं ।
परमाराधन योगपद, पायो प्रणमूं ताहि ॥ १०७ ॥

ओं ह्रीं अकृतमानकायसमारंभपरमाराधनाय नमः अर्घं ।

समारंभ निज कायसों, मदयुत नहीं कराय ।
ज्ञानानंद सुभाव युत, प्रणमूं शीश नवाय ॥ १०८ ॥
ओं ह्रीं अकारितमानकायसमारंभआनंदगुणाय नमः अर्घं ।

समारंभ मय विधि सहित, तनसों हर्ष न होय ।
निजानन्द नंदित तिन्हैं, नमूं सदा मद खोय ॥ १०९ ॥
ओं ह्रीं नानुमोदितमानकायसमारंभस्वानंदनंदिताय नमः अर्घं ।

अर्द्ध चौपाई ।

अकृत मानारम्भ शरीर, पर अनिंद्य वन्दूं धर धीर ॥ ११० ॥
ओं ह्रीं अकृतमानकायारम्भसंतोषाय नमः अर्घं ।

कायारम्भ अकारित मान, स्वसरूपरत वन्दूं तान ॥ १११(अ) ॥
ओं ह्रीं अकारितमानकायारम्भस्वसरूपरताय नमः अर्घं ।

मानारम्भ अनंदित काय, प्रणमूं विमल शुद्ध पर्याय ॥
ओं ह्रीं नानुमोदितकायारम्भशुद्धपर्यायाय नमः अर्घं ।

दोहा–मायायुत संरम्भ विधि, तनसों करत न आप।
गुप्त निजामृत रस लहै, नमूं तिन्हैं तज पाप॥ ११२॥
ओं ह्रीं अकृतकायमायासंरम्भअमृतगर्भाय नमः अर्घं।

मायायुत संरम्भ विधि, तनसों नहीं कराय।
मुख्य धर्म चैतन्यता, विनवै प्रणमूं पाय॥ ११३॥
ओं ह्रीं अकारितकायमायासंरम्भचैतन्यताय नमः अर्घं।

मायायुत संरम्भ मय, नानुमोदयुत काय।
वीतराग आनंद पद, समरस भावन भाय॥ ११४॥
ओं ह्रीं नानुमोदितकायमायासंरम्भसमरसीभावाय नमः अर्घं।

समारम्भ माया सहित, अकृत तन विच्छेद।
वन्ध दसा स्वै पर द्विविधि, नमत नसे भव खेद॥ ११५॥
ओं ह्रीं अकृतकायमायासमारम्भभवछेदकाय नमः अर्घं।

समारम्भ तन कुटिलसों, भए अकारित स्वौमि।

निज परिणति परिणमन विन, गुण स्वातंत्र नमामि ॥११६॥

ओं ह्रीं अकारितकायमायासमारम्भस्वातंत्रधर्माय नमः अर्घं ।

नानुमोदि तन कुटिलता, समारंभ विधि देव ।
गुण अनंत युत परिणमूं, धर्म समूही एव ॥ ११७ ॥

ओं ह्रीं नानुमोदितकायमायासमारम्भधर्मसमूहाय नमः अर्घं ।

मायायुत निज देहसों, नहीं आरम्भ करेह ।
परमातम सुख अक्ष विन, पायो बन्दूं तेह ॥ ११८ ॥

ओं ह्रीं अकृतकायमायारम्भपरमात्मसुखाय नमः अर्घं ।

मायारम्भ शरीर करि, परसों नहीं करान ।
निष्ठातम स्वस्थित नमूं, सिद्धराज गुणखान ॥ ११९ ॥

ओं ह्रीं अकारितकायमायारम्भनिष्ठात्मने नमः अर्घं ।

मायारम्भ शरीरसों, नानुमोद भगवन्त ।
दर्शज्ञानमय चेतना, सहित नमें नित सन्त ॥ १२० ॥

ओं ह्रीं नानुमोदितकायमायारम्भचेतनाय नमः अर्घं ।

अर्द्ध पद्धडी

संरम्भ चाह नहिं काययोग, चित परिणति नमि शुद्धोपयोग ।१२१

ओं ह्रीं अकृतकायलोभसंरम्भपरमचितपरिणताय नमः अर्घं ।

सरम्भ अकारित लोभ देह ।
निज आतम रत स्वसमेय तेह ॥ १२२ ॥

ओं ह्रीं अकारितकायलोभसंरम्भस्वसमयरताय नमः अर्घं ।

संरम्भ लोभ तन हष नाश ।
नमि व्यक्त धर्म केवल प्रकाश ॥ १२३ ॥

ॐ ह्रीं नानुमोदितकायलोभसंरम्भव्यक्तधर्माय नमः अर्घं ।

सोरठा—लोभी योग शरीर, समारम्भ विधि नाशके ।
ध्रुव आनन्द अतीव, पायो पूजूं सिद्धपद ॥ १२४ ॥

ओं ह्रीं अकृतकायलोभसमारम्भनित्यसुखाय नमः अर्घं ।

लोभ अकारित काय, समारम्भ निज कर्म हनि ।
पायो पद अकषाय, सिद्ध वर्ग पूजूं सदा ॥ १२५ ॥
ॐ ह्रीं अकारितकायलोभसमारम्भअकषायाय नमः अर्घ ।

पूरववत् नानन्द, परिग्रह इच्छा मेटिकें ।
पायो शौच स्वछन्द, नमूं सिद्धपद भक्ति युत ॥ १२६ ॥
ओं ह्रीं नानुमोदितकायलोभसमारम्भशौचगुणाय नमः अर्घ ।

दोहा--काय द्वार आरम्भकी, लोभ उदय विधि नाश ।
नमो चिदातम पद लियो, शुद्ध ज्ञान परकाश ॥ १२७ ॥
ओं ह्रीं अकृतलोभारम्भचिदात्मने नमः अर्घ ।

काय द्वार आरम्भ विधि, लोभ उदय न कराय ।
निज अवलम्बित पद लियो, नमूं सदा तिन पाइ ॥ १२८ ॥
ॐ ह्रीं अकारितकायलोभनिरालंबाय नमः अर्घ ।

लोभी तन आरम्भमें, आनंद रीती मेंट ।

नमूं सिद्ध पद पाइयो, निज आतम गुण श्रेष्ठ ॥ १२९ ॥

ओं ह्रीं नानुमोदितकायलोभारम्भआत्मने नमः अर्घं ।

सवैया इकतीसा—जेते कछु पुद्गल परमाणु शब्दरूप,
भये हैं अतीत काल आगे होनहार हैं ।
तिनको अनन्त गुण करत अनन्तवार,
ऐसे महाराशी रूप धरैं विसतार हैं ॥
सब ही एकत्र होय सिद्ध परमातमके,
मानो गुण गण उचरन अर्थ धार है ।
तौभी इक समयके अनन्त भाग आनंदको
कहत न कहैं हम कौन परकार हैं ॥

ओं ह्रीं अष्टाविंशत्यधिकशतगुणयुक्तसिद्धेभ्यो नमः अर्घं ।

१०८ वार जाप देना चाहिये ।

अथ जयमाला ।

दोहा—शिवगुण सरधा धार उर, भक्ति भाव है सार ।
केवल निज आनंद करि, करूं सुजस उच्चार ॥

पद्धड़ी छन्द ।

जय मदन कदन मन करण नाश, जय शांतिरूप निज सुख विलास
जय कपट सुभट पट करन सूर, जय लोभ क्षोभ मद दम्भ चूर ॥१
पर परणति सो अत्यन्त भिन्न, निज परिणति सो अति ही अभिन्न ।
अत्यन्त विमल सब ही विशेष, मल लेश शोध राखो न शेष ॥ २ ॥
मणि दीप सार निर्विघन ज्योति, स्वाभाविक नित्य उद्योत होत ।
त्रैलोक्य शिखर राजत अखण्ड, सम्पूरण द्युति प्रगटी प्रचण्ड ॥३॥
मुनि मन मन्दिरको अन्धकार, तिस ही प्रकाशसौं नशात सार ।
सो सुलभ रूप पावै निजार्थ, जिस कारण भव भव भ्रमें व्यर्थ ॥४॥

जो कल्प कालमें होत सिद्ध, तुम छिन ध्यावत लहिये प्रसिद्ध।
भवि पतितनको उद्धार हेत, हस्तावलम्ब तुम नाम देत॥ ५॥
तुम गुण सुमिरण सागर अथाह, गणधर शरीर नहीं पार पाह।
जो भवदधि पार अभव्य रास, पावे न वृथा उद्यम प्रयास॥ ६॥
जिन मुख द्रहसों निकसो अभंग, अति वेग रूप सिद्धान्त गंग।
नय सप्त भंग कल्लोल मान, तिहुँ लोक वही धारा प्रमान॥ ७॥
सो द्वादशांग वाणी विशाल, ता सुनत पढत आनंद विशाल॥
याते जगमें तीरथ सुधाम, कहिलायो है सत्यार्थ नाम॥८॥
सो तुम ही सो हें शोभनीक, नातर जल सम जु वहै सु ठीक।
निजपर आतम हित आत्म भूत, जबसे है जब उतपत्ति सूत॥ ९॥
ज्यों महाशीत ही हिम प्रवाह. है मेटन समरथ अगिन दाह।
त्यों आप महामंगल स्वरूप, पर विघन विनाशन सहज रूप॥ १०॥

है सन्त दीन तुम भक्ति लीन, सो निश्चय पावैं पद प्रवीण।
तातैं मन वच तन भाव धार, तुम सिद्धनकूं मम नमस्कार ॥११

ओं ह्रीं अर्हं अष्टाविंशत्यधिकशतदलोपरिस्थितसिद्धेभ्यो नमः अर्घं ।

दोहा—जो तुम ध्यावें भावसों, ते पावें निज भाव।
अगिन पाक संयोग करि, शुद्ध सुवर्ण उपाय ॥ १२ ॥

इत्याशीर्वादः ।

इति पञ्चमी पूजा सम्पूर्ण ।

अथ श्री षष्ठी पूजा २५६ गुण सहित ।

अथ षट्पंचाशत् द्विशत २५६ दलोपरि षष्ठी पूजा लिख्यते ।

ऊरध अधो सरेफ बिन्दु हंकार बिराजै,
अकारादि स्वर लिप्त कर्णिका अन्त सु छाजै ।
वर्गनि पूरित वसुदल अम्बुज तत्त्व सन्धि धर,
अग्र भागमें मंत्र अनाहत सोहत अतिवर ॥

फुनि अन्त ही वेढ्यो परम सुर, ध्यावत ही अरि नागको ।
है केहरि सम पूजन निमित, सिद्धचक्र मंगल करो ॥ १ ॥

ओं ह्रीं श्री सिद्धपरमेष्ठिने २५६ गुण सहित विराजमान अत्रावतरावतर संवौषट् आह्वाननं। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीक०

दोहा—सूक्ष्मादिक गुण सहित हैं, कर्म रहित निररोग ।
सकल सिद्ध सो थापहूं, मिटे उपद्रव योग ॥ २ ॥

इति यंत्रस्थापनं ।

अथाष्टक ।

गीताछन्द ।

अति नम्रता तिहुं योगमें निज भक्ति निर्मल भावहीं ।
यह गुप्त जल प्रत्यक्ष निर्मल सलिल तीरथ लावहीं ॥
यह उभय द्रव्य संयोग त्रिभुवन पूज्य पूज रचावहीं ।
द्वै अर्द्धशत षट अधिक नाम उचार विरद सु गावहीं ॥

ओं ह्रीं श्री सिद्धपरमेष्ठिने २५६ गुण सहित श्री समत्तणाण दंसण वीर्य सुहम-तहेव अवग्गहणं अगुरुलघुमव्वाबाहं जन्मजरारोगविनाशनाय जलं ॥ १ ॥

अति वास विषय न वासनायुत मलय शील सुभावहीं,
अरु चन्दनादि सुगन्ध द्रव्य मनोग्य प्राशुक लावहीं ।
यह उभय० ॥ द्वै अर्द्ध शत षट० ॥

ओं ह्रीं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने २५६ गुण सहित श्री समत्तणाणदंसण वीर्य सुहम-तहेव अवग्गहणं अगुरुलघुमव्वाबाहं संसारतापविनाशनाय चन्दनं ॥ २ ॥

परिणाम धवल सुवर्ण अक्षत मलिन मन न लगावहीं,
तिस सार अक्षत अखय स्वच्छ सुवास पुंज बनावहीं ।
यह उभय द्रव्य संजोग त्रिभुवन पूज्य पूज रचावहीं,
द्वै अर्ध शत षट अधिक नाम उचार विरद सु गावहीं ॥

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने दोसेछप्पन गुण सहित विराजमान श्रीसमत्तणाणदंसण वीर्य सुहमत्तहेव अवग्गहणं अगुरुलघुमव्वाबाहं अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा ।

मन पाग भक्त्यनुराग आनंद तान मालपुरावही ।
तिस भाग कुसुम सुहाग अर सुर नागबास सु लावही ॥
यह उभय० । ह्रौं अर्द्ध शत षट० ॥

ओं ह्रीं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने दोसैछप्पन गुण सहित श्री समत्तणाण दंसण वीर्य सुहमत्तहेनअवग्गहणं अगुरुलघुमव्वावाहं कामवाणविनाशनाय पुष्पं निर्वपामि स्वाहा ।

जिन भक्ति रसमें तृप्तता मन आन स्वाद न चावही ।
अंतर चरू वाहिज मनोहर रसिक नेवज लावही ॥
यह उभय० । ह्रौं अर्द्ध शत षट० ॥

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने २५६ गुण सहित श्री समत्तणाण दंसण वीर्य सुहमत्तहेन अवग्गहणं अगुरुलघुमव्वावाहं क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं नि० ॥ ५ ॥

सरधान दीप प्रदीप्त अंतर मोह तिमिर नशावही ।
मणिदीप जगमग ज्योति तेज सुभास भेंट धरावही ॥
यह उभय० । ह्रौं अर्द्ध शत षट० ॥

ओं ह्रीं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने २५६ गुण सहित श्री समत्तणाण दंसण वीर्य सुहमत्तहेव अवग्गहणं अगुरुलघुमव्वावाहं मोहांधकारविनाशनाय दीपं नि० ॥ ६ ॥

आनन्द धर्म प्रभावना मन घटा धूम्र सु छावहीं ।
गंधित दरव शुभ घ्राण प्रिय अति अग्नि संग जरावहीं ॥
यह उभय द्रव्य संयोग त्रिभुवन पूज्य पूज रचावही द्वै अर्घ्य० ।

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने २५६ गुणसहित श्री समत्तणाण दंसण वीर्य सुहमत्तहेव अवग्गहणं अगुरुलघुमव्वावाहं अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ७ ॥

शुभ चिंतवन फल विविध रस युत भक्ति तरु उपजावही ।
*रसना लुभावन कल्पतरुके सुर असुर मन भावही ॥
यह उभय द्रव्य संयोग त्रिभुवन पूज्य पूज रचावही द्वै अर्घ्य० ॥

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने २५६ गुणसहित श्री समत्तणाण दंसण वीर्य सुहमत्तहेव अवग्गहणं अगुरुलघुमव्वावाहं मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ८ ॥

---

* "केला नरंगी बिल्व आम्र सु चारु कमरख लावही" ऐसा पाठ 'क' प्रतिमें है ।

समकित विमल वसु अंग युत करि अर्घ अन्तर भावही ।
वसु द्रव अर्घ बनाय उत्तम देहु हर्ष उपावही ।
यह उभय द्रव्य संयोग त्रिभुवन पूज्य पूज रचावही ।
द्वै अर्द्ध शत पट् अधिक नाम उचार विरद सुगावही ॥

ओं ह्रीं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने २५६ गुणसहित श्री समत्तणाण दंसण वीर्य सुहमत्त-हेव अवग्गहणं अगुरुलघुमव्वाबाहं अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

गीता छन्द--निर्मल सलिल शुभ वास चंदन, धवल अक्षत युत अनी ।
शुभ पुष्प मधुकर नित रमें, चरु प्रचुर स्वादसु विधि घनी ॥
वर दीपमाल उजाल धूपायन रसायन फल भले ।
करि अर्घ सिद्ध समूह पूजत, कर्मदल सब दलमलै ॥
ते कर्म वर्त नशाय युगपति, ज्ञान निर्मल रूप है ।
दुख जन्म टाल अपार गुण, सूक्षम सरूप अनूप है ॥
कर्माष्ट विन त्रैलोक्य पूज्य, अछेद शिव कमलापती ।

मुनि ध्येय सेय अभेय चाहूं. गुण गेह द्यो हम शुभमतो ।१।

ओं ह्रीं णमो सिद्धाणं सिद्धचक्राधिपतये संमत्तणाणादि अठगुणाणं पूर्णार्घं।

अथ २५६ गुण सहित नामावली अर्घं ।

चौपाई:--मिथ्यातम कारण दुखकारा, नित्य निरंजन विधि संसारा।
तिस हनि समरथ अतिशय रूपा, केवल पाय नमूं शिव भूपा ॥१॥

ॐ ह्रीं चिरतरसंसारकारणज्ञाननिर्द्धतोद्भूतकेवलज्ञानातिशयसंपन्नाय सिद्धाधिपतये नमः अर्घं ।

मन इंद्रियनिमित मति ज्ञाना, योग देश तिष्ठत पद जाना।
क्षय उपशम आवर्ण विनाशो, नमो सिद्ध स्वज्ञान प्रकाशो ॥ २ ॥

ओं ह्रीं अभिनिबोधवारकविनाशकाय अर्घं ।

द्वादश अंगरूप अज्ञाना, श्रुत आवरणी भेद वखाना।
क्षय उपशम आवर्ण विनाशो, नमो सिद्ध स्वज्ञान प्रकाशो ॥ ३ ॥

ओं ह्रीं द्वादशांगश्रुतावरणीकर्मविमुक्ताय नमः अर्घं ।
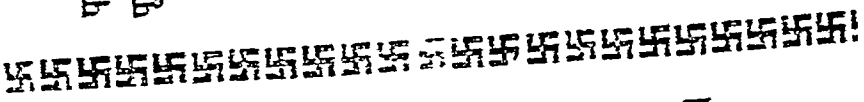
हे असंख्य लोकावधि जेते, अवधिज्ञानके भेद सु तेते।
क्षय उपशम आवर्ण विनाशो, नमो सिद्ध स्वज्ञान प्रकाशो ॥ ४ ॥

ओं ह्रीं असंख्यभेदलोक अवधिज्ञानावरणीविमुक्ताय नमः अर्घं ।

हे असंख्य परमान प्रमाना, मनपर्ययके भेद बखाना।
क्षय उपशम आवर्ण विनाशो, नमो सिद्ध स्वज्ञान प्रकाशो ॥ ५ ॥

ओं ह्रीं असंख्यप्रकारमनःपर्ययज्ञानावरणीकर्मविमुक्ताय नमः अर्घं ।

निखिल रूप गुणपर्यय ज्ञानं, सत स्वरूप प्रत्यक्ष प्रमानं।
केवल आवर्णी विधि नाशो, नमो सिद्ध स्वज्ञान प्रकाशो ॥ ६ ॥

ओं ह्रीं निखिलरूपगुणपर्यायबोधककेवलज्ञानावरणविमुक्ताय नमः अर्घं ।

द्वारपती भूपतिके ताईं, रोक रहे देखन दे नाहीं।
सोई दर्शनावरण विनाशो, नमो सिद्ध स्वज्ञान प्रकाशो ॥ ७ ॥

ओं ह्रीं सकलदर्शनावरणीकर्मविनाशकाय नमः अर्घं ।

मूर्तीक पदको प्रतिभासन, नेत्र द्वार होवे परकाशन।
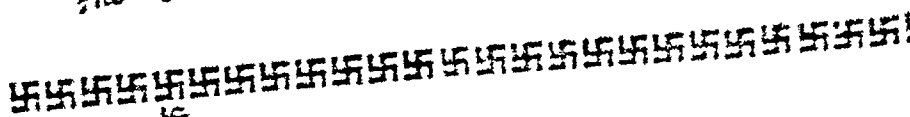
चक्षु दर्शनावरण विनाशो, नमो सिद्ध स्वज्ञान प्रकाशो ॥ ८ ॥

ओं ह्रीं चक्षुर्दर्शनावरणकर्मरहिताय नमः अर्घं ।

दृगविन अन्य इन्द्री मन द्वारे, वस्तुरूप सामान्य उघारे ।
अदृग दर्शनावरणविनाशो, नमो सिद्ध स्वज्ञान प्रकाशो ॥ ९ ॥

ओं ह्रीं अचक्षुर्दर्शनावरणकर्मरहिताय नमः अर्घं ।

देशकाल द्रव भाव प्रमानं, अवधि दर्श होवे सव ठानं ।
अवधि दर्श आवरण विनाशो, नमो सिद्ध स्वज्ञान प्रकाशो ॥ १० ॥

ओं ह्रीं अवधिदर्शनावरणरहिताय नमः अर्घं ।

विन मर्याद सकल तिहु काल, होय प्रगट घटपट तिहं हाल ।
केवल दर्शनावरण विनाशो, नमो सिद्ध स्वज्ञान प्रकाशो ॥ ११ ॥

ओं ह्रीं केवलदर्शनावरणरहिताय नमः अर्घं ।

बैठे खड़ै पड़ै घुम्मरिया, देखे नहीं निद्राकी विरिया ।
निद्रा दर्शनावरण विनाशो, नमो सिद्ध स्वज्ञान प्रकाशो ॥ १२ ॥

ओं ह्रीं निद्राकर्मरहिताय नमः अर्घं ।

सावधान कितनी की जावे, रंच नेत्र उघड़न नहीं पावे ।
निद्रा निद्रा कर्म विनाशो, नमो सिद्ध स्वज्ञान प्रकाशो ॥ १३ ॥

ॐ ह्रीं निद्रानिद्राकर्मरहिताय नमः अर्घं ।

मंदरूप निद्राका आना, अवलोके जाग्रतहि समाना ।
प्रचला दर्शनावरण विनाशो, नमो सिद्ध स्वज्ञान प्रकाशो ॥ १४ ॥

ॐ ह्रीं प्रचलाकर्मरहिताय नमः अर्घं ।

मुखसों लार बहै अति भारी, हरत पाद कंपत दुखकारी ।
प्रचला प्रचला वर्ण विनाशो, नमो सिद्ध स्वज्ञान प्रकाशो ॥ १५ ॥

ओं ह्रीं प्रचलाप्रचलाकर्मरहिताय नमः अर्घं ।

सोता हुआ करै सब काजा, प्रगटावै प्राकर्म समाजा ।
यह स्त्यानगृद्धि विधि नाशो, नमो सिद्ध स्वज्ञान प्रकाशो ॥ १६॥

ओं ह्रीं स्त्यानगृद्धिकर्मरहिताय नमः अर्घं ।

जे पदार्थ है इन्द्रीय योग, ते सब वेदे जिय निज जोग।
सोई नाम वेदनी होई, नमूं सिद्ध तुम नासो सोई ॥ १७।

ओं ह्रीं वेदनीकर्मरहिताय नमः अर्घं ।

रतिके उदय भोग सुखकार, भोगै जिय शुभ विविध प्रकार
साता भेद वेदनी होय, नमूं सिद्ध तुम नाशो सोय ॥ १८ ॥

ओं ह्रीं सातावेदनीकर्मरहिताय नमः अर्घं ।

अरति उदय जिय इन्द्री द्वार, विषयभोग वेदे दुखकार।
एही भेद असाता होय, नमूं सिद्ध तुम नाशो सोय ॥ १९ ॥

ओं ह्रीं असातावेदनीकर्मरहिताय नमः अर्घं ।

ज्यों असावधानी मदपान, करत मोह विधितें सो जान।
ता विधि करि निज लाभ न होय, नमूं सिद्ध तुम नाशो सोय॥

ओं ह्रीं मोहकर्मरहिताय नमः अर्घं ।

जाके उदय तत्त्व परतीत, सत्य रूप नहीं हो विपरीत।

पंच भेद मिथ्यात निवार, भये, सिद्धध प्रणमूं सुखकार ॥२१॥

ओं ह्रीं मिथ्याकर्मविनाशनाय नमः अर्घं ।

प्रथमोपशम समकित जव गले, मिथ्या समकित दोनों मिले।
मिश्र भेद मिथ्यात निवार, भये सिद्धध प्रणमूं सुखकार ॥ २२॥

ओं ह्रीं सम्यक्मिथ्यात्वकर्मरहिताय अर्घं ।

दर्शनमें कुछ मल उपजाय, करे समल नहिं मूल नसाय ।
समय प्रकृति मिथ्यात निवार, भये सिद्धध प्रणमूं सुखकार ॥२३

ओं ह्रीं सम्यक्त्वप्रकृतिमिथ्यात्वरहिताय नमः अर्घं ।

धर्म मार्गमें उपजे रोष, उदय भये मिथ्यात सदोष ।
यह अनन्त अनुवंध निवार, भये सिद्ध प्रणमूं सुखकार ॥२४॥

ओं ह्रीं अनन्तानुबन्धीक्रोधकर्मरहिताय नमः अर्घं ।

देव धर्म गुरुसों अभिमान, उदय भये मिथ्या सरधान ।
यह अनन्त अनुवंध निवार, भये सिद्धध प्रणमूं सुखकार ॥ २५ ॥

ओं ह्रीं अनन्तानुबन्धीमानकर्मरहिताय नमः अर्घ ।

छलसों धर्म रीति दलमलै, उदय होय मिथ्या जब चलै ।
यह अनन्त अनुबन्ध निवार, प्रणमूं सिद्ध महासुखकार ॥ २६ ॥

ओं ह्रीं अनन्तानुबन्धीमायाकर्मरहिताय नमः अर्घ ।

लोभ उदय निर्मालय दर्व, भक्षे महानिंद मति सर्व ।
यह अनन्त अनुबन्ध निवार, भये सिद्ध प्रणमूं सुखकार ॥ २७ ॥

ओं ह्रीं अनन्तानुबन्धीलोभकमरहिताय नमः अर्घ ।

सुन्दरी छन्द ।

क्रोध करि अणुव्रत नहिं लीजिय, चरित मोह प्रकृति सु भनीजिए ।
है अप्रत्याख्यानी कर्म सो, भये सिद्ध नमूं तिन नासियो ॥ २८ ॥

ओं ह्रीं अप्रत्याख्यानावरणक्रोधकर्मरहिताय नमः अर्घ ।

मान करि अणुव्रत न हो कदा, रहै अव्रत युत दर्शन सदा ।
है अप्रत्याख्यानी कर्म सो, भये सिद्ध नमूं तिन नासियो ॥ २९ ॥

ओं ह्रीं अप्रत्याख्यानावरणमानरहिताय नमः अर्घ ।

देशव्रती श्रावक नहीं होत है, वक्रताको जहं उद्योत है।
है प्रत्याख्यानी कर्म सो, भये सिद्ध नमूं तिन नासियो ॥३०॥
ओं ह्रीं अप्रत्याख्यानावरणमायाविमुक्ताय नमः अर्घं।

मोह लोभ चरित जै जिय वसे, देशव्रत श्रावक नहीं ते लसै।
है अप्रत्याख्यानी कर्म सो, भये सिद्ध नमूं तिन नासियो॥३१॥
ओं ह्रीं अप्रत्याख्यानावरणलोभविमुक्ताय नमः अर्घं।

अडिल—प्रत्याख्यानी क्रोध सहित जे आचरे,
देशव्रती सो सकल व्रत नाहीं धरें।
चारित मोह सु प्रकृति रूप तिह नाम है,
नाश कियो मैं नमूं सिद्ध शिवधाम है॥ ३२॥
ओं ह्रीं प्रत्याख्यानीक्रोधविमुक्ताय नमः अर्घं।

प्रत्याख्यानभिमान महान न शक्ति है, जास उदय पूरणसंयम अव्यक्त है।
चारित मोह सु प्रकृति रूप तिह नाम है, नाश कियो० ॥३३॥

ओं ह्रीं प्रत्याख्यानावरणमानरहिताय नमः अर्घं ।

प्रत्याख्यानी माया मुनि पदकों हते, श्रावक वृत पूरण नहीं खण्डे जासतें ।
चारित मोह सु प्रकृति रूप तिह नाम है, नाश कियो० ॥ ३४ ॥

ओं ह्रीं प्रत्याख्यानावरणमायारहिताय नमः अर्घं ।

श्रावक पदमें जास लोभको वास है । प्रत्याख्यानी श्रुतमें संज्ञा तास है ।
चारित मोह सु प्रकृति रूप तिह नाम है, नाश कियो० ॥ ३५ ॥

ओं ह्रीं प्रत्याख्यानावरणलोभरहिताय नमः अर्घं ।

भुजगप्रयात छन्द ।

यथाख्यात चारित्रको नाश कारा, महाव्रत्तको जासमें हो उजारा ।
यही संज्वलन क्रोध सिद्धांत गाया, नमूं सिद्धके चरण ताको नसाया ।३६

ओं ह्रीं संज्वलनावरणक्रोधरहिताय नमः अर्घं ।

रहै संज्वलन रूप उद्योत जैते, न हो सर्वथा शुद्धता भाव तेते ।
यही संज्वलन मान सिद्धांत गाया, नमूं सिद्धके चरण ताको नशाया

ओं ह्रीं संज्वलनमानरहिताय नमः अर्घं ।

वहै संज्वलनकी जहां मंद धारा, लहै है तहां शुक्लध्यानी उभारा।
यही संज्वलन वक्र सिद्धांत गाया, नमूं सिद्धके चरण ताको नसाया
ओं ह्रीं संज्वलनमायारहिताय नमः अर्घं ।

जहां संज्वलन लोभ है रंच नाही, निजानन्दको वास होवे तहांही।
यही संज्वलन लोभ सिद्धांत गाया, नमूं सिद्धके चरण ताको नसाया।
ओं ह्रीं संज्वलनलोभरहिताय नमः अर्घं ।

मोदक छन्द ।

जा करि हास्य भाव जुत होतहिं, हास्य किये परको यह पानहिं।
सो तुम नाश कियो जगनाथहिं, शीश नमूं तुमको धरि हाथहिं।
ओं ह्रीं हास्यकर्मरहिताय नमः अर्घं ।

प्रीत करै पर सो रति मानहिं, सो रति भेद विधी तिस जानहिं।
सो तुम नाश कियो जगनाथहिं, शीश नमूं तुमको धरि हाथहिं।
ओं ह्रीं रतिकर्मरहिताय नमः अर्घं ।

जो परसों परसन्न न हो मन, आरति रूप रहै निज आनन।
सो तुम नाश कियो जगनाथहिं, शीस नमूं तुम को धरि हाथहिं

ओं ह्रीं अरतिकर्मरहिताय नमः अर्घं ।

जा करि पावत इष्ट वियोगहिं, खेदमई परिणाम सु शोगहिं।
सो तुम नाश कियो जगनाथहिं, शीस नमूं तुमको धरि हाथहिं।

ओं ह्रीं शोककर्मरहिताय नमः अर्घं ।

हो उद्वेग उच्चाटन रूपहिं, मन तन कंपित होत अरूपहिं।
सो तुम नाश कियो जगनाथहिं, शीस नमूं तुमको धरि हाथहिं।

ओं ह्रीं भयकर्मर।हिताय नमः अर्घं ।

सवैया—जो परको अपराध उघारत, जो अपनो कछु दोष न जाने,
जो परके गुण औगुण जानत, जो अपने गुणको प्रगटाने।
सो जिनराज बखान जुगुप्सित, है जियनो विधिके वश ऐसो,
हे भगवंत! नमूं तुमको तुम, जीति लियो छिनमें अरि तैसो।

ओं ह्रीं जुगुप्साकर्मरहिताय नमः अर्घं ।

जो नर नारि रमावनकी, निजसों अभिलाष धरै मनमाहीं,
सो अति ही परकाश हिये नित, कामकी दाह मिटै छिन नाहीं।
सो जिनराज वखान नपुंसक, वेद हनो विधिके वश ऐसो,
हे भगवंत ! नमूं तुमको तुम जीति लियो छिनमें अरि तैसो ॥

ओं ह्रीं नपुंसकवेदरहिताय नमः अर्घं ।

जो तिय संग रमें विधि यो मन, औरनसे कछु आनन्द माने।
किंचित् काम जगै उरमें नित, शांति सुभावनकी शुधि ठाने ॥
सो जिनराज वखानत है नर, वेद हनो विधिके वश ऐसो।
हे भगवन्त ! नमूं तुमको तुम, जीत लियो छिनमें अरि तैसो ॥

ओं ह्रीं पुरुषवेदरहिताय नमः अर्घं ।

जो नर संग रमें सुख मानत, अन्तर गूढ न जानत कोई।
हाव विलास हि लाज धरे मन, आतुरता करि तृप्त न होई ॥

सो जिनराज वखानत है तिय, वेद हनो विधिके वश ऐसो ।
हे भगवन्त नमूं तुमको तुम, जीति लियो छिनमें अर तैसो ॥४८

ओं ह्रीं स्त्रीवेदरहिताय नमः अर्घं ।

वसंततिलका छन्द ।

आयु प्रमाण दृढ बन्धन और नाहीं, गत्यानुसार थिति पूरण कर्ण नाहीं ।
सोई विनाश कीनो तुम देव नाथा, वंदूं तुम्हें तरण कारण जोर हाथा ॥

ओं ह्रीं आयुकर्मरहिताय नमः अर्घं ।

जो है कलेश अवधी सब होत जासो, तेतीस सागर रहै थिति नर्कतासो ।
सोई विनाश कीनो तुम देव नाथा, वंदूं तुम्हें तरण कारण जोर हाथा ॥

ओं ह्रीं नरकायुरहिताय नमः अर्घं ।

याही प्रकार जितने दिन देव देही, नासै अकाल नहि जे सुर आयुसे ही ।
सोई विनाश कीनो तुम देव नाथा, वंदूं तुम्हें तरण कारण जोर हाथा ॥

ओं ह्रीं देवायुरहिताय नमः अर्घं ।

जासो करै त्रिजगकी थिति आउ पूरी, सोई कहो त्रिजग आयु महालघूरी ।

सोई विनाश कीनो तुम देव नाथा, वंदू तुम्हें तरण कारण जोर हाथा। ५२।

ओं ह्रीं तिर्यंचायुरहिताय नमः अर्घ्यं ।

जेते नरायु विधि दे रस आप जाको, ते ते प्रजाय नर रूप भुगाय ताको ।
सोई विनाश कीनों तुम देव नाथा, वंदू तुम्हें तरण कारण जोर हाथा ।।

ओं ह्रीं मनुष्यायुरहिताय नमः अर्घ्यं ।

पद्धड़ी छन्द—जो करे जीवको बहु प्रकार, ज्यों चित्रकार चित्राम सार ।
सो नाम कर्म तुम नाश कीन, मैं नमूं सदा उर भक्ति लीन ५४

ओं ह्रीं नामकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं ।

जासे उपजे तिर्यंच जीव, रहे ज्ञान हीन निर्मल सदीव ।
सो तिर्यंचगति तुम नाश कीन ।। मैं नमूं सदा० ।। ५५ ।।

ओं ह्रीं तिर्यंचगतिरहिताय नमः अर्घ्यं ।

जा उदय नारकी देह पाय, नाना दुख भोगे नर्क जाय ।
सो नर्कगती तुम नाश कीन ।। मैं नमूं सदा० ।। ५६ ।।

ओं ह्रीं नर्कगतिरहिताय नमः अर्घ्यं ।

चउ विधि सुरपद जासों लहाय, विषयातुर नित भागे उपाय ।
सो देवगती तुम नाश कीन ॥ मैं नमूं० ॥ ५७ ॥
ओं ह्रीं देवगतिकर्मरहिताय नमः अर्घं ।

जा उदय भये मानुष्य होत, लहै नीच ऊंच ताका उद्योत ।
सो मानुष गति तुम नाश कीन, मैं नमूं सदा उर भक्ति लीन ।५८
ओं ह्रीं मनुष्यगतिरहिताय नमः अर्घं ।

कामिनीमोहन छन्द ।

एक ही भाव सामान्यका पावना, जीवकी जातिका भेद सो गावना ॥
होत जो थावरा एक इंद्री कहो, पूज हूं सिद्धके चरण ताको दहो ॥
ओं ह्रीं एकइन्द्रीजातिरहिताय नमः अर्घं ।

फर्सके साथमें जीभ जो आमिलें, पायसों आपने आप भूपर चलें ।
गामिनी कर्म सो दोय इन्द्री कहो, पूजहूं सिद्धके चरण ताको दहो ॥
ओं ह्रीं दोइन्द्रीजातिरहिताय नमः अर्घं ।

१२९

नाक हो और दो आदिके जोड़में, हो उदय चालना योगसों दोलमें।
गामिनी कर्म सो तीन इन्द्री कहो, पूजहूं सिद्धके चरण ताको दहो ६१

ओं ह्रीं त्रीइन्द्रियजातिरहिताय नमः अर्घ ।

आंख हो नाक हो जीभ हो फर्श हो, कानके शब्दका ज्ञान जामें न हो।
गामिनी कर्म सो चार इन्द्री कहो, पूजहूं० ॥ ६२ ॥

ओं ह्रीं चतुरिंद्रियजातिरहिताय नमः अर्घं ।

कान भी आमिलै जीभ जा जातिमें, हो असंज्ञी सुसंज्ञी यह दो भांतिमें।
गामिनी कर्मकी पञ्च इन्द्री कहो, पूजहूं० ॥ ६३ ॥

ओं ह्रीं पंचेन्द्रियजातिरहिताय नमः अर्घं ।

छन्द लावनी—हो उदार जो प्रगट उदारिक, नाम कर्मकी प्रकृति भनी,
लहै औदारिक देह जीव तिस, कर्म प्रकृतिके उदय तनी।
भये अकाय अमूरति आनन्द, पुंज चिदातम ज्योति घनी,
नमूं तुम्है कर जोर युगल तुम, सकल रोगथल काय हनी ।६४।

ओं ह्रीं औदारिकशरीरविमुक्ताय नमः अर्घं ।

निज शरीरको अनिमादिक करि, बहु प्रकार प्रणमाय नरे,
वैक्रिय तन कहलावे है यह, देव नारकी मूल धरे।
भए अकाय अमूरति आनन्द-पुंज चिदातम ज्योति घनी,
नमूं तुम्हें करजोर युगल तुम, सकल रोगथल काय हनी ॥६५॥

ओं ह्रीं वैक्रियिकशरीरविमुक्ताय नमः अर्घं।

धवल वर्ण शुभ योगी संशय-हरण आहारकका पुतला,
जो प्रमत्त गुणथानक मुनिके, देह औदारिकसों निकला
भए अकाय० ॥ नमूं तुम्हें० ॥ ६६॥

ॐ ह्रीं आहारकशरीररहिताय नमः अर्घं।

पुद्गलीक तन कर्म वर्गणा, कारमाण परदीप्त करण,
तैजस नाम शरीर शास्त्रमें, गावत हैं नहिं तेज वरण।
भए अकाय० ॥ नमूं तुम्हें० ॥ ६७॥

ओं ह्रीं तैजसशरीररहिताय नमः अर्घ।

पुद्गलीक वरगणा जीवसों, एक क्षेत्र अवगाही है,

नूतन कारण करण मूल तन, कारमाण तिस नाम कहैं।
भए अकाय० ॥ नमूं तुम्हैं० ॥६८॥

ओं ह्रीं कारमाणशरीररहिताय नमः अर्घं ।

इन्द्रवज्रा छन्द ।

जेते प्रदेशा तन बीच आवैं, सारे मिलैं जोड़ न छिद्र पावें ।
संघात नामा जिय देह जाना, पूजूं तुम्हैं सिद्ध यह कर्म भानो।६९।

ओं ह्रीं औदारिकसंघातरहिताय नमः अर्घं ।

ऐसे प्रकारा तनमें अहारा, संधी मिलाया करवेतसारा ।
संघात नामा जिय देह जानो, पूजूं तुम्हैं सिद्ध यह कर्म भानो ।७०।

ओं ह्रीं आहारकसंघातरहिताय नमः अर्घं ।

वैक्रियके जोड़ जो होत नाहीं, संघातनामा जिन बैन माहीं ।
संघात नामा जिय देह जानो, पूजूं तुम्हैं सिद्ध यह कर्म भानो ।७१।

ओं ह्रीं वैक्रियकसंघातरहिताय नमः अर्घं ।

तेजस्सके अङ्ग उपंग सारे, संधी मिलाया तिस मांहि धारे।
संघात नामा जिय देह जानो, पूजूं तुम्हैं सिद्ध यह कर्म भानो ।७२।

ओं ह्रीं तैजससंघातरहिताय नमः अर्घं ।

ज्ञानादि आवर्ण वो कर्म काया, ताको मिलाया श्रुत माहिं गाया।
संघात नामा जिय देह जानो, पूजूं तुम्हैं सिद्ध वह कर्म भानो ।७३।

ओं ह्रीं कारमाणसंघातरहिताय नमः अर्घं ।

चौबोला छन्द—पुद्गलीक वर्गणा जोग,तैं जब जिय करत अहारा ।
प्रणवावे तिनको एकत्र करि, बंध उदय अनुसारा ॥
यही औदारिक बन्धन तुमने, छेद किये निरधारा ।
भए अबंध अकाय अनूपम, जजूं भक्ति उर धारा ॥७४॥

ओं ह्रीं औदारिकबन्धरहिताय नमः अर्घं ।

वैक्रियक तनु परमाणु मिल, परस्परा अनिवारा ।
हो स्कन्ध रूप पर्याई, यह बन्धन परकारा ॥
वैक्रियिक तनु बन्धन तुमने, छेद कियो निरधारा॥ भए० ॥

ओं ह्रीं वैक्रियिकबन्धनछेदकाय नमः अर्घं ।

मुनि शरीरसो वाहिज निसरे, संशय नाशनहारा ।
ताको मिले प्रदेश परस्पर, हो सम्बन्ध अवारा ॥
यही आहारक बंधन तुमने, छेद कियो निरधारा ।
भए अबन्ध अकाय अनूपम, जजूं भक्ति उर धारा ॥ ७६ ॥

ओं ह्रीं आहारकबन्धनछेदकाय नमः अर्घं ।

दीप्त जोति जो कारमाणकी, रहै निरन्तर लारा,
जहां तहां नहिं विखरैं कन ज्यों, बहै एक ही धारा ।
तैजस नामा बन्धन तुमने, छेद कियो निरधारा ॥ भए० ७७ ॥

ओं ह्रीं तैजसबन्धनरहिताय नमः अर्घं ।

द्रव्य कर्म ज्ञानावरणादिक, पुद्गल जातिपसारा,
एक क्षेत्र अवगाही जियको, दुविधि भाव करतारा ।
कारमाण यह बन्धन तुमने, छेद कियो निरधारा । भए० ।७८॥

ओं ह्रीं कारमाणबन्धनरहिताय नमः अर्घं ।

छन्द रोला—तन आकृति संस्थान आदि, समचतुरस्र वखानो,
ऊपर तले समान, यथाविधि सुन्दर जानो।
यह विपरीत स्वरूप त्याग, पायो निजात्म पद,
बीजभूत कल्याण नमूं भव्यनि प्रति सुखप्रद ।७९।
ओं ह्रीं समचतुरस्रसंस्थानविमुक्ताय नमः अर्घं ।
ऊपरसे हो थूल तले हो, न्यून देह जिस।
परिमण्डलनिग्रोध नाम, वरणो सिद्धांत तिस ॥
यह विपरीत०, बीजभूत कल्याण० ॥८०॥
ओं ह्रीं न्यग्रोधपरिमण्डलसंस्थानरहिताय नमः अर्घं ।
नीचेसे हो थूल न्यून होवे उपराही,
बमई सम वामीक देह जिन आज्ञा माहीं।
यह विपरीत० ॥ बीजभूत कल्याण० ॥८१॥
ओं ह्रीं वामीकसंस्थानरहिताय नमः अर्घं ।
जो कूबड़ आकार रूप पावे तन प्राणी,

कुब्ज नाम संस्थान ताहि बरणैं जिन वानी ।
यह विपरीत० ॥ बीजभूत कल्याण० ॥८२॥
ओं ह्रीं कुब्जकनामसंस्थानरहिताय नमः अर्घं ।

लघुसों लघु ठिगना रूप एम तन होवे जाको,
वामन है परसिद्ध लोकमें कहिये ताको ।
यह विपरीत स्वरूप त्याग, पायो निजात्म पद,
बीजभूत कल्याण नमूं, भव्यनि प्रति सुखप्रद ॥८३॥
ओं ह्रीं वामनसंस्थानरहिताय नमः अर्घं ।

जिततित बहु आकार कहीं नहिं हो यक सारू,
हुंडक अति असुहावन पाप फल प्रगट उघारू ।
यह विपरीत० ॥ बीजभूत कल्याण० ॥८४॥
ओं ह्रीं हुंडकसंस्थानरहिताय नमः अर्घं ।

लक्ष्मीधरा छन्द—जीव आप भावसों जु कर्मकी क्रिया करेत,
अङ्ग वा उपङ्ग सो शरीरके उदय समेत ।

सो औदारिकी शरीर अंग वा उपंग नाश,
सिद्धरूप हो नमो सुपाइयो अबाध वास ॥८५॥

ओं ह्रीं औदारिकआङ्गोपांगरहिताय नमः अर्घं ।

देव नारकी शरीर मांस रक्तसे न होत,
तासको अनेक भांति आप देसकै उद्योत ।
वैक्रियिक सो शरीर अंग वा उपंग नाश,
सिद्धरूप हो नमो सु पाइयो अबाध वास ॥८६॥

ओं ह्रीं वैक्रियिकआंगोपांगरहिताय नमः अर्घं ।

साधुके शरीर मूलतें कढ़े प्रशंस योग,
संशयको विध्वंस: कार केवली सु लेत भोग ।
आहारक सो शरीर अंग वा उपंग नाश
सिद्ध रूप हो नमो सु पाइयो अबाध वास ॥८७॥

ओं ह्रीं आहारकआंगोपांगरहिताय नमः अर्घं ।

गीता छन्द—संहनन बन्धन हाड होय अभेद वज्र सो नाम है,
नाराच कीली वृषभ डोरी बांधनेकी ठाम है।
है आदिको संहनन जो जिम वज्र सब परकार हो,
यह त्याग बन्ध अबंध निवसो परम आनंद धार हो ॥८८॥

ओं ह्रीं वज्रऋषभनाराचसंहननरहिताय नमः अर्घं ।

ज्यों वज्रकी कीली ठुकी हो हाड संधीमें जहां,
सामान वृषभ जु जेवरी ताकरि बंधाई हो तहां।
है दूसरा संहनन यह नाराच वज्र प्रकार हो,
यह त्याग बंध अबन्ध निवसो परम आनंद धार हो ॥ ८९ ॥

ॐ ह्रीं वज्रनाराचसंहननरहिताय नमः अर्घं ।

नहिं वज्रकी हो वृषभ अरु नाराच भी नहीं वज्र हो,
सामान कीली करि ठुकी सब हाड वज्र समान हो।
है तीसरा संहनन जो नाराच ही परकार हो,
यह त्याग वन्ध अबन्ध निवसो परम आनंद धार हो ॥ ९०।

ॐ ह्रीं नाराचसंहननरहिताय नमः अर्घं ।

हो जडित छोटी कीलिका, सो संधि हाडोंकी जवै,
कछु ना विशेषण वज्रके, सामान्य ही होवे सबै ।
है चौथवां संहनन जो, नाराच अर्द्ध प्रकार हो,
यह त्याग बंध अबंध निवसो, परम आनंद धार हो ॥ ९१ ।

ॐ ह्रीं अर्द्धनाराचसंहननरहिताय नमः अर्घं ।

जो परस्पर जडित होवे, संधि हाडनकी जहां,
नहीं कीलिका सो ठुकी होवे, साल संधीके तहां ।
है पांचवां संहनन जो, कीलक नाम कहाय हो,
यह त्याग बंध अबंध निवसो, परम आनंद धार हो ॥ ९२ ॥

ॐ ह्रीं कीलिकसंहननरहिताय नमः अर्घं ।

कछु छिद्र कछुक मिलाप होवे, संधि हाड़ोमय सही,
केवल नसासों होय वेढ़ी, मांससों लतपत रही ।
अन्तिम स्फाटिक संहनन यह हीन शक्ति असार हो,

यह त्याग बन्ध अबन्ध निवसो परम आनंद धार हो ॥९३॥

ॐ ह्रीं स्फाटिकसंहननरहिताय नमः अर्घं ।

दोहा—वर्ण विशेषण स्वेत है, नामकर्म तन धार ।
स्वच्छ स्वरूपी हो नमूं, ताहि कर्मरज टार ॥ ९४ ॥

ॐ ह्रीं स्वेतनामकर्मरहिताय नमः अर्घं ।

वर्ण विशेषन पीत है, नामकर्म तन धार ॥ स्वच्छ० ॥ ९५

ॐ ह्रीं पीतनामकर्मरहिताय नमः अर्घं ।

वर्ण विशेषन रक्त है, नामकर्म तन धार ॥
स्वच्छ स्वरूपी हो नमूं, ताहि कर्मरज टार ॥

ॐ ह्रीं रक्तनामकर्मरहिताय नमः अर्घं ।

वर्ण विशेषन हरित है, नामकर्म तन धार ॥ स्वच्छ०

ॐ ह्रीं हरितनामकर्मरहिताय नमः अर्घं ।

वर्ण विशेषन कृष्ण हैं, नामकर्म तन धार ॥ स्वच्छ० ॥

ॐ ह्रीं कृष्णनामकर्मरहिताय नमः अर्घं ।

गंध विशेषण शुभ कहा, नामकर्म तन धार ॥ स्वच्छ० ॥

ॐ ह्रीं सुगंधनामकर्मरहिताय नमः अर्घं ।

गंध विशेषन अशुभ है, नामकर्म तन धार ॥ स्वच्छ० ॥

ॐ ह्रीं दुर्गन्धनामकर्मरहिताय नमः अर्घं ।

स्वाद विशेषन तिक्त है, नामकर्म तन धार ॥ स्वच्छ० १०१

ॐ ह्रीं तिक्तरसरहिताय नमः अर्घं ।

स्वाद विशेषन कटुक है, नामकर्म तन धार ॥
स्वच्छ स्वरूपी हो नमूं ताहि कर्मरज टार ॥ १०२ ॥

ॐ ह्रीं कटुकरसरहिताय नमः अर्घं ।

स्वाद विशेषन आम्ल है, नामकर्म तन धार ॥ स्वच्छ० ॥१०३ ॥

ॐ ह्रीं आम्लरसरहिताय नमः अर्घं ।

स्वाद विशेषन मधुर है, नामकर्म तन धार । स्वच्छ० ॥ १०४ ॥

ॐ ह्रीं मधुररसरहिताय नमः अर्घं ।

स्वाद विशेषन कषाय है, नामकर्म तन धार ॥ स्वच्छ० ॥ १०५ ॥

ॐ ह्रीं कषायरसरहिताय नमः अर्घं ।

फर्स विशेषन नर्म है, नामकर्म तन धार ॥ स्वच्छ० ॥ १०६ ॥

ॐ ह्रीं मृदुत्वस्पर्शरहिताय नमः अर्घं ।

फर्स विशेषन कठिन है, नामकर्म तन धार ॥ स्वच्छ० ॥ १०७ ॥

ॐ ह्रीं कठिनस्पर्शरहिताय नमः अर्घं ।

फर्स विशेषन भार है, नामकर्म तन धार ॥ स्वच्छ० ॥ १०८ ॥

ॐ ह्रीं गुरुस्पर्शरहिताय नमः अर्घं ।

फर्स विशेषन अगुर है, नामकर्म तन धार ॥ स्वच्छ० ॥ १०९ ॥

ॐ ह्रीं लघुस्पर्शरहिताय नमः अर्घं ।

फर्स विशेषन शीत है, नामकर्म तनधार ॥ स्वच्छ० ॥ ११० ॥

ॐ ह्रीं शीतस्पर्शरहिताय नमः अर्घं ।

फर्स विशेषन उष्ण है, नामकर्म तन धार ॥ स्वच्छ० ॥ १११ ॥

ॐ ह्रीं उष्णस्पर्शरहिताय नमः अर्घं ।

फर्स विशेषण चिकण है, नामकर्म तन धार ॥ स्वच्छ० ॥ ११२ ॥

ॐ ह्रीं स्निग्धस्पर्शरहिताय नमः अर्घं ।

फर्स विशेषन रूक्ष है, नामकर्म तन धार ॥ स्वच्छ० ॥ ११२ ॥

ॐ ह्रीं रूक्षस्पर्शरहिताय नमः अर्घं ।

छन्द मरहठा—हो जो प्रजाप्त वर पणइन्द्रीधर जाय नर्क निरधार,
विग्रहसों चालमें अंतरालमें धरै पूर्व आकार ।
सो नर्क नामकरि गावत गणधर आनुपूर्वी सार,
तुम ताहि नशायो शिवगति पायो नमित लहूं भवपार ॥

ॐ ह्रीं नर्कगत्यानुपूर्वीछेदकाय नमः अर्घं ।

निजकाय छांडकरि अंत समयमरि होय पशू अवतार,
विग्रहसों चालमें अंतरालमें धरैं पूर्व आकार ।
सो तिर्यंच नाम करि गावत गणधर आनुपूरवी सार,
तुम ताहि नशायो शिव गति पायो नमित लहूं भवपार ।

ॐ ह्रीं तिर्यंचगत्यानुपूर्वीविमुक्ताय नमः अर्घं ।

समकितसों मर वा कलेश करि धरहि देवगति चार,

विग्रहसौ चालमें अन्तरालमें धरैं पूर्व आकार ।
सो देव नाम करि गावत० ॥ तुम ताहि नशायो० ॥ ११६ ॥
ॐ ह्रीं देवगत्यानुपूर्वीविमुक्ताय नमः अर्घं ।

हो मिश्र प्रणामी वा शिवगामी वरै मनुष्यगति सार,
विग्रहसौं चालमें अन्तरालमें धरै पूर्व आकार ।
सो मनुष्य नाम करि गावत० ॥ तुम ताहि नशायो० ॥ ११७।
ॐ ह्रीं मनुष्यगत्यानुपूर्वीविमुक्ताय नमः अर्घं ।

छन्द त्रोटक ।

तनभार भए निज घात ठने, तिसकी कछु विधि ऐसी जु बने ।
अपघात सुकर्म सिद्धांत भनों, जग पूज्य भए तसु मूल हनों ॥११८।
ॐ ह्रीं अपघातकर्मरहिताय नमः अर्घं ।

विष आदि अनेक उपाधि धरै, पर प्राणनिको निर्मूल कर ।
परघाति सु कर्म सिद्धांत भनो, जग पूज्य भये तसु मूल हनों ११९

ॐ ह्रीं परघातनामकर्मरहिताय नमः अर्घं ।

अति तेजमई परदीस महा, रवि बिंब विषैं जिय भूमि लहा ।
यह आतप कर्म सिद्धांत भनो, जग पूज्य भये तिस मूल हनो ।१२०

ॐ ह्रीं अतितेजमईआतापनामकर्मरहिताय नमः अर्घं ।

परकासमई जिम बिंब शशी, पृथिवी जिय पावत देह इसी ।
द्युति नाम सुकर्म सिद्धांत भनो, जग पूज्य भये तिस मूल हनो।१२१

ॐ ह्रीं उद्योतनामकर्मरहिताय नमः अर्घं ।

तनकी थिति कारण स्वास गहै, स्वर अंतर बाहर भेद वहै ।
यह स्वास सुकर्म सिद्धांत भनो, जग पूज्य भये तसु मूल हनो ॥

ॐ ह्रीं स्वासकर्मरहिताय नमः अर्घं ।

शुभ चाल चलैं अपनी जिसमें, शशि ज्यों नभ सोहत है तिसमें ।
नभमें गति कर्म सिद्धांत भनो, जग पूज्य भये तिस मूल हनो ॥१२३

ॐ ह्रीं विहायोगतिकर्मविमुक्ताय नमः अर्घं ।

इक इन्द्रिय जात विरोध भई, चतुरांति सुभावक प्राप्त भई ।
त्रस नाम सु कर्मसिद्धांत भनो, जग पूज्य भये तिस मूल हनो ॥१२४

ॐ ह्रीं त्रसनामकर्मविमुक्ताय नमः अर्घं ।

इक इन्द्री जातहि पावत हैं, अरु शेष न ताहि धरावत हैं ।
यह थावर कर्म सिद्धांत भनो, जग पूज्य भये तिस मूल हनो ॥१२' ॥

ॐ ह्रीं थावरनामकर्मरहिताय नमः अर्घं ।

परमैं परवेश न आप करैं, परको निजमैं नहिं थाप धरैं ।
यह वादर कर्म सिद्धांत भनो, जग पूज्य भये तिस मूल हनो ॥१२६॥

ॐ ह्रीं वादरनामकर्मरहिताय नमः अर्घं ।

जलसों दवसों नहीं आप मरै, सब ठौर रहै परको न हरै ।
यह सूक्षम कर्मसिद्धांत भनो, जग पूज्य भये तिस मूल हनो ॥१२७॥

ओं ह्रीं सूक्ष्मनामकर्मरहिताय नमः अर्घं ।

जिसतैं परिपूरणता करि है, निज शक्ति समान उदय धरि है।
पर्याप्त सुकर्म सिद्धांत भनो, जग पूज्य भये तिस मूल हनो ॥ १२८ ॥

ओं ह्रीं पर्याप्तकर्मरहिताय नमः अर्घं।

परपूरणता नहि धारसके, यह होत सभी साधारणके।
अपरयापति कर्म सिद्धांत भनो, जग पूज्य भये तसु मूल हनों १२९

ओं ह्रीं अपर्याप्त कर्मरहिताय नमः अर्घ।

जिम लोह न भार धरै तनमें, जिम आकन फूल उडे वनमें।
अगुरुलघू यह भेद भनो, जग पूज्य भये तसु मूल हनों ॥ १३० ॥

ओं ह्रीं अगुरुलघुकर्मछेदकाय नमः अर्घं।

इक देह विषै इक जीव रहै, इकलो तिसको सब भोग लहै।
परतेक सुकर्म सिद्धांत भनो, जग पूज्य भये तसु मूल हनों ॥१३१॥

ओं ह्रीं प्रत्येककर्मरहिताय नमः अर्घं।

इक देह विषैं बहु जीव रहै, इक साथ सभी तिस भोग लहैं।

इह भेद निगोद सिद्धांत भनो, जग पूज्य भये तसु मूल हनों ।१३२

ॐ ह्रीं साधारणनामकर्मरहिताय नमः अर्घं ।

उपेन्द्रवज्रा छन्द ।

चले न जो धातु तजै न वासा, यथाविधी आप धरै निवासा ।
यही प्रकारा थिर नाम भासो, नमामि देवं तिस देह नासो ॥१३३

ॐ ह्रीं स्थिरनामकर्मरहिताय नमः अर्घं ।

अनेक थानं मुख गौण धातं, चलंति धारं निजवास धातं ।
यही प्रकारा थिर नाम भासो, नमामि देवं तिस देह नासो ॥१३४

ॐ ह्रीं अस्थिरनामकर्मरहिताय नमः अर्घं ।

यथाविधी देह विलास सोहै, मुखारविंदादिक सर्व मोहै ।
यही प्रकारा शुभ नाम भासो, नमामि देवं तिस देह नासो ।१३५।

ॐ ह्रीं शुभनामकर्मरहिताय नमः अर्घं ।

असुन्दराकार शरीरमाहीं, लखों जहासों विटरूप ताहीं

यही प्रकारा अशुभ नाम भासो, नमामि देवं तिस देह नासो १३६

ॐ ह्रीं अशुभनामकर्मरहिताय नमः अर्घं ।

अनेक लोकोत्तम भावधारी, करैं सभी तापर प्रीति भारी ।

सुभगताको यह भेद भासो, नमामि देवं तिस देह नासो ॥१३७

ॐ ह्रीं सुभगनामकर्मरहिताय नमः अर्घं ।

धरैं अनेका गुण तोन जासों, करैं कभी प्रीति न कोइ तासों ।

दुर्भाग ताको यह भेद भासो, नमामि देवं तिस देह नासो ।१३८

ॐ ह्रीं दुर्भगकर्मरहिताय नमः अर्घं ।

पद्धडी छन्द ।

ध्वनि वीन भांति ज्यों मधुर बैन, निसरै पिक आदिक सुरस दैन ।

यह सुस्वर नामा प्रकृति कहाय, तुम हनों नमूं निज सीस लाय ॥

ॐ ह्रीं सुस्वरनामकर्मरहिताय नमः अर्घ ।

गर्दभस्वर जैसो कहो भास, तैसो स्व अशुभ कहो सु भास ।

१ अस्पष्ट भूतवानी समान, असुहावन भयंकर शब्द जान। ऐसा पाठ "क" प्रतिमें है ।

यह दुस्वर नाम प्रकृत कहाय, तुम हनों नमूं निज शीस लाय १४०

ॐ ह्रीं दुस्वरनामकर्मरहिताय नमः अर्घ ।

अडिल्ल छन्द—होत प्रभा मई क्रांति महारमणीक जू ।
जग जनमन भावन माने यह ठीक जू ।
यह आदेय सुप्रकृति नाश निजपद लहो ।
ध्यावत हैं जगनाथ तुम्हैं हम अघ दहो ॥१४१॥

ओं ह्रीं आदेयनामकर्मरहिताय नमः अर्घ ।

रूखो मुखको वरण लेश नहिं कांतिको ।
रूखे केश नखाकृति तन बढ़ भांतिको ॥
अनादेय यह प्रकृति नाश निजपद लहो ।
ध्यावत हैं जगनाथ तुम्हैं हम अघ दहो ॥१४२॥

ओं ह्रीं अनादेयनामकर्मरहिताय नमः अर्घ ।

हो न शुभ गुण तौ भी जगमें विस्तरै
जगजन सुजस उचारत ताकी थुति करै ॥
यह जस प्रकृति विनाश सुभावी यश लहो
ध्यावत हैं जगनाथ तुम्हैं हम अघ दहो ॥१४३॥
ओं ह्रीं यशःप्रकृतिछेदकाय नमः अर्घं ।

जासु गुणनको औगुण कर सब ही गृहैं ।
करत काज परशंसित पण निंदित कहैं ॥
अपयश प्रकृति विनाश सुभावी यश लहो ।
ध्यावत हैं जगनाथ तुम्हैं हम अघ दहो ॥१४४॥
ओं ह्रीं अपयशःनामकर्मरहिताय नमः अर्घं ।

योग थान नेत्रादिक ज्योंके त्यों बनों,
रचित चतुर कारीगर करते हैं जनों ।
यह निर्माण विनाश सुभावी पद लहो,

ध्यावत हैं जगनाथ तुम्हैं हम अघ दहो ॥१४५॥

ओं ह्रीं निर्माणनामकर्मरहिताय नमः अर्घं।

पंचकल्याणक चोतिस अतिशय राज ही,

प्रातिहार्य अठ समोशरण द्युति छाज ही।

तीर्थंकर विधि विभव नाश स्वै पद लहो,

ध्यावत हैं जगनाथ तुम्हैं हम अघ दहो ॥१४६॥

ओं ह्रीं तीर्थंकरप्रकृतिरहिताय नमः अर्घं।

चाल छन्द—जो कुम्भकारकी नाईं, छिन घट छिन करत सराई।

सो गोत कर्म परजारा, हम पूज रचो सुखकारा ॥१४७॥

ओं ह्रीं गोत्रकर्मरहिताय नमः अर्घं।

लोकनिमें पूज्य प्रधाना, सब करत विनय मनमाना।

यह ऊंच गोत्र परजारा, हम पूज रचो सुखकारा ॥१४८॥

ओं ह्रीं ऊँचगोत्रकर्मरहिताय नमः अर्घं।

जिसको सब कहत कमीना, आचरण धरे अति हीना।
यह नीच गोत्र परजारा, हम पूज रचो सुखकारा ॥१४९॥
ओं ह्रीं नीचगोत्रकर्मरहिताय नमः अर्घं ।

ज्यों दे न सके भण्डारी, परधनको हो रखवारी।
यह अन्तराय परजारा, हम पूज रचो सुखकारा ॥१५०॥
ओं ह्रीं अन्तरायकर्मरहिताय नमः अर्घं ।

हो दान देनको भावा, दे सके न कोटि उपावा।
दानांतराय परजारा, हम पूज रचो सुखकारा ॥१५१॥
ओं ह्रीं दानांतरायकर्मरहिताय नमः अर्घं ।

मनो दान लेन के भावे, दातार प्रसंग न पावै।
लाभांतराय परजारा, हम पूज रचो सुखकारा ॥१५२॥
ओं ह्रीं लाभांतरायकर्मरहिताय नमः अर्घं ।

पुष्पादिक चाहै भोगा, पर पाये न अवसर योगा।

भोगांतराय परजारा, हम पूज रचो सुखकारा ॥१५३॥
ओं ह्रीं भोगांतरायकर्मरहिताय नमः अर्घं ।

तिय आदिक वारम्वारा, नहीं भोग सके हितकारा।
उपभोगांतराय परजारा, हम पूज रचो सुखकारा ॥१५४॥
ओं ह्रीं उपभोगांतरायकर्मरहिताय नमः अर्घं ।

चेतन निज बल प्रगटावे, यह योग कभू नहीं पावे।
वीर्यांतराय परजारा, हम पूज रचो सुखकारा ॥ १५५ ॥
ओं ह्रीं वीर्यान्तरायकर्मरहिताय नमः अर्घं ।

ज्ञानावरणादिक नामी, निज भाग उदय परिणामी ।
अठ भेद कर्म परजारा, हम पूज रचो सुखकारा ॥ १५६ ॥
ओं ह्रीं अष्टकर्मरहिताय नमः अर्घं ।

इकसो अड़तांल प्रकारी, उत्तर विधि सत्ता धारी।
सब प्रकृति कर्म परजारा, हम पूज रचो सुखकारा ॥ १५७ ॥

ओं ह्रीं एकशताष्टचत्वारिंशत्कर्मप्रकृतिरहिताय नमः अर्घं ।

परणाम भेद संख्याता, जो वचन योगमें आता ।
संख्यात कर्म परजारा, हम पूज रजो सुखकारा ॥ १५८ ॥

ओं ह्रीं संख्यातकर्मरहिताय नमः अर्घं ।

है वचननसों अधिकाई, परिणाम भेद दुखदाई ।
विधि असंख्यात परजारा, हम पूज रचो सुखकारा ॥ १५९ ॥

ओं ह्रीं असंख्यातकर्मरहिताय नमः अर्घं ।

अविभाग प्रछेद अनन्ता, जो केवलज्ञान लहन्ता ।
यह कर्म अनन्त परजारा, हम पूज रचो सुखकारा ॥ १६० ॥

ओं ह्रीं अनन्तकर्मरहिताय नमः अर्घं ।

सब भाग अनन्तानन्ता, यह सूक्ष्म भाव धारंता ।
विधि नन्तानन्त परजारा, हम पूज रचो सुखकारा ॥ १६१ ॥

ओं ह्रीं अनन्तानन्तकर्मरहिताय नमः अर्घं ।

मोतीयादाम छन्द ।

न हो परिणाम विषै कछु खेद, सदा इकसा प्रणवै विन भेद ।
निजाश्रित भाव रमै सुखधाम, करूं तिस आनन्दकों परिणाम

ओं ह्रीं आनन्दस्वभावाय नमः अर्घ ॥१६२॥

धरैं जितने परिणामन भेद, विशेषन ते सब ही विन खेद ।
पराश्रितता विन आनन्द धर्म, नमूं तिन पाय लहूं पद शर्म ।

ओं ह्रीं आनन्दधर्माय नमः अर्घ ।१६३॥

न हो परयोग निमित्त विभाव, सदा निवसे निज आनन्द भाव ।
यही वरणो परमानन्द धर्म, नमूं तिन पाय लहूं पद शर्म ॥

ओं ह्रीं परमानन्दधर्माय नमः अर्घ ॥१६४॥

कभूं परसों कछु द्वेष न होत, कभूं फुनि हर्ष विशेष न होत ।
रहै नित ही निज भावन लीन, नमूं पद साम सुभाव सु लीन ॥

ओं ह्रीं साम्यस्वभावाय नमः अर्घ ॥१६५॥

निजाकृतिमें नहीं लेश कषाय, अमूरति शांतिमई सुखदाय।
अनाकुलता विन साम्य स्वरूप, नमूं तिनको नित आनंद रूप

ओं ह्रीं साम्यस्वरूपाय नमः अर्घं ॥१६६॥

अनन्त गुणातम द्रव्य पर्याय, यही विधि आप धरैं बहु भाय।
सभी कुमती करि हो अलखाय, नमूं जिनवैन भली विधि गाय

ओं ह्रीं अनन्तगुणाय नमः अर्घं ॥१६७॥

अनन्त गुणातम रूप कहाय, गुणी गुण भेद सदा प्रणमाय।
महागुण स्वच्छमयी तुम रूप, नमूं तिनको पद पाइ अनूप

ओं ह्रीं अनन्तगुणस्वरूपाय नमः अर्घं ॥१६८॥

अभेद सुभेद अनेक सु एक,धरो इन आदिक धर्म अनेक।
विरोधित भावनसों अविरुद्ध, नमूं जिन आगमकी विधि शुद्ध

ओं ह्रीं अनन्तधर्माय नमः अर्घं ॥१६९॥

र है धर्मी नित धर्म सरूप, न हो परदेशनसों अणुरूप।

चिदातम धर्म सभी निजरूप, धरो प्रणमूं मन भक्ति स्वरूप ॥

ओं ह्रीं अनन्तधर्मस्वरूपाय नमः अर्घं ॥१७०॥

चौपाई—हीनाधिक नहीं भाव विशष, आतमीक आनन्द हमेश ।

सम स्वभाव सोई सुखराज, प्रणमूं सिद्ध मिटै भववास ।१७१

ओं ह्रीं समस्वभावाय नमः अर्घं ।

इष्टानिष्ट मिटी भ्रम जाल, पायो निज आनन्द विशाल ।

साम्य सुधारसको नित भोग, नमूं सिद्ध सन्तुष्ट मनोग ॥

ओं ह्रीं संतुष्टाय नमः अर्घं ॥१७२॥

पर पदार्थको इच्छक नाहिं, सदा सुखी स्वातम पदमाहिं ।

मेटो सकल राग अरु दोष, प्रणमूं राजत सम सन्तोष ॥

ओं ह्रीं समसन्तोषाय नमः अर्घं ॥१७३॥

मोह उदय सब भाव नसाय, मेटो पुद्गलीक पर्याय ।

शुद्ध निरंजन समगुण लहो, नमूं सिद्ध परकृत दुख दहो ॥

ओं ह्रीं साम्यगुणाय नमः अर्घं ॥१७४॥

निजपदसों थिरता नहीं तजै, स्वानुभूत अनुभव नित भजै ।
निराबाध तिष्ठै अविकार, सामस्थाई गुण भण्डार ॥

ओंह्रीं साम्यस्थाय नमः अर्घं ॥१७५॥

भव सम्बन्धी काज निवार, अचल रूप तिष्ठै समधार ।
कृत्याकृत्य साम्य गुण पाइयो, भक्ति सहित हम सिर नाइयो ॥

ओंह्रीं साम्यकृत्याकृत्यगुणाय नमः अर्घं ॥१७६॥

छन्द झूलना ।

भूल नहीं भय करै छोभ नाहीं धरै, गैरकी आसको त्रास नाहीं धरै
शरण काकी चहै सबनको शरण है, अन्यकी शरण बिनमूं ताही वरै

ओं ह्रीं अनन्यशरणाय नमः अर्घं ॥१७७॥

द्रव्य षट्‌में नहीं आप गुण आप ही, आपमें राजते सहज नीकी सही ।
स्वगुण अस्तित्वता वस्तुकी वस्तुता, धरत हो मैं नमूं आपहीको स्वता

ॐ ह्रीं अनन्यगुणाय नमः अर्घं ॥१७८॥

गेरसे गेर हो आपमें ले रहो·स्वैचतुर खेतमें वास पायो ।
धर्म समुदाय हो परमपद पाइयो, मैं तुम्हैं भक्तियुत शीश नायो

ओं ह्रीं अनन्यधर्माय नमः अर्घं ॥१७९॥

साधना जबतईं होत है तबतईं, दोऊ परिमाणको काज जामें ।
आप स्वैपद लियो तिन जलांजलि दियो
अन्य नहीं चहत निज शुद्धतामें

ओं ह्रीं परिमाणविमुक्ताय नमः अर्घं ॥१८०॥

तोमर छन्द—द्रग ज्ञान पुरणचन्द्र·अकलंक ज्योति अमन्द ।
निरद्वंद ब्रह्मस्वरूप नित पूजहूं चिद्रूप

ओं ह्रीं ब्रह्मस्वरूपाय नमः अर्घं ॥१८१॥

सव ज्ञानमयी परिणाम, वर्णादिको नहिं काम ।
निरद्वंद ब्रह्मस्वरूप, नित पूजहूं चिद्रूप ॥ १८२ ॥

ओं ह्रीं ब्रह्मगुणाय नमः अर्घं ।

निज चेतनागुण धार, चिन रूप हो अविकार ।
निरद्वंद ब्रह्मस्वरूप, नित पूजहूं चिद्रूप ॥ १८३ ॥

ओं ह्रीं ब्रह्मचेतनाय नमः अर्घं ।

सुन्दरी छन्द ।

अन्य रूप सु अन्य रहै सदा, पर निमित्त विभाव न हो कदा ।
कहते हैं मुनि शुद्ध सुभावजी, नमूं सिद्ध सदा तिन पायजी ।१८४।

ओं ह्रीं शुद्धस्वभावाय नमः अर्घं ।

पर परिणामनसो नहिं मिलत है, निज परिणामन सो नहिं चलत हैं ।
*शुद्ध परिणामी तुम पद नमूं, नमत तुम पद सब अघको दमूं ।।८५

ओं ह्रीं शुद्धपारिणामकाय नमः अर्घं ।

वस्तुता व्यवहार नहीं अहै, उपस्वरूप असत्यारथ कहै ।

* 'परिणामी शुद्धस्वरूप एह, नमूं सिद्ध सदा नित पांय तेह'। ऐसा पाठ 'क' प्रतिमें है।

शुद्ध स्वरूप न ताकरि साध्य है, निर्विकल्प समाधि अराध्य है ।१८६

ओं ह्रीं अशुद्धरहिताय नमः अर्घं ।

द्रव्य पर्यायार्थिक नय दोऊ, स्वानुभवमें विकलप नहिं कोऊ ।

सिद्ध शुद्धाशुद्ध अतीत हो, नमत तुम तिसपद परतीत हो ॥१८७॥

ओं ह्रीं शुद्धाशुद्धरहिताय नमः अर्घं ।

चौपाई—क्षय उपशम अवलोकन टारो, निज गुण क्षाइक रूप उधारो ।

युगपत सकल चराचर देखा, ध्यावत हूं मन हर्ष विशेखा ।१८८।

ओं ह्रीं अनन्तदृगस्वरूपाय नमः अर्घं ।

जब पूरण अवलोकन पायो, तब पूरण आनन्द उपायो ।

अविनाभाव स्वयं पद देखा, ध्यावत हूं मन हर्ष विशेखा ॥ १८९ ॥

ओं ह्रीं अनन्तदृगानन्दस्वभावाय नमः अर्घं ।

नाश सु पूर्वक हो उतपाता, सत लक्षण परिणति मरजादा ।

क्षय उपशम तन क्षायक पेखा, ध्यावत हूं मन हर्ष विशेखा ॥ १९० ॥

ओं ह्रीं अनन्तदृगुत्पादकाय नमः अर्घं ।

नित्य रूप निज चित पद मांही, अन्य रूप पलटन हो नाहीं ।
द्रव्य-दृष्टिमें यह गुण देखा, ध्यावत हूं मन हर्ष विशेखा ॥ १९१ ॥

ओं ह्रीं अनन्तध्रुवाय नमः अर्घं ।

कर्म नाश जो स्वापद पावै, रञ्च मात्र फिर अन्त न आवै ।
यह अव्यय गुण तुममें देखा, ध्यावत हूं मन हर्ष विशेखा । १९२ ।

ओं ह्रीं अव्ययभावाय नमः अर्घं ।

पर नहीं व्यापे तुमपद मांही, परमें रमण भाव तुम नाहीं ।
निज करि निजमें निज गुण देखा, ध्यावत हूं मन हर्ष विशेखा ।१९३

ओं ह्रीं अनन्तनिलयाय नमः अर्घं ।

शंखनारी छन्द ।

अनन्ताभिधानो, गुणाकार जानो । धरो आप सोई, नमूं मान खोई १९४

ओं ह्रीं अनंताकाराय नमः अर्घं ।

अनन्ता स्वभावा, विशेषन उपावा । धरो आप सोई, नमूं मान खोई ।१९५।

ओं ह्रीं अनन्तस्वभावाय नमः अर्घं ।

विनाकार रूपा यह चिन्मय स्वरूपा। धरो आप सोई, नमूं मान खोई ।१९६

ओं ह्रीं चिन्मयस्वरूपाय नमः अर्घ ।

सदा चेतनामें, न हो अन्यतामें । धरो आप सोई, नमूं मान खोई ।१९७

ओं ह्रीं चिद्रूपाय नमः अर्घ ।

दोहा—जो कछु भाव विशेष है, सब चिद्रूपी धर्म ।

असाधारण पूरण भये, नमत नशैं सब कर्म ॥ १९८ ॥

ओं ह्रीं चिद्रूपधर्माय नमः अर्घ ।

परकृति व्याधि विनाशके, स्वै अनुभवकी प्राप्त ।

भई, नमूं तिनको, लहूं यह जगवास समाप्त ॥ १९९ ॥

ओं ह्रीं स्वानुभवउपलब्धिरमाय नमः अर्घ ।

निरावरण निज ज्ञान करि, निज अनुभवकी डोर ।

गहो लहो थिरता रहो, रमण ठोर नहीं और ॥ २०० ॥

ओं ह्रीं स्वानुभूतरताय नमः अर्घ ।

सरवोत्तम लौकीक रस, सुधा कुरस सब त्याग।
निज पद परमामृत रसिक, नमूं चरण बडभाग ॥ २०१ ॥
ओं ह्रीं परमामृतरताय नमः अर्घं ।

विषयामृत विषसम अरुचि, अरस अशुभ असुहान।
जान निजानन्द परमरस, तुष्ट सिद्ध भगवान ॥ २०२ ॥
ओं ह्रीं परमामृततुष्टाय नमः अर्घं ।

शंकातीत अतीतसो, धरे प्रीति निज माहि।
अमल हिये संतनि प्रिये, परम प्रीति नम ताहि ॥ २०३ ॥
ओं ह्रीं परमप्रीताय नमः अर्घं ।

अक्षय आनन्द भाव युत, निज हितकार मनोग।
सज्जन चित वल्लभ परम, दुर्जन दुर्लभ योग ॥ २०४ ॥
ओं ह्रीं परमवल्लभयोगाय नमः अर्घं ।

शब्द गन्धरसफरश नहीं, नहीं वरण आकार।

बुद्धि गहै नहिं पार तुम, गुप्त भाव निरधार ॥ २०५ ॥

ॐ ह्रीं अव्यक्तभावाय नमः अर्घं ।

सर्व दर्वसों भिन्न है, नहिं अभिन्न तिहुंकाल ।

नमूं सदा परकाश धर, एक हि रूप विशाल ॥ २०६ ॥

ॐ ह्रीं एकत्वस्वरूपाय नमः अर्घं ।

सर्व दर्वतें भिन्नता, जिम गुण निजमें वास ।

नमूं अखंड परमातमा, सदा सुगुणकी राश ॥ २०७ ॥

ॐ ह्रीं एकत्वगुणाय नमः अर्घं ।

सर्व दर्व परिणामसों, मिलै न निज परिणाम ।

नमूं निजानन्द ज्योति घन, नित्य उदय अभिराम ॥ २०८ ॥

ॐ ह्रीं एकत्वभावाय नमः अर्घं ।

चौपाई—पर संयोग तथा समवाय, यह संवाद न हो द्वै भाय ।

नित्य अभेद एकता धरो, प्रणमूं द्वैत भाव हम हरो ॥ २०९ ॥

ओं ह्रीं द्वैतभावविनाशकाय नमः अर्घं ।

पूर्व पर्याय नासियो सोई, जाको फिर उतपाद न होई ।
अव्यय अविनाशी अभिराम, शाश्वत रूप नमूं सुखधाम ॥ २१०

ओं ह्रीं शाश्वताय नमः अर्घं ।

निर्विकार निर्मल निजभाव, नित्य प्रकाश अमन्द प्रभाव ।
अव्यय अविनाशी अभिराम, शाश्वत रूप नमूं सुखधाम ॥२११॥

ओं ह्रीं शाश्वतप्रकाशाय नमः अर्घं ।

निरावरण रवि बिम्ब समान, नित्य उद्योत धरो निज ज्ञान ।
अव्यय अविनाशी अभिराम, शाश्वत रूप नमूं सुखधाम ॥२१२

ओं ह्रीं शाश्वतउद्योताय नमः अर्घं ।

ज्ञानानंद सुधाकरचन्द्र, सोहत पूरण ज्योति अमन्द ।
अव्यय अविनाशी अभिराम, शाश्वत रूप नमूं सुखधाम ॥२१३॥

ओं ह्रीं शाश्वतामृतचन्द्राय नमः अर्घं ।

ज्ञानानन्द सुधारस धार, निरवियछेद अभेद अपार ।
अव्यय अविनाशी अभिराम, शाश्वत रूप नमूं सुखधाम ॥२१४॥
ओं ह्रीं शाश्वतअमृतमूर्तये नमः अर्घं ।

पद्धडी छन्द—मन इन्द्रिय ज्ञान न पाय जेह, है सूक्षम नाम सरूप तेह।
मनःपर्यय जाकूं नाहिं पाय, सो सूक्षम परम सुगुण नमाय ॥२१५॥
ओं ह्रीं परमसूक्ष्माय नमः अर्घं ।

बहु रास नभोदरमें समाय, प्रत्यक्ष स्थूल ताकों न पाय ।
इकसों इककों बाधा न होहि, सूक्षम अविनाशी नमों सोहि ॥२१६॥
ओं ह्रीं सूक्ष्मानकाशाय नमः अर्घं ।

नभ गुण ध्वनि हो यह जोग नाहिं, हो जिसो गुणी गुण तिसो ताहिं
सो राजत हो सूक्षम स्वरूप, नमहूं तुम सूक्षम गुण अनूप ॥२१७॥
ओं ह्रीं सूक्ष्मगुणाय नमः अर्घं ।

तुम त्याग द्वैतताको प्रसंग, पायो एकाकी छबि अभंग ।

जाको कबहूं अनुभव न होय, नमूं परम रूप है गुप्त सोय ॥२१८ ॥

ओं ह्रीं परमरूपगुप्ताय नमः अर्घं ।

छंद त्रोटक—सर्वार्थविमानिक देव तथा, मन इन्द्रिय भोगन शक्ति यथा।
इनके सुखको इक सीम सही, तुम आनंदको पर अन्त नहीं ॥२१९॥

ओं ह्रीं निरवधिसुखाय नमः अर्घं ।

जग जीवनिको नहिं भाग्य यहै, निज शक्ति उदय करि व्यक्ति लहै ।
तुम पूरण क्षायक भाव लहो, इम अन्त विना गुणरास गहो ।२२० ।

ओं ह्रीं निरवधिगुणाय नमः अर्घं ।

भवि-जीव सदा यह रीति धरें, नित नूतन पर्य विभाव धरें ।
तिस कारणको सब व्याधि दहो, तुम पाइ सुरूप जु अन्त न हो ।२२१

ओं ह्रीं निरवधिसुखाय नमः अर्घं ।

अवधि मनःपर्यंय सु ज्ञान महा, दर्वादि विषैं मरजाद लहा ।
तुम ताहि उलंघ सुभावमई, निजबोध लहो जिस अन्त नहीं ।२२२।

ओं ह्रीं अतुलज्ञानाय नमः अर्घ ।

तिहुं काल तिहूं जगके सुखको, कर वार अनंत गुणा इन को ।
तुम एक समय सुखकी समता, नहीं पाय नमूं मन आनंदता ।२२३।

ओं ह्रीं अतुलसुखाय नमः अर्घं ।

नाराच छंद—सर्व जीव राशके सुभाव आप जान हो,
आपके सुभाव अंश और कौन ज्ञान हो ।
सो विशुद्ध भाव पाय जासकौ न अन्त हो,
राज हो सदीव देव चरण दास संत हो ।२२४।

ओं ह्रीं अतुलभावाय नमः अर्घं ।

आपकी गुणोघ वेलि फैलि है अलोकलौं,
शेपसे भ्रमाय पत्रकी न पाय नोकलौं ।
सो विशुद्ध भाव पाय जासकौ न अन्त हो,
राज हो सदीव देव चरण दास सन्त हो ॥ २२५।

ओं ह्रीं अतुलगुणाय नमः अर्घं ।

सूर्यको प्रकाश एक देश वस्तु भास ही,
आपको सुज्ञान भान सर्वथा प्रकाश ही ।
सो निशुद्ध भाव पाय जासकौ न अंत हो,
राज हो सदीव देव चरण दास संत हो ॥ २२६॥

ओं ह्रीं अतुलप्रकाशाय नमः अर्घं ।

तास रूपको गहो न फेरि जास नाश हो,
स्वात्मवासमें विलास आश त्रास नाश हो ।
सो विशुद्ध भाव पाय जासकौ न अन्त हो,
राज हो सदीव देव चरण दास सन्त हो ॥ २२७ ॥

ॐ ह्रीं अचलाय नमः अर्घं ।

सोरठा—मोहादिक रिपु जीति, निजगुण निधि सहजे लहो ।
विलसो सदा पुनीति, अचल रूप वंन्दों सदा ॥ २२८ ॥

ओं ह्रीं अचलगुणाय नमः अर्घं ।

उत्तम क्षाइक भाव, क्षय उपशम सब गइ विनशि ।

पायो सहज सुभाव, अचल रूप बन्दों सदा ॥ २२९ ॥

ओं ह्रीं अचलस्वभावाय नमः अर्घं ।

अथिर रूप संसार, त्याग सुथिर निज रूप गहि ।
रहो सदा अविकार, अचल रूप बन्दों सदा ॥ २३० ॥

ओं ह्रीं अचलस्वरूपाय नमः अर्घं ।

मोतीयादाम छन्द ।

निराश्रित स्वाश्रित आनंद धाम, परै परसो न परै कछु काम ।
अबिन्दु अबंधु अबंध अमंद, करूं पद वंद रहूं सुखवृन्द ॥२३१ ॥

ओं ह्रीं निरालम्बाय नमः अर्घं ।

अराग अदोष अशोक अभोग, अनिष्ट संयोग न इष्ट वियोग ।
अबिंदु अबंधु अबंध अमंद, करूं पद वन्द रहूं सुखवृन्द ॥२३२॥

ओं ह्रीं आलम्बरहिताय नमः अर्घं ।

अजीव न जीव न धर्म अधर्म, न काल अकाश लहै तिस धर्म ।
अबिन्दु अबंधु अबंध अमंद, करूं पद वंद रहूं सुखवृन्द ॥२३३॥

ओं ह्रीं निर्लेपाय नमः अर्घ ।

अवर्ण अकर्ण अरूप अकाय, अयोग असंयमता अकषाय ।
अविंदु अबंधु अबंध अमंद, करूं पद वंद रहूं सुखवृन्द ॥ २३४ ॥

ओं ह्रीं निष्कषायाय नमः अर्घ ।

न हो परसों रुष राग विभाव, निजातममें अवलीन स्वभाव ।
अविन्दु अबंधु अबंध अमन्द, करूं पदवन्द रहूं सुखवृन्द ॥ २३५॥

ओं ह्रीं आत्मरतये नमः अर्घ ।

दोहा—निज स्वरूपमें लीनता, ज्यों जल पुतली खार ।
गुप्त स्वरूप नमूं सदा, लहूं भवार्णव पार ॥ २३६ ॥

ॐ ह्रीं स्वरूपगुप्ताय नमः अर्घ ।

जोहै सोहै और नहीं, कछु निश्चय व्यवहार ।
शुद्ध द्रव्य परमातमा, नमूं शुद्धता धार ॥ २३७॥

ॐ ह्रीं शुद्धद्रव्याय नमः अर्घ ।

पूर्वोत्तर सन्तति तनी, भव भव छेद कराय।
असंसार पदको नमूं, यह भव वास नशाय॥ २३८॥

ओं ह्रीं असंसाराय नमः अर्घं।

नागरूपिणी तथा अर्धनाराच छन्द।

हरो सहाय कर्णको, सुभोगता विवर्णको।
निजातमीक एक ही, लहो अनन्द तास ही॥ २३९॥

ओं ह्रीं स्वानन्दाय नमः अर्घं।

न हो विभावता कदा, स्वभावमें सुखी सदा।
निजातमीक एक ही, लहो अनन्द तास ही॥ २४०॥

ओं ह्रीं स्वानन्दभावाय नमः अर्घं।

अछेद रूप सर्वथा, उपाधिकी नहीं व्यथा।
निजातमीक एक ही, लहो अनन्द तास ही॥ २४१॥

ओं ह्रीं स्वानंदस्वरूपाय नमः अर्घं।

दुभेदता न वेद ही, सचेतना अभेद ही।
निजातमीक एक ही, लहो अनन्द तास ही ॥ २४२ ॥
ओं ह्रीं स्वानंदगुणाय नमः अर्घं ।
न अन्यकी प्रवाह है, अचाह है न चाह है।
निजातमीक एक ही, लहो अनंद तास ही ॥ २४३ ॥
ओं ह्रीं स्वानंदसंतोषाय नमः अर्घं ।
सोरठा—रागादिक परिणाम, हैं कारण संसारके।
नाश लियो सुखधाम, नमत सदा भव भय हरूं ॥२४४ ॥
ओं ह्रीं शुद्धभावपर्यायाय नमः अर्घं ।
उदइक भाव विनाश, प्रगट कियो निज अर्थको।
स्वातम गुण परकाश, नमत सदा भव भय हरूं ॥ २४५ ॥
ओं ह्रीं स्वतंत्रधर्माय नमः अर्घं ।
निजगुण पर्ययरूप, स्वयं-सिद्ध परमातमा ।

राजत हैं शिव भूप, नमत सदा भव भय हरूं ॥ २४६ ॥
ओं ह्रीं आतमस्वभावाय नमः अर्घं ।

विमल विशद निज ज्ञान, है स्वभाव परिणतिमई ।
राजे हैं सुखखानि, नमत सदा भव भय हरूं ॥ २४७ ॥
ओं ह्रीं परमचित्परिणामाय नमः अर्घं ।

दर्श ज्ञानमई धर्म, चेतन धर्म प्रगट कहो ।
भेदाभेद सुपर्म, नमत सदा भव भय हरूं ॥ २४८ ॥
ओं ह्रीं चिद्रूपधर्माय नमः अर्घं ।

दर्शज्ञान गुणसार, जीवभूत परमातमा ।
राजत सब परकार, नमत सदा भव भय हरण ॥ २४९ ॥
ओं ह्रीं चिद्रूपगुणाय नमः अर्घं ।

अष्ट कर्म मल जार, दीप्तरूप निज पद लहो ।
स्वच्छ हेम उनहार, नमत सदा भव भय हरण ॥ २५० ॥
ओं ह्रीं परमस्नातकाय नमः अर्घं ।

रागादिक मल सोध, दोऊ विविध विधान विन।
लहो शुद्ध प्रतिबोध, नमत सदा भव भय हरण ॥ २५१ ॥
ओं ह्रीं स्नातकधर्माय नमः अर्घं।

विधि आवरण विनाश, दर्श ज्ञान परिपूर्ण हो।
लोकालोक प्रकाश, नमत सदा भव भय हरण ॥ २५२ ॥
ओं ह्रीं सर्वावलोकाय नमः अर्घं।

निजकर निजमें वास, सर्व लोकसों भिन्नता।
पायो शिव सुख रास, नमत सदा भव भय हरण ॥२५३॥
ओं ह्रीं लोकाग्रस्थिताय नमः अर्घं।

ज्ञान-भानकी जोति, व्यापक लोकालोकमें।
दर्शन विन उद्योत, नमत सदा भव भय हरण ॥ २५४ ॥
ओं ह्रीं लोकालोकव्यापकाय नमः अर्घं।

जो कछु धरत विशेष, सब ही सब आनन्दमय।

१२

क्लेश न भाव कलेश, नमूं सदा भव भय हरण ॥ २५५ ॥

ॐ ह्रीं अतुलभावाय नमः अर्घं ।

जिस आनन्दको पार, पावत नहीं यह जगतजन ।
सो पायो हितकार, नमत सदा भव भय हरण ॥ २५६ ॥

ओं ह्रीं आनंदविधानाय नमः अर्घं ।

---

* नीचे लिखा पाठ "क" प्रतिमें है ।

नित्य शर्म सुखकार, दर्शन ज्ञान चरित्रमय ।
मनसों दुविधा टार, नमत सदा भवभय हरो ॥ २५५ ॥

ओं ह्रीं रत्नत्रयसंयुक्ताय नमः अर्घं ।

सब जीवनके हेत, दशविधि धर्म बताइयो ।
जासों होय, सुचेत, आलस तजि धारण करो ॥ २५६ ॥

ओं ह्रीं दशधर्मसंयुक्ताय नमः अर्घं ।

दोहा—इत्यादिक आनन्द गुण, धारत सिद्ध अनन्त ।
तिन पद आठों दरवसों, पूजत हों निज सन्त ॥

ओं ह्रीं आनंदपूर्णाय नमः अर्घं ।

ॐ ह्रीं षट्पंचाशत्अधिकद्विशतगुणयुक्ताय सिद्धाय महार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

(यहां १०८ वार जाप देना चाहिये ।)

अथ जयमाला ।

दोहा—थावर शब्द विषय धरै, त्रस थावर पर्याय ।
यो न होय तो तुम सुगुण, हम किहविधि वर्णाय ।१।
तिसपर जो कछु कहत हैं, केवल भक्ति प्रमान ।
बालक जल शशिबिंबको, चहत ग्रहण निज पान । २ ।

पद्धडी छन्द ।

जय पर जग निमित्त व्यवहार त्याग, पायो निज शुद्ध स्वरूप भाग ।
जय जग पालन विन जगत देव, जय दयाभाव विन शांतिभेव ॥१॥
परसुख दुखकरण कुरीति टार, परसुख दुख कारण शक्ति धार ।
फुनि फुनि नव नव नित जन्मरीत, बिन सर्वलोक थापी पुनीत ।२।

जय लीला रास विलास नाश, स्वाभाविक निजपद रमण बास।
शयनासन आदि क्रिया कलाप, तज सुखी सदा शिवरूप आप ।३।
विन कामदाह नहीं नार भोग, निरद्वंद निजानंद मगन योग।
वरमाल आदि श्रृंगार रूप, विन शुद्ध निरंजन पद अनूप ॥ ४ ॥
जय धर्म भर्म वन हन कुठार, परकाश पुंज चिद्रूप सार।
उपकरण हरण द्व सलिलधार, स्वै शक्ति प्रभाव उदय अपार ॥ ५॥
नभ सीम नहीं अरु होत होउ, नहीं काल अन्त लहो अन्त सोउ।
पर तुम गुण रास अनंत भाग, अक्षय विधि राजत अवधि त्याग।६।
आनंद जलधि धारा प्रवाह, विज्ञानसुरी सुखद्रह अथाह।
निज शांति सुधारस परम खान, समभाव वीज उत्पत्ति थान।७।
निज आत्मलीन विकलप विनाश, शुद्धोपयोग परिणति प्रकाश।
द्रग ज्ञान असाधारण स्वभाव, स्पर्श आदि परगुण अभाव।८।
निज गुणपर्यय समुदाय स्वामि, पायो अखण्ड पद परम धाम।

अव्यय अबाध पद स्वयं सिद्ध, उपलब्धि रूप धर्मी प्रसिद्ध। ९।
एकाग्ररूप चिंता निरोध, जे ध्यावैं पावैं स्वयं बोध।
गुण मात्र संत अनुराग रूप, यह भाव देहु तुम पद अनूप। १०।
घत्ता--दोहा—सिद्ध सुगुण सुमरण महा, मन्त्रराज है सार।
सर्व सिद्ध दातार है, सर्व विघन हर्तार। ११।
ओं ह्रीं अर्हं षट्पंचाशदधिकद्विशद्दलोपरिस्थितसिद्धेभ्यो नमः अर्घं नि०।
तीन लोक चूडामणी, सदा रहो जयवन्त।
विघन हरण मंगल करण, तुम्हें नमैं नित संत। १२।

इत्याशीर्वादः।

इति षष्ठी पूजा सम्पूर्ण।

अथ सप्तमी पूजा प्रारम्भ ।

छप्पय छन्द—ऊरध अधो सरेफ बिंदु हंकार विराजे,
अकारादि स्वर लिप्त कर्णिका अन्त सु छाजे ।
वर्गन पूरित वसुदल अम्बुज तत्त्व संधि धर,
अग्रभागमें मंत्र अनाहत सोहत अतिवर ।
फुनि अन्त ही वेढ्यो परम सुर, ध्यावत ही अरि नागको ।
ह्वै केहरि सम, पूजन निमित्त, सिद्धचक्र मंगल करो ॥ १ ॥

ओं ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धपरमेष्ठिन् द्वादशाधिकपंचशत ५१२ गुणसंयुक्त विराजमान अत्रावतरावतर संवौषट् (आह्वाननम्) अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः (स्थापनं) अत्र मम ससन्निहितो भव भव वषट् (सन्निधीकरणं)

दोहा—सूक्ष्मादि गुण सहित हैं, कर्म रहित निररोग ।
सिद्धचक्र सो थाप हूं, मिटै उपद्रव योग ॥ २ ।

अथाष्टक ।

चाल-बारामासा छन्द ।

सुरमणि कुम्भ क्षीरभर धारत, मुनि मन शुद्ध प्रवाह बहावहीं ।
हम दोऊ विधि लाइक नाहीं, कृपा करहु लहि भवतट भावहिं ॥
शक्ति सारु सामान्य नीरसों, पूजूं हूं हे शिवतियके स्वामी ।
द्वादश अधिक पंचशत संख्यक, नाम उचारत हूं सुखधामी ॥ १

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने ५१२ गुण सहित श्री समत्तणाणदंसण वीर्य सुहमत्तहेव अवग्गहणं अगुरुलघुमव्वावाहं जन्मजरारोगविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

नतु कोऊ चन्दन नतु कोऊ केसरि, भेट किये भवपार भयो है ।
केवल आप कृपा द्रग हीसों, यह अथाह दधि पार लयो है ॥
रीति सनातन भक्तिनकी लख, चन्दनकी यह भेट धरामी ।
द्वादश अधिक पंचशत संख्यक, नाम उचारत हूं सुखधामी ॥

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने ५१२ गुणसंयुक्ताय श्रीसमत्तणाणदंसण वीर्य सुहमत्तहेव अवग्गहणं अगुरुलघुमव्वावाहं संसारतापविनाशनाय चंदनं नि० ॥२॥

इन्द्रादिक पद हू अनवस्थित, दीखत अन्तर रुचि न करैं हैं।
केवल एकहि स्वच्छ अखण्डित, अक्षयपदकी चाह धरैं हैं॥
तातें अक्षतसों अनुरागी, हूं सो तुम पद पूज करामी।
द्वादश अधिक पंचशत संख्यक नाम उचारत हूं सुखधामी॥३

ओं ह्रीं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने ५१२ गुण संयुक्ताय श्रीसमत्तणाणदंसण वीर्य सुहमत्तेव अनग्गहणं अगुरुलघुमव्वावाहं अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं नि०।

पुष्प बाण हीसो मन्मथ जग, विजई जगमें नाम धरावै।
देखहु अद्भुत रीति भक्तकी, तिस ही भेट धर काम हनावे॥
शरणागतिकी चूक न देखी, तातें पूज्य भए शिरनामी॥
द्वादश अधिक पंचशत संख्यक, नाम उचारत हूं सुखधामो॥४

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने ५१२ गुण संयुक्ताय श्री समत्तणाणदंसण वीर्य सुहमत्तेव अनग्गहणं अगुरुलघुमव्वावाहं कामबाणविनाशनाय पुष्पं नि०।

हनन असाता पीर नहीं यह, भीर परै चरु भेटन लायो।
भक्त अभिमान मेंट हो स्वामी, यह भव कारण भाव सतायो॥

मम उद्यम करि कहा आप ही, सो एकाकी अर्थ लहामी ।
द्वादश अधिक पंचशत संख्यक, नाम उचारत हूं सुखधामी ।५।

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने ५१२ गुण संयुक्ताय श्रीसमत्तणाणदंसण वीर्य सुहमत्तहेव अवग्गहणं अगुरुलघुमव्वावाहं क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं नि० ।

पूरण ज्ञानानन्द ज्योति घन, विमल गुणातम शुद्ध स्वरूपी ।
हो तुम पूज्य भये हम पूजक, पाय विवेक प्रकाश अनूपी ॥
मोह अन्ध विनसो तिह कारण, दीपनसों अर्चूं अभिरामी ।
द्वादश अधिक पंचशत संख्यक, नाम उचारत हूं सुखधामी ।६।

ओं ह्रीं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने ५१२ गुणसंयुक्ताय श्रीसमत्तणाण दंसण वीर्य सुहमत्तहेव अवग्गहणं अगुरुलघुमव्वावाहं मोहांधकारविनाशनाय दीपं नि० ।

धूप वरैं उघरैं प्रजरैं मणि, हेम धरैं तुम पदपर वारूं ।
बारबार आवर्त जोरि करि, धार धार निज शीश न हारूं ॥
धूम्र धार समतन रोमांचित, हर्ष सहित अष्टांग नमामी ।
द्वादश अधिक पंचशत संख्यक, नाम उचारत हूं सुखधामी ।७।

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने ५१२ गुणसंयुक्ताय श्रीसमत्तणाणदंसण वीर्य सुहमसहेव अवग्गहणं अगुरुलघुमव्वाबाहं अष्टकर्मदहनाय धूपं नि० ।

तुम हो वीतराग निज पूजन, बन्दन थुति परवाह नहीं है ।
अरु अपने समभाव वहै कछु, पूजा फलकी चाह नहीं है ॥
तोभी यह फल पूजि फलद, अनिवार निजानन्द कर इच्छामी ।
द्वादश अधिक पंचशत संख्यक, नाम उचारत हूं सुखधामी ॥८

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने ५१२ गुणसंयुक्ताय श्रीसमत्तणाण दंसण वीर्य सुहमत्तहेव अवग्गहणं अगुरुलघुमव्वाबाहं मोक्षफलप्राप्तये फलं नि० ।

तुमसे स्वामीके पद सेवत, यहविधि दुष्ट रंक कहा कर है ।
ज्यों मयूरध्वनि सुनि अहि निज बिल, विलय जाय छिन बिलम न धर है ।
तातें तुम पद अर्घ उतारण, विरद उचारण करहुं मुदामी ।
द्वादश अधिक पंचशत संख्यक, नाम उचारत हूं सुखधामी ।९।

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने ५१२ गुणसंयुक्ताय श्रीसमत्तणाणदंसण वीर्य सुहम-त्तहेव अवग्गहणं अगुरुलघुमव्वावाहं सर्वसुखप्राप्तये अर्घं नि०।

गीता छन्द।

निर्मल सलिल शुभ वास चन्दन, धवल अक्षत युत अनी,
शुभ पुष्प मधुकर नित रमें, चरु प्रचुर स्वादसु विधि घनी।
वर दीपमाल उजाल धूपायन रसायन फल भलै।
करि अर्घ सिद्ध समूह पूजत, कर्मदल सब दलमलै।
ते कर्मवर्त नशाय युगपति, ज्ञान निर्मल रूप है॥
दुख जन्म टाल अपार गुण, सूक्ष्म सरूप अनूप है।
कर्माष्ट विन त्रैलोक्य पूज्य, अछेद शिव कमलापती॥
मुनि ध्येय सेय अमेय चाहूं गुण-गेह द्यो हम शुभ मती॥

ॐ ह्रीं अर्ह सिद्धचक्राधिपतये नमः समत्तणाणादि अट्ठगुणाणं पूर्णपदप्राप्तये महार्घं।

पांचसैबारह गुणसहित नाम अर्घ

अथ नामावलि प्रत्येक अर्घ

अर्द्ध छन्द जोगीरासा ।

लोकत्रय करि पूज्य प्रधाना, केवल ज्योति प्रकाशी ।
भव्यन मन तम मोह विनाशक, बन्दूं शिव थल वासी ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं अरहंताय नमः अघ ।

सुरनर मुनिमन कुमुदन मोदन, पूरण चन्द्र समाना ।
हो अर्हंत जात जन्मोत्सव, बन्दूं श्री भगवाना ॥ २ ॥

ॐ ह्रीं अर्हज्जाताय नमः अर्घं ।

केवल दर्श ज्ञान किरणावलि,-मंडित तिहुं जग चन्दा ।
मिथ्या तप हर जल आदिक करि, बन्दूं पद अरविन्दा ॥ ३॥

ॐ ह्रीं अर्हच्चिद्रूपाय नमः अर्घं ।

घाति कर्म रिपु जारि छारकर, स्वै चतुष्ट पद पायो ।

निज स्वरूप चिद्रूप गुणातम, हम तिन पद शिर नायो ॥ ४ ॥

ओं ह्रीं अर्हच्चिद्रूपगुणाय नमः अर्घं ।

ज्ञानावरणी पटल उघारत, केवल भान उगायो ।

भव्यनको प्रतिबोध उधारे, बहुर मुक्ति पद पायो ॥ ५ ॥

ओं ह्रीं अर्हत्ज्ञानाय नमः अर्घं ।

धर्म अधर्म तास फल दोनों, देखो जिम कर रेखा ।

बतलायो परतीत विषय करि, यह गुण जिनमें देखा ॥ ६ ॥

ॐ ह्रीं अर्हद्दर्शनाय नमः अर्घं ।

मोह महा द्रढ बंध उघारो, करभिसतंतु समाना ।

अतुल बली अरहंत कहायो, पाय नमूं शिवथाना ॥ ७ ॥

ओं ह्रीं अर्हद्वीर्याय नमः अर्घं ।

युगपति लोकालोक विलोकन, है अनन्त द्रगधारी ।

गुप्तरूप शिवमग दरसायो, तिनपद धोक हमारी ॥ ८ ॥

ॐ ह्रीं अर्हद्दर्शनगुणाय नमः अर्घं ।

घटपटादि सब परकाशत जद, हो रवि किरण पसारा ।
तेसो ज्ञान भान अरहंतको, ज्ञेय अनंत उघारा ॥ ९ ॥

ओं ह्रीं अर्हज्ज्ञानगुणाय नमः अर्घं ।

आसन शयन पान भोजन विन, दीस देह अरहंता ।
ध्यान वान कर तान हान विधि, भए सिद्ध भगवंता ॥१०॥

ॐ ह्रीं अर्हद्वीर्यगुणाय नमः अर्घं ।

सप्त तत्त्व षट् द्रव्य भेद सब, जानत संशय खोई ।
ताकरि भव्य जीव संबोधे, नमूं भये सिद्ध सोई ॥ ११ ॥

ॐ ह्रीं अर्हत्सम्यक्त्वगुणाय नमः अर्घं ।

ध्यान सलिलसों धोय लोभ मल, शुद्ध निजातम कीनो ।
परम शौच अरहंत स्वरूपी, पाय नमूं शिव लीनो । १२ ।

ओं ह्रीं अरहंतशौचगुणाय नमः अर्घं।

नय प्रमाण श्रुतज्ञान प्रकारा, द्वादशांग जिनवानी ।
प्रगटायो परतक्ष ज्ञानमें, नमूं भये शिव थानी ॥ १३ ।
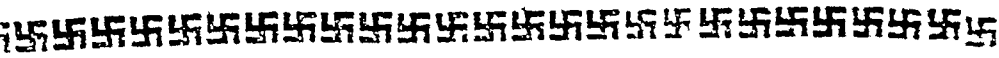
ॐ ह्रीं अर्हद्द्वादशांगाय नमः अर्घं ।

मन इन्द्रिय विन सकल चराचर, जगपद करि प्रगटायो ।
यह अरहन्त मती कहलायो, बंदूं तिन शिव पायो ॥ १४ ॥

ॐ ह्रीं अर्हदभिनिबोधकाय नमः अर्घं ।

अनुभव सम नहीं होत दिव्यध्वनि, ताको भाग अनंता ।
जानो गणधर यह श्रुत अवधी, पाइ नमूं अरहन्ता ॥ १५ ॥

ॐ ह्रीं अर्हत्श्रुतावधिगुणाय नमः अर्घं ।

सर्वावधि निधि वृद्धि प्रवाही, केवल सागर मांही ।
एक भयो अरहन्त अवधि यह, मुक्त भए नमि ताही ॥ १६ ॥

ओं ह्रीं अर्हद्अवधिगुणाय नमः अर्घं ।

अति विशुद्ध मय विपुलमती लहि, हो पूर्वोक्त प्रकारा ।
यह अरहन्त पाय मनः पर्यय, नमूं भए भवपारा ॥१७॥

ओं ह्रीं अर्हच्छुद्धमनःपर्ययभावाय नमः अर्घं ।

मोह मलिनता जग जिय नाशै, केवलता गुण पावैं ।

सर्व शुद्धता पाइ नमत हैं, हम अरहन्त कहावैं ॥ १८ ॥

ओं ह्रीं अरहन्तकेवलगुणाय नमः अर्घं ।

मोह जनित सो रूप विरूपी, तिस विन केवलरूपा ।
श्री अरहन्त रूप सर्वोत्तम, बन्दूं हो शिवभूपा ॥ १९ ॥

ओं ह्रीं अर्हत्केवलस्वरूपाय नमः अर्घं ।

तास विरोधी कर्म जीति करि, केवल दरशन पायो ।
इस गुण सहित नमत तुम पद प्रति, भावसहित शिर नायो ॥२०॥

ओं ह्रीं अर्हत्केवलदर्शनाय नमः अर्घं ।

निर आवरण करण विन जाको, शरण हरण नहीं कोई ।
केवलज्ञान पाय शिव पायो, पूजत हैं हम सोई ॥ २१ ॥

ॐ ह्रीं अर्हत्केवलज्ञानाय नमः अर्घं ।

अगम अतीर भवोदधि उतरे, सहज ही गोखुर मानो ।
केवल बल अरहन्त नमें हम, शिव थल बास करानो ॥ २२ ॥

ॐ ह्रीं अर्हत्केवलवीर्याय नमः अर्घं ।

सब विधि अपने विघ्न निवारण, औरन विघ्न विडारी।
मंगलमय अर्हंत सर्वदा, नमूं मुक्ति पदधारी ॥ २३ ॥
ॐ ह्रीं अर्हन्मंगलाय नमः अर्घं ।

चक्षु आदि सब विघन विदूरित, छाइक मंगलकारी।
यह अर्हंत दर्श पायो मैं, नमूं भये शिव धारी ॥ २४ ॥
ॐ ह्रीं अर्हन्मंगलदर्शनाय नमः अर्घं ।

निजपर संशय आदि अंत तिन, निरावरण विकसानो।
मंगलमय अरहंत ज्ञान है, बन्दूं शिव सुख थानो ॥ २५ ॥
ॐ ह्रीं अर्हन्मंगलज्ञानाय नमः अर्घं ।

परकृत जरा आदि संकट विन अतुल बली अर्हंता।
नमूं सदा शिवनारीके संग, सुखसों केलि करंता ॥ २६ ॥
ओं ह्रीं अर्हन्मंगलवीर्याय नमः अर्घं ।

पापरूप एकान्त पक्ष विन, सर्व तत्त्व परकाशी।

जा विन और अज्ञान सकल, जग कारण बंध प्रधाना ।
नमूं पाइ अरहन्त मुक्ति पद, मंगल केवलज्ञाना ॥ ३२ ॥
ओं ह्रीं अर्हन्मंगलकेवलज्ञानाय नमः अर्घं ।

निरावरण निरखेद निरन्तर, निराबाधमई राजैं ।
केवलरूप नमूं सब अघहर, श्री अरहन्त विराजैं ॥ ३३ ॥
ओं ह्रीं अर्हन्मंगलकेवलस्वरूपाय नमः अर्घं ।

चक्षु आदि सब भेद विघन हर, क्षायक दर्शन पाया ।
श्री अरहन्त नमूं शिववासी, इह जग पाप नशाया ॥३४॥
ॐ ह्रीं अर्हन्मंगलकेवलदर्शनाय नमः अर्घं ।

जग मंगल सब विघन रूप है, इक केवल अरहन्ता ।
मंगलमय सब मंगलदायक, नमूं कियो जग अन्ता ॥३५॥
ओं ह्रीं अर्हन्मंगलकेवलाय नमः अर्घं ।

केवलरूप महामंगलमय, परम शत्रु छयकारा ।
सो अरहन्त सिद्धपद पायो, नमूं पाय भवपारा ॥ ३६ ॥

ॐ ह्रीं अर्हन्मंगलकेवलरूपाय नमः अर्घं ।

शुद्धातम निजधर्म प्रकाशी, परमानन्द बिराजैं ।
सो अरहन्त परम मंगलमय, नमूं शिवालय राजैं ॥ ३७ ॥

ॐ ह्रीं अर्हन्मंगलधर्माय नमः अर्घं ।

सब विभावमय विघन नाशकर, मंगल धर्म स्वरूपा ।
सो अरहन्त भये परमातम, नमूं त्रियोग निरूपा ॥ ३८ ॥

ॐ ह्रीं अर्हन्मंगलधर्मस्वरूपाय नमः अर्घं ।

सर्व जगत सम्बन्ध विघन नहीं, उत्तम मंगल सोई ।
सो अरहन्त भये शिववासी, पूजत शिवसुख होई ॥ ३९ ॥

ओं ह्रीं अर्हन्मंगलउत्तमाय नमः अर्घं ।

लोकातीत त्रिलोक पूज्य जिन, लोकोत्तम गुणधारी ।
लोकशिखर सुखरूप विराजैं, तिनपद धोक हमारी ॥ ४० ॥

ओं ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमाय नमः अर्घं ।

लोकाश्रित गुण सब विभाव हैं, श्री जिनपदसों न्यारे ।

तिनको त्याग भये शिव बन्दूं, काटो बन्ध हमारे ॥ ४१ ॥

ओं ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमगुणाय नमः अर्घं ।

मिथ्या मतिकर सहित ज्ञान, अज्ञान जगतमें सारो ।

ता विन ज्ञान अरहन्त कहाये, लोकोत्तम पूज हमारो ॥४२ ॥

ॐ ह्रीं अर्हत्लोकोत्तमज्ञानाय नमः अर्घं ।

क्षायक दरशन है अरहन्ता, और लोकमें नाहीं ।

सो अरहन्त भये शिववासी, लोकोत्तम सुखदाई ॥ ४३ ॥

ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमदर्शनाय नमः अर्घं ।

कर्मबलीने सब जग बांध्यो, ताहि हनो अरहन्ता ।

यह अरहन्त वीर्य लोकोत्तम, पायो सिद्ध अनन्ता ॥ ४४ ॥

ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमवीर्याय नमः अर्घं ।

अक्षयतीत ज्ञान लोकोत्तम, परमातम पद मूला ।

सो अरहंत नमूं शिवनाइक, पाऊँ भवदधि कूला ॥ ४५ ॥

ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमअभिनिबोधकाय नमः अर्घं ।

परमावधि ज्ञानसो छानी, केवलज्ञान प्रकाशी ।
यहै अवधि अरहन्त नमूं मैं, संशय तमको नाशी ॥ ४६ ॥

ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमअवधिज्ञानाय नमः अर्घ ।

जो अरहन्त धरै मनपर्यय, सो केवलके माहीं ।
साक्षात् शिवरूप नमो मैं, अन्य लोकमें नाहीं ॥ ४७ ॥

ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तममनःपर्ययज्ञानाय नमः अर्घ ।

तीन लोकमें सार श्री अरहंत स्वयंभू ज्ञानी ।
नमूं सदा शिवरूप आप हो, भविजन प्रति सुखदानी ॥ ४८ ॥

ओं ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमकेवलज्ञानाय नमः अर्घ ।

सर्वोत्तम तिहुं लोक प्रकाशित, केवलज्ञान स्वरूपी ।
सो अरहन्त नमूं शिवनायक, सुखप्रद सार अनूपी ॥ ४९ ॥

ओं ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमकेवलस्वरूपाय नमः अर्घ ।

ज्ञान तरंग अभंग वहै लोकोत्तम धार अनूपी ।
सो अरहन्त नमूं शिवनायक, सुखप्रद सार अनूपी ॥ ५० ॥

ओं ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमकेवलपर्यायाय नमः अर्घं ।

असाधारण गुण पर्यय सहित सब केवलज्ञान सरूपी ।
सो अरहंत नमूं शिवनायक, सुखप्रद सार अनूपी ॥ ५१ ॥

ओं ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमकेवलद्रव्याय नमः अर्घं ।

जगजिय सब अशुद्ध कहो, एक केवल शुद्ध सरूपी ।
सो अरहन्त नमूं शिवनायक, सुखप्रद सार अनूपी ॥ ५२ ॥

ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तकेवलाय नमः अर्घं ।

विविध कुरूप सर्व जगवासी, केवल स्वयं सरूपी ।
सो अरहंत नमूं शिवनायक, सुखप्रद सार अनूपी ॥ ५३ ॥

ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमकेवलस्वरूपाय नमः अर्घं ।

हीनाधिक धिक धिक जग प्राणी, धन्य एक ध्रुवरूपी ।
सो अरहंत नमूं शिवनायक, सुखप्रद सार अनूपी ॥ ५४ ॥

ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमध्रुवभावाय नमः अर्घं ।

दोहा—संसारिनके भाव सब, बन्ध हेत वरणाय ।

मुक्तिरूप अरहंतके, भाव नमूं सुखदाय ॥ ५५ ॥

ओं ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमभावाय नमः अर्घं ।

कबहुं न होय विभावमय, सो थिर भाव जिनेश ।

मुक्तिरूप प्रणमूं सदा, नाशे विघन विशेष ॥ ५६ ॥

ओं ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमस्थिरभावाय नमः अर्घं ।

जा सेवत वेवत स्वसुख, सो सर्वोत्तम देव ।

शिववासी नाशी त्रिजग–फांसी नमहूं एव ॥ ५७ ॥

ओं ह्रीं अर्हच्छरणाय नमः अर्घं ।

जिन ध्यायो तिन पाइयो, निश्चय सो सुखरास ।

शरण स्वरूपी जिन नमूं, करैं सदा शिववास ॥ ५८ ॥

ओं ह्रीं अर्हच्छरणरूपाय नमः अर्घं ।

पद्धडी छन्द ।

स्वाभाविक गुण अरहंत गाय, जासों पूरण शिवसुख लहाय ।

हम शरण गही मन वचन काय, नित नमैं संत आनंद पाय ।५९।

ओं ह्रीं अर्हद्गुणशरणाय नमः अर्घ।

विन केवलज्ञान न मुक्ति होय, पायो है श्री अरहन्त जोय।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमैं सन्त आनन्द पाय।६०।

ओं ह्रीं अर्हज्ज्ञानशरणाय नमः अर्घ।

प्रत्यक्ष देख सर्वज्ञ देव, भाख्यो है शिव मारग असेव।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमैं सन्त आनन्द पाय।६१।

ओं ह्रीं अर्हद्दर्शनशरणाय नमः अर्घ।

संसार विषम बन्धन उछेद, अरहन्त वीर्य पायो अखेद।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमैं सन्त आनन्द पाय।६२।

ॐ ह्रीं अर्हद्वीर्यशरणाय नमः अर्घ।

सब कुमति विगत मत जिन प्रतीत, हो जिसते शिवसुख दे अभीत।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमैं सन्त आनन्द पाय।६३

ओं ह्रीं अर्हद्द्वादशांगशरणाय नमः अर्घ।

अनुमानादिक साधित विज्ञान, अरहन्त मती प्रत्यक्ष जान ।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमैं सन्त आनन्द पाय ।६४।
ओं ह्रीं अर्हदभिनिबोधकशरणाय नमः अर्घं ।

जिन भाषित श्रुत सुनि भव्य जीव, पायो शिव अविनाशी सदीव ।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमैं सन्त आनन्द पाय ॥६५॥
ॐ ह्रीं अर्हच्छ्रुतशरणाय नमः अर्घं ।

प्रतिपक्षी सब जीते कषाय, पायो अवधि शिव-सुख कराय ।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमैं सन्त आनन्द पाय ॥ ६६।
ॐ ह्रीं अर्हदवधिबोधशरणाय नमः अर्घं ।

मुनि लहैं गहैं परिणाम श्वेत, जिन मनपर्यय शिव वास देत ।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमैं सन्त आनन्द पाय ।६७।
ॐ ह्रीं अर्हन्मनःपर्ययशरणाय नमः अर्घं ।

अवर्ण रहित प्रत्यक्ष ज्ञान, शिवरूप केवली जिन सुजान ।

हम शरण गही मन वचन काय, नित नमैं सन्त आनन्द पाय।६८।

ॐ ह्रीं अर्हत्केवलशरणाय नमः अर्घं ।

मुनि केवलज्ञानी निज अराध, पावैं शिव-सुख निश्चय अबाध।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमैं सन्त आनन्द पाय।६९।

ओं ह्रीं अर्हत्केवलशरणस्वरूपाय नमः अर्घं ।

शिव-सुखदायक निज आत्म ज्ञान, सो केवल पावै जिन महान।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमैं सन्त आनन्द पाय।७०।

ओं ह्रीं अर्हत्केवलधर्मशरणाय नमः अर्घं ।

यह केवल गुण आतम स्वभाव, अरहन्तन प्रति शिव-सुख उपाव।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमैं सन्त आनन्द पाय।७१।

ओं ह्रीं अर्हत्केवलगुणशरणाय नमः अर्घं ।

संसार रूप सबविघन टार, मंगल गुण श्री जिन मुक्तिकार।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमैं सन्त आनन्द पाय।७२।

ओं ह्रीं अर्हन्मंगलगुणशरणाय नमः अर्घ।

छय उपशम ज्ञानी विघन रूप, ता विन जिन ज्ञानी शिव सुरूप।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमैं सन्त आनन्द पाय।७३।

ॐ ह्रीं अर्हन्मंगलज्ञानशरणाय नमः अर्घ।

अरहन्त दर्श मंगल स्वरूप, तासों दरशै शिव-सुख अनूप।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमैं सन्त आनन्द पाय।७४।

ओं ह्रीं अर्हन्मंगलदर्शनशरणाय नमः अर्घ।

अरहन्त बोध है मंगलीक, शिव मारग प्रति वरते अलीक।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमैं सन्त आनन्द पाय।७५।

ओं ह्रीं अर्हन्मंगलबोधशरणाय नमः अर्घ।

निज ज्ञानानन्द प्रवाह धार, वरते अखण्ड अव्यय अपार।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमैं सन्त आनन्द पाय।७६।

ओं ह्रीं अर्हन्मंगलकेवलशरणाय नमः अर्घ।

जाविन तिहुं लोक न और ठाम, भव सिंधु तरण तारण प्रकाम।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमैं सन्त आनन्द पाय।७७।

ओं ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमशरणाय नमः अर्घं।

स्वाभाविक भव्यन प्रति दयाल, विच्छेद करण संसार जाल।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमैं सन्त आनन्द पाय।७८।

ओं ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमगुणशरणाय नमः अर्घ।

तुम विन समरथ तिहुं लोकमांहि, भवसिंधु उतारण और नाहिं।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमैं सन्त आनंद पाय॥७९॥

ओं ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमवीर्यशरणाय नमः अर्घं।

विन परिश्रम तारण तरण होय, लोकोत्तम अद्भुत शक्ति सोय।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमैं सन्त आनंद पाय॥८०॥

ओं ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमवीर्यगुणशरणाय नमः अर्घं।

अप्रसिद्ध कुनय अल्पज्ञ भास, ताको विनाश शिवमग प्रकाश।

हम शरण गही मन वचन काय, नित नमैं सन्त आनंद पाय ॥८१॥
ओं ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमद्वादशांगशरणाय नमः अर्घं ।

सब कुनय कुपक्ष कुसाध्य नाश, सत्यारथ मल कारण प्रकाश।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमैं सन्त आनंद पाय ॥८२॥
ओं ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमअभिनिबोधकाय नमः अर्घं ।

मिथ्यारत प्रकृति अवधि विनाश, लोकोत्तम अवधिको प्रकाश।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमैं सन्त आनंद पाय ॥८३॥
ओं ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमअवधिशरणाय नमः अर्घं ।

जो मनपर्यय शिव मंगल लहाय, लोकोत्तम श्रीगुरु सो कहाय।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमैं सन्त आनन्द पाय ॥८४॥
ओं ह्रीं अर्हल्लोकोत्तममनःपर्ययशरणाय नमः अर्घं ।

आवरणतीत प्रत्यक्ष ज्ञान, है सेवनीक जगमें प्रधान।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमैं संत आनंद पाय ॥८५॥

ओं ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमकेवलज्ञानशरणाय नमः अर्घं ।

हो बाह्य विभव सुरकृत अनूप, अन्तर लोकोत्तम ज्ञानरूप।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमैं सन्त आनन्द पाय ।८६।

ओं ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमविभूतिप्रधानशरणाय नमः अर्घं ।

रतनत्रय निमित मिलो अबाध, पायो निज आनन्द धर्म साथ।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमैं सन्त आनन्द पाय ।८७।

ओं ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमविभूतिधर्मशरणाय नमः अर्घं ।

सुख ज्ञान वीर्य दर्शन सुभाव, पायो सब कर प्रकृती अभाव ।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमैं सन्त आनन्द पाय ।८८।

ओं ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमअनन्तचतुष्टयशरणाय नमः अर्घं ।

अडिल्ल ।

दर्श ज्ञान सुख बल निज गुण ये चार हैं,
आतमीक परधान विशेष अपार हैं।

इनहींसो हैं पुज्य सिद्ध परमेश्वरा,

हम हूं यह गुण पाय नमन यातैं करा ।८९।

ओं ह्रीं अर्हदनन्तगुणचतुष्टयाय नमः अर्घं ।

क्षयोपशम सम्बाधित ज्ञान कलाहरी,

पूरण क्षायक स्वयंबुद्धि श्रीजिनवरी ।

इनहीसों हैं पूज्य सिद्ध परमेश्वरा,

हम हूं यह गुण पाय नमन यातैं करा ॥९०॥

ॐ ह्रीं अर्हन्निजज्ञानस्वयंभवे नमः अर्घं ।

जनमत ही दश अतिशय शासनमें कही,

स्वयं शक्ति भगवान आप तिनको लही।

इनहीसो हैं पूज्य सिद्ध परमेश्वरा,

हम हूं यह गुण पाय नमन यातें करा ॥ ९१ ॥

ॐ ह्रीं अर्हद्दशअतिशयस्वयंभुवे नमः अर्घं ।

दश अतिशय के घाति कर्मको छये करैं,
महा विभवको पाय मोक्ष नारी वरैं।
इनहींसो हैं पूज्य सिद्ध परमेश्वरा,
हम हूं यह गुण पाय नमन यातैं करा ॥ १२ ॥
ओं ह्रीं अर्हद्दशअतिशयघातिक्षयाय नमः अर्घ।
केवल विभव उपाय प्रभू जिनपद लहो,
चौदै अतिशय देवन करि सेवन कियो।
इनहींसो हैं पूज्य सिद्ध परमेश्वरा,
हम हूं यह गुण पाय नमन यातैं करा ॥ १३ ॥
ओं ह्रीं अर्हच्चतुर्दशअतिशयदेवकृताय नमः अर्घ।
चौतीस अतिशय जे पुराण बरनी महा,
मुक्ति समाज अनूपम श्रीगुरुने कहा।

इनहींसो हैं पूज्य सिद्ध परमेश्वरा,
हम हूं यह गुण पाय नमन यातें करा ॥ १४ ॥
ओं ह्रीं अर्ह चतुस्त्रिंशदतिशयविराजमानाय नमः अर्घ ।

डालर छन्द ।

लोकालोक आतम सम जानो, ज्ञानानंद सुगुण पहिचानो ।
सो अरहन्त सिद्धपद पाया, भाव सहित हम शीश नवाया। १५
ओं ह्रीं अर्हज्ज्ञानानन्दगुणाय नमः अर्घं ।

समरस सुथिर भाव उद्धारा, युगपति लोकालोक निहारा ।
सो अरहन्त सिद्धपद पाया, भाव सहित हम शीश नवाया ॥१६।
ओं ह्रीं अर्हद्ध्यानानन्तध्येयाय नमः अर्घं ।

इक इक गुणका भाव अनन्ता, पर्ययरूप सो है अरहन्ता ।
सो अरहन्त सिद्धपद पाया, भाव सहित हम शीश नवाया। १७
ओं ह्रीं अर्हदनंतगुणाय नमः अर्घं ।

उत्तर गुण सब लख चौरासी, पूरण चारित भेद प्रकाशी।
सो अरहन्त सिद्धपद पाया, भाव सहित हम शीश नवाया।९८
ओं ह्रीं अर्हत्पदअनन्तगुणाय नमः अर्घं ।

आतम शक्तिजास करि छीनी, तास नाश प्रभुताई लीनी।
सो अरहन्त सिद्धपद पाया, भाव सहित हम शीश नवाया।९९।
ओं ह्रीं अर्हत्परमात्मने नमः अर्घं।

निज गुण निज ही माहि समाये, गणधरादि वरनन करि नाये।
सो अरहन्त सिद्धपद पाया, भाव सहित हम शीश नवाया ॥
ओं ह्रीं अर्हद्गुणस्वरूपाय नमः अर्घं ॥ १०० ॥

दोधक छन्द ।

जो निज आतम साधु सुखाई, सो जगतेश्वर सिद्ध कहाई।
लोक शिरोमणि है शिवस्वामी. भावसहित तुमको प्रणमामी।
ओं ह्रीं सिद्धेभ्यो नमः अर्घं ॥१०१॥

सरव विरूप विरुद्ध सरूपी, स्वातम रूप विशुद्ध अनूपी।
लोक शिरोमणि है शिवस्वामी, भावसहित तुमको प्रणमामी।

ओं ह्रीं सिद्धस्वरूपेभ्यो नमः अर्घं ॥१०२॥

पराश्रित सर्व विभाव निवारा, स्वाश्रित सर्व अबाध अपारा।
लोक शिरोमणि है शिवस्वामी, भावसहित तुमको प्रणमामी।१०३।

ॐ ह्रीं सिद्धगुणेभ्यो नमः अर्घं।

आकुलता सब ही विधि नाशी, ज्ञायक लोकालोक प्रकाशी।
लोक शिरोमणि है शिव स्वामी, भाव सहित तुमको प्रणमामी।१०४

ओंह्रीं सिद्धज्ञानेभ्यो नमः अर्घं।

जीव अजीव लखे अविचारा, हो नहीं अन्तर एक प्रकारा।
लोक शिरोमणि है शिवस्वामी, भावसहित तुमको प्रणमामी।१०५।

ओं ह्रीं सिद्धदर्शनेभ्यो नमः अर्घं।

अन्तर बाहिर भेद उघारी, दर्श विशुद्ध भाव सुखकारी।

लोक शिरोमणि है शिवस्वामी, भावसहित तुमको प्रणमामी ।१०६।

ओं ह्रीं सिद्धशुद्धसम्यक्त्वेभ्यो नमः अर्घं ।

एक अणुमल कर्म लजावै, सोय निरंजनता नहि पावै ।
लोक शिरोमणि है शिवस्वामी, भावसहित तुमको प्रणमामी । १०७।

ॐ ह्रीं सिद्धनिरंजनेभ्यो नमः अर्घं ।

अर्वरोला छन्द—चारों गतिको भ्रमण नाशकर थिरता पाई ।
निज स्वरूपमें लीन, अन्य सो मोह नशाई ॥ १०८॥

ओं ह्रीं सिद्धअचलपदप्राप्ताय नमः अर्घं ।

रत्नत्रय आराधि साधि, निज शिवपद पायो ।
संख्या भेद उलंघि, शिवालय वास करायो ॥ १०९ ॥

ओं ह्रीं संख्यातीतसिद्धेभ्यो नमः अर्घं ।

असंख्यात मरजाद एक ताहू सो वीते ।
विजय लक्ष्मीनाथ, महाबल सब विधि जीते ॥ ११० ॥

ओं ह्रीं असंख्यातसिद्धेभ्यो नमः अर्घं ।

काल आदि मर्याद आदि, सो इह विधि जारी ।
भए अनन्त दिगम्बर साधु जु, शिवपद धारी ॥ १११ ॥

ओं ह्रीं अनन्तसिद्धेभ्यो नमः अर्घं ।

पुष्करार्द्ध सागर लों, जो जल थान वखानो ।
देव सहाइ उपाइ, ऊर्ध्व गति गमन करानो ॥ ११२ ॥

ओं ह्रीं जलसिद्धेभ्यो नमः अर्घं ।

वन गिर नगर गुफादि सर्व थलसों, शिव पाईं ।
सिद्धक्षेत्र सब ठोर बखानत, श्री जिनराई ॥ ११३ ॥

ओं ह्रीं स्थलसिद्धेभ्यो नमः अर्घं ।

नभहीमें जिन शुकलध्यान, बल कर्म नाश किय ।
आउ पूर्ण वश ततछिन, ही शिवधाम जाय लिय ॥ ११४ ॥

ओं ह्रीं गगनसिद्धेभ्यो नमः अर्घं ।

आयु स्थिति सम अन्य कर्म—कारण परदेशा।
परसै पूरण लोक आतम, केवली जिनेशा॥ ११५॥
ओं ह्रीं समसुद्घातसिद्धेभ्यो नमः अर्घं।

केवलि जिन विन समुद्धात, शिववास लिया है।
स्वते स्वभाव समान, अघाती कर्म किया है॥ ११६॥
ओं ह्रीं असमुद्घातसिद्धेभ्यो नमः अर्घ।

उल्लाला छन्द।

तिन विशेष अतिशय सहित, सामान केवली नाम है।
सिद्ध भये तिहुं योगतें, तिनके पद परिणाम है॥ ११७॥
ओं ह्रीं साधारणसिद्धेभ्यो नमः अर्घं।

त्रिभुवनमें नहीं पावतो, जो जिन गुण अभिराम हैं।
सिद्ध भये तिहुं योगतैं, तिनके पद परिणाम है॥ ११८॥
ओं ह्रीं असाधारणसिद्धेभ्यो नमः अर्घं।

गर्भ कल्याणक आदि युत, तीर्थंकर सुख धाम है।
सिद्ध भये तिहुं योगतें, तिनके पद परिणाम है ॥ ११९ ॥
ओं ह्रीं तीर्थंकरसिद्धेभ्यो नमः अर्घं ।

तीर्थंकरके समयमें, केवली जिन अभिराम है।
सिद्ध भये तिहुं योगतें, तिनके पद परिणाम है ॥ १२० ॥
ओं ह्रीं तीर्थंकरअनन्तसिद्धेभ्यो नमः अर्घं ।

पंच शतक पच्चीस फुनि, धनुषकाय अभिराम है।
सिद्ध भये तिहुं योगतें तिनके पद परिणाम है ॥ १२१ ॥
ओं ह्रीं उत्कृष्टअवगाहनसिद्धेभ्यो नमः अर्घं ।

आदि अन्त अन्तर विषैं, मध्यवगाहन नाम है।
सिद्ध भये तिहुं जोगतैं, तिनके पद परिणाम है ॥ १२२ ॥
ओं ह्रीं मध्यमअवगाहनसिद्धेभ्यो नमः अर्घं ।

केवली तन तीन अर्ध, हस्त प्रमाण कहाय है।

सिद्ध भये तिहुं जोगतैं, तिनके पद परिणाम है ॥ १२३ ॥

ओं ह्रीं जघन्यअवगाहनसिद्धेभ्यो नमः अर्घं ।

देव निमित्त मिलो जहां, त्रिजग केवली धाम है ।

सिद्ध भये तिहुं जोगतैं तिनके पद परिणाम है ॥ १२४ ॥

ओं ह्रीं त्रिजगलोकसिद्धेभ्यो नमः अर्घं ।

षट्विध परिणति कालकी, तिन अपेक्ष यह नाम है

सिद्ध भये तिहुं योगतैं, तिनके पद परिणाम है ॥ १२

ओं ह्रीं षट्विधकालसिद्धेभ्यो नमः अर्घं ।

अंत समय उपसर्गतैं, शुक्ल ध्यान अभिराम है ।

सिद्ध भये तिहुं योगतैं, तिनके पद परिणाम है ॥ १२६ ॥

ओं ह्रीं उपसर्गसिद्धेभ्यो नमः अर्घं ।

पर उपसर्ग मिलै नहीं, स्वतः शुक्ल शुभ धाम है ।

सिद्ध भये तिहुं योगतैं, तिनके पद परिणाम है ॥ १२७ ॥

ओं ह्रीं निरुपसर्गसिद्धेभ्यो नमः अर्घं ।

अन्तर द्वीप महा जहां, देवनके आराम है।
सिद्ध भये तिहु योगतें, तिनके पद परिणाम है ॥ १२८ ॥

ओं ह्रीं द्वीपसिद्धेभ्यो नमः अर्घं ।

देव गये ले सिंधु जब, कर्म छयो तिंह ठाम है।
सिद्ध भये तिंहु योगतें, तिनके पद परिणाम है ॥ १२९ ॥

ओं ह्रीं उदधिसिद्धेभ्यो नमः अर्घं ।

भुजंगप्रयात छन्द ।

धरैं जोग आसन गहैं शुद्ध ताई, न हो खेद ध्यानाग्नि सों कर्म छाई ।
भये सिद्ध राजा निजानंद साजा, यही मोक्ष जाना नमः सिद्ध काजा ॥

ओं ह्रीं स्वस्थित्यासनसिद्धेभ्यो नमः अर्घं ॥१३०॥

महा शांति मुद्रा पलौथी लगाये, कियो कर्मको नाश ज्ञानी कहाये ।
भये सिद्ध राजा निजानंद साजा, यही मोक्ष जाना नमः सिद्ध काजा ॥

ओं ह्रीं पर्यंकासनसिद्धेभ्यो नमः अर्घ ॥१३१॥

लहै आदि को संहनन पुरुष देही, तथा हो परारंभमें भाव ते ही।
भये सिद्ध राजा निजानद साजा, यही मोक्ष जाना नमः सिद्ध काजा॥

ओं ह्रीं पुरुषवेदसिद्धेभ्यो नमः अघ ॥१३२॥

खपायो प्रथम सात प्रकृति विमोहा, गहो शुद्ध श्रेणी क्षयो कर्म लोहा।
भये सिद्ध राजा निजानंद साजा, यही मोक्ष जाना नमः सिद्ध काजा॥

ओं ह्रीं क्षपकश्रेणीसिद्धेभ्यो नमः अर्घ ॥१३३॥

समय एकमें एक वासौ अनंता, धरो आठ तापं यही भेद अन्ता।
भये सिद्ध राजा निजानंद साजा, यही मोक्ष जाना नमः सिद्ध काजा॥

ओं ह्रीं एकसमयसिद्धेभ्यो नमः अर्घ ॥१३४॥

किसी देशमें वा किसी काल माहीं, गिने दो समयमें तथा अंतराई।
भये सिद्ध राजा निजानंद साजा, यही मोक्ष जाना नमः सिद्ध काजा॥

ओं ह्रीं द्विसमयसिद्धेभ्यो नमः अर्घ ॥१३५॥

समय एक दो तीन धाराप्रवाही, कियो कर्म छय अंतराय होय नाहीं।
भये सिद्ध राजा निजानंद साजा, यही मोक्ष जाना नमः सिद्ध काजा॥

ओं ह्रीं त्रिसमयसिद्धेभ्यो नमः अर्घ ॥१३६॥

हुवे हो सु होगे सुहो है अबारी, त्रिकालं सदा मोक्ष पंथा विहारी।
भये सिद्ध राजा निजानंद साजा, यही मोक्ष जाना नमः सिद्ध काजा

ओं ह्रीं त्रिकालसिद्धेभ्यो नमः अर्घ ॥१३७॥

तिहूं लोकके शुद्ध सम्यक्त धारी, महा भार संजम धरे हैं अबारी।
भये सिद्ध राजा निजानंद साजा, यही मोक्ष जाना नमः सिद्ध काजा

ॐ ह्रीं त्रिलोकसिद्धेभ्यो नमः अर्घ ॥१३८॥

मरहठा छन्द—तिहुं लोक निहारा, सब दुखकारा, पापरूप संसार।
ताको परिहारा सुलभ सुखारा, भये सिद्ध अविकार॥
है जगत्रय नायक मंगलदायक, मंगलमय सुखकार।
मैं नमूं त्रिकाला हो अघ टाला, तपहर शशि उनहार।१३९।

ॐ ह्रीं सिद्धमंगलेभ्यो नमः अर्घं ।

तिहुं कर्म कालमा लगी जालमा, करै रूप दुखदाय ।
तुम ताको नाशो स्वयं प्रकाशो, स्वातम रूप सुभाय ॥
हे जगत्रयनायक मंगलदायक, मंगलमय सुखकार ।
मैं नमूं त्रिकाला हो अघ टाला, तपहर शशि उनहार ।१४०॥

ओं ह्रीं सिद्धमङ्गलस्वरूपेभ्यो नमः अर्घं ।

तिहुं जगके प्राणी सब अज्ञानी, फँसे मोह जंजाल ।
हो तिहुं जगत्राता पूरण ज्ञाता, तुम ही एक खुशहाल ॥
हे जगत्रय नायक मंगलदायक, मंगलमय सुखकार ।
मैं नमूं त्रिकाला हो अघ टाला, तपहर शशि उनहार ॥ १४१॥

ओं ह्रीं सिद्धमंगलज्ञानेभ्यो नमः अर्घं ।

यह मोह अन्धेरी छई घनेरी, प्रबल पटल रहो छाय ।
तुम ताहि उघारो सकल निहारो, युगपत् आनन्ददाय ॥

हे जगत्रयनायक मंगलदायक, मंगलमय सुखकार ।
मैं नमूं त्रिकाला हो अघ काला, तपहर शशि उनहार ॥१४२॥
ओं ह्रीं सिद्धमंगलदर्शनेभ्यो नमः अर्घं ।

निजबंधन डोरी छिनमें तोरी, स्वयं शक्ति परकाश ।
निरभय निरमोही परम अछोही, अन्तराय विधि नाश ॥
हे जगत्रय नायक मंगलदायक, मंगलमय सुखकार ।
मैं नमूं त्रिकाला हो अघ काला, तपहर शशि उनहार ॥ १४३॥
ओं ह्रीं सिद्धमंगलवीर्येभ्यो नमः अर्घं ।

जाके प्रसादकर सकल चराचर, निजसों भिन्न लखाय ।
रुपराग निवारा सुख विस्तारा, आकुलता विनशाय ॥
हे जगत्रय नायक मंगलदायक, मंगलमय सुखकार ।
मैं नमूं त्रिकाला हो अघ काला, तपहर शशि उनहार ॥ १४४॥
ओं ह्रीं सिद्धमंगलसम्यक्त्वेभ्यो नमः अर्घं ।

अस्पर्श अमूरति चिनमय सूरति, अरस अलिंग अनूप।
मन अक्ष अलक्षं ज्ञान प्रत्यक्षं, शुभ अवगाह स्वरूप॥
हे जगत्रय नायक मंगलदायक, मंगलमय सुखकार।
मैं नमूं त्रिकाला हो अघ काला, तपहर शशि उनहार॥ १४५॥

ओं ह्रीं सिद्धमंगलअवगाहनेभ्यो नमः अर्घं।

अव्यक्त स्वरूपं अमल अनूपं, अलख अगम असमान।
अवगाह उदर धर वास परस्पर, भिन्न भिन्न परमान॥
हे जगत्रय नायक मंगलदायक, मंगलमय सुखकार।
मैं नमूं त्रिकाला हो अघ काला, तपहर शशि उनहार॥१४६॥

ओं ह्रीं सिद्धमंगलसूक्ष्मत्वेभ्यो नमः अर्घं।

अनुभूति विलासी समरस रासी, हीनाधिक विधि नाश।
विधि गोत्र नाशकर पूरण पदधर, असंवाध परकाश॥
हे जगत्रय नायक मंगलदायक, मंगलमय सुखकार।

मैं नमूं त्रिकाला हो अघ काला, तपहर शशि उनहार ॥१४७॥
ओं ह्रीं सिद्धमंगलअगुरुलघुभ्यो नमः अर्घं ।

पुद्गल कृत सारी विविध प्रकारी, द्वैतभाव अधिकार ।
सब भांति निवारी निज सुखकारी, पायो पद अविकार ॥
हे जगत्रय नायक मंगलदायक, मंगलमय सुखकार ।
मैं नमूं त्रिकाला हो अघ काला, तपहर शशि उनहार ॥ १४८॥
ओं ह्रीं सिद्धमंगलअव्याबाधितेभ्यो नमः अर्घं ।

अवगाढ प्रणामी ज्ञानारामी, दर्शन वीर्य अपार ।
सूक्षम अवकाशं अज अविनाशं, अगुरुलघू सुखकार ॥
हे जगत्रय नायक मंगलदायक, मंगलमय सुखकार ।
मैं नमूं त्रिकाला हो अघ काला, तपहर शशि उनहार ॥ १४९॥
ओं ह्रीं सिद्धमंगलगुणेभ्यो नमः अर्घं ।

शुद्धातम सारं अष्ट प्रकारं, शिव स्वरूप अनिवार ।

निज गुणपरधानं सम्यकज्ञानं, आदि अन्त अविकार ॥
हे जगत्रयनायक मंगलदायक, मंगलमय सुखकार ।
मैं नमूं त्रिकाला हो अघटाला, तपहर शशि उनहार॥ १५०॥

ओं ह्रीं सिद्धमंगलअष्टस्वरूपेभ्यो नमः अर्घं ।

मंगल अरहन्तं अष्टम भन्तं, सिद्ध अष्ट गुण भास ।
ये ही बिलसावै, अन्य न पावै, असाधारण परकाश ।
हे जगत्रयनायक मंगलदायक, मंगलमय सुखकार ।
मैं नमूं त्रिकाला हो अघ-काला, तपहर शशि उनहार ॥ १५१ ॥

ओं ह्रीं सिद्धमंगलअष्टप्रकाशकेभ्यो नमः अर्घं ।

निर आकुलताई सुख अधिकाई, परम शुद्ध परिणाम ।
संसार निवारण बन्ध विडारन, यही धर्म सुखधाम ॥
हे जगत्रयनायक मंगलदायक, मंगलमय सुखकार ।

मैं नमूं त्रिकाला हो अघ काला, तपहर शशि उनहार ॥१५२॥

ओं ह्रीं सिद्धमंगलधर्मेभ्यो नमः अर्घं ।

चूलिका छन्द—तीन काल तिहुं लोकमें, तुम गुण और न माहिं लखाने ।
लोकोत्तम परसिद्ध हो, सिद्धराज सुख साज बखाने ॥ १५३ ॥

ओं ह्रीं सिद्धलोकोत्तमगुणेभ्यो नमः अर्घं ।

लोकत्रय शिर छत्र मणि, लोकत्रय वर पूज्य प्रधाने ।
लोकोत्तम परसिद्ध हो सिद्धराज, सुखसाज बखाने ॥ १५४॥

ओं ह्रीं सिद्धलोकोत्तमेभ्यो नमः अर्घं।

अमल अनूप तेजघन, निरावरण निजरूप प्रमाने ।
लोकोत्तम परसिद्ध हो, सिद्धराज सुख साज बखाने ॥१५५॥

ओं ह्रीं सिद्धलोकोत्तमस्वरूपाय नमः अर्घं ।

लोकालोक प्रकाश कर, लोकातीत प्रत्यक्ष प्रमाने ।

*लोकोत्तम परसिद्ध हो, सिद्धराज सुख साज बखाने ॥१५६॥

ओं ह्रीं सिद्धलोकोत्तमज्ञानाय नमः अर्घं ।

सकल दर्शनावरण विन, पूरन-दरसन जोत उगाने ।

लोकोत्तम परसिद्ध हो, सिद्धराज सुख साज बखाने ॥१५७॥

ओं ह्रीं सिद्धलोकोत्तमदर्शनाय नमः अर्घं ।

अतुल अतीन्द्रिय वीरजकर, भोगे नित शिवनारि अघाने ।

लोकोत्तम परसिद्ध हो, सिद्धराज सुख साज बखाने ॥१५८॥

ओं ह्रीं सिद्धलोकोत्तमवीर्याय नमः अर्घं ।

त्रोटक छन्द ।

विन कारण ही सबके मितु हो, सर्वोत्तम लोकविषैं हितु हो ।

इनही गुणमें मन पागत हैं, शिववास करो शरणागत हैं ।१५९।

ॐ ह्रीं सिद्धलोकोत्तमशरणाय नमः अर्घं ।

---

* 'लोकत्रयशिर छत्रमणि, लोकत्रय वर पूज्य प्रधाने' ऐसा पाठ 'क' प्रतिमें है ।

तुम रूप अनूपम ध्यान किये, निज रूप दिखावत स्वच्छ हिये।
इनहीं गुणमें मन पागत हैं, शिववास करो शरणागत हैं ।१६०।
ॐ ह्रीं सिद्धस्वरूपशरणाय नमः अर्घं।

निरभेद अछेद विकाशित हैं, सब लोक अलोक विभासित हैं।
इनही गुणमें मन पागत हैं, शिववास करो शरणागत हैं ।१६१।
ॐ ह्रीं सिद्धदर्शनशरणाय नमः अर्घं।

निरबाध अगाध प्रकाशमई, निरद्वंद अबंध अभय अजई।
इनही गुणमें मन पागत हैं, शिववास करो शरणागत हैं॥१६२॥
ओं ह्रीं सिद्धज्ञानशरणाय नमः अर्घं।

हित कारण तारण तरण कहै, अप्रमाद प्रसाद प्रयास न है।
इनहीं गुणमें मन पागत हैं, शिववास करो शरणागत हैं॥ १६३॥
ओं ह्रीं सिद्धवीर्यशरणाय नमः अर्घं।

अविरुद्ध विशुद्ध प्रसिद्ध महा, निज आतम-तत्त्व प्रबोध लहा।

इनहीं गुणमें मन पागत हैं, शिववास करो शरणागत हैं॥१६४॥

ओं ह्रीं सिद्धसम्यक्त्वशरणाय नमः अर्घं ।

जिनको पूर्वापर अन्त नहीं, नित धार प्रवाह बहै अति ही ।
इनहीं गुणमें मन पागत हैं, शिववास करो शरणागत हैं ।१६५।

ओं ह्रीं सिद्धअनन्तशरणाय नमः अर्घं ।

कबहूं नहीं अन्त समावत है, सु अनन्त अनन्त कहावत है ।
इनहीं गुणमें मन पागत हैं, शिववास करो शरणागत हैं।१६६।

ओं ह्रीं सिद्धअनन्तानन्तशरणाय नमः अर्घं ।

तिहुं काल सु सिद्ध महा सुखदा, निजरूप विषैं थिर भाव सदा
इनहीं गुणमें मन पागत हैं, शिववास करो शरणागत हैं।१६७।

ओं ह्रीं सिद्धत्रिकालशरणाय नमः अर्घं ।

तिहुं लोक शिरोमणि पूजि महा, तिहुं लोक प्रकाशक तेज कहा
इनहीं गुणमें मन पागत हैं, शिववास करो शरणागत हैं ।१६८।

ओं ह्रीं सिद्धत्रिलोकशरणाय नमः अर्घं ।

गिनती परमाण जु लोक धरे, परदेश समूह प्रकाश करे।
इनहीं गुणमें मन पागत हैं, शिववास करो शरणागत हैं।१६९।

ओं ह्रीं सिद्धअसंख्यातलोकशरणाय नमः अर्घं।

पूर्वापर एकहि रूप लसे, नित लोक सिंहासनवास वसै।
इनहीं गुणमें मन पागत हैं, शिववास करो शरणागत हैं।१७०।

ओं ह्रीं सिद्धध्रौव्यगुणशरणाय नमः अर्घ।

जगवास परजाय विनाश कियो, अवनीश्वर रूप विशुद्ध भयो।
इनहीं गुणमें मन पागत हैं, शिववास करो शरणागत हैं।१७१।

ओं ह्रीं सिद्धउत्पादगुणशरणाय नमः अर्घं।

परद्रव्य थकी रुष राग नहीं, निज भाव विना कहुं लाग नहीं।
इनहीं गुणमें मन पागत हैं, शिववास करो शरणागत हैं।१७२।

ओं ह्रीं सिद्धसाम्यगुणशरणाय नमः अर्घं।

विन कर्म कलंक विराजत हैं, अति स्वच्छ महागुण राजत है।

इनहीं गुणमें मन पागत हैं, शिववास करो शरणागत हैं।१७३।

ओं ह्रीं सिद्धस्वच्छगुणशरणाय नमः अर्घं।

मन इन्द्रिय आदि न व्याधि तहां, रुष राग क्लेश प्रवेश न ह्वां।
इनहीं गुणमें मन पागत हैं, शिववास करो शरणागत हैं।१७४।

ॐ ह्रीं सिद्धस्वस्थितगुणशरणाय नमः अर्घं।

निज रूप विषैं नित मगन रहैं, परयोग वियोग न दाह लहैं।
इनहीं गुणमें मन पागत हैं, शिववास करो शरणागत हैं।१७५।

ओं ह्रीं सिद्धसमाधिगुणशरणाय नमः अर्घं।

श्रुतज्ञान तथा मतिज्ञान दऊ, परकाशत हैं यह व्यक्त सऊ।
इनहीं गुणमें मन पागत हैं, शिववास करो शरणागत हैं॥१७६॥

ओं ह्रीं सिद्धव्यक्तगुणशरणाय नमः अर्घं।

परतक्ष अतीन्द्रिय भाव महा, मन इन्द्रिय बोधन गुह्य कहा।
इनहीं गुणमें मन पागत हैं, शिववास करो शरणागत हैं॥१७७॥

ॐ ह्रीं सिद्धअव्यक्तगुणशरणाय नमः अर्घं ।

मालिनी छन्द—निज गुणवर स्वामी शुद्ध संबोध नामी,
परगुण नहिं लेशा एक ही भाव शेषा ।
मन वच तन लाई पूजहों भक्तिभाई,
भवि भव भय चूरं शाश्वतं सुक्ख पूरं ॥१७८॥

ॐ ह्रीं सिद्धगुणागुणस्वरूपाय नमः अर्घं ।

सब विधि मल जारा बन्ध संसार टारा,
जग जिय हितकारी उच्चता पाय सारी ।
मन वच तन लाई पूजहों भक्तिभाई,
भवि भव भय चूरं शाश्वतं सुक्ख पूरं।१७९।

ॐ ह्रीं सिद्धपरमात्मस्वरूपाय नमः अर्घं ।

पर-परणतिखण्डं भेदबाधाविहण्डं,
शिवसदननिवासी नित्य स्वानंदरासी ।

मन वच तन लाई पूजहों भक्ति थाई,
भवि भव भय चूरं शाश्वतं सुक्खपूरं ॥१८०॥
ॐ ह्रीं सिद्ध अखण्डस्वरूपाय नमः अर्घं ।

चित सुख विलसानं आकुलं भाव हानं,
निज अनुभव सारं द्वैत संकल्प टारं ।
मन वच तन लाई पूजहों भक्तिथाई,
भवि भव भय चूरं शाश्वतं सुक्खपूरं ॥१८१॥
ॐ ह्रीं सिद्धचिदानंदस्वरूपाय नमः अर्घं ।

परकरण निवारं भाव संभाव धारं,
निज अनुपम ज्ञानं सुक्खरूपं निधानं ।
मन वच तन लाई पूजहों भक्ति भाई,
भवि भव भय चूरं शाश्वतं सुक्खपूरं ॥१८२॥
ॐ ह्रीं सिद्धसहजानंदाय नमः अर्घं ।

विधि वश सब प्रानी हीन आधिक्य ठानी,
तिस कर निरमूला पाय रूपा धरूला ।
मन वच तन लाई पूजहों भक्तिभाई,
भवि भव भय चूरं शाश्वतं सुक्खपूरं ॥१८३॥
ॐ ह्रीं सिद्धअछेदरूपाय नमः अर्घं ।

जबलग परजाया भेद नाना धराया,
इक शिवपद मांही भेद आभास नांहीं ।
मन वच तन लाई पूजहों भक्तिभाई,
भवि भव भय चूरं शाश्वतं सुक्ख पूरं ॥१८४ ॥
ॐ ह्रीं सिद्धअभेदगुणाय नमः अर्घं ।

अनुपम गुणधारी लोक संभाव टारी,
सुरनर मुनि ध्यावैं सो नहीं पार पावैं ।
मन वच तन लाई पूजहों भक्तिभाई,

भवि भव भय चूरं शाश्वतं सुक्खपूरं ॥१८५॥

ओं ह्रीं सिद्धअनुपमगुणाय नमः अर्घं ।

जिस अनुभव सरसै धार आनन्द बरसै,
अनुपम रस सोई स्वाद जासो न कोई ।
मन वच तन लाई पूज हों भक्तिभाई,
भवि भव भय चूरं शाश्वतं सुक्खपूरं ॥१८६॥

ओं ह्रीं सिद्धअमृततत्त्वाय नमः अर्घं ।

सब श्रुत विस्तारा जास माहीं उजारा,
यही निजपद जानो आत्मसंभाव मानो ।
मन वच तन लाई पूजहों भक्तिभाई,
भवि भव भय चूरं शाश्वतं सुक्खपूरं ॥१८७॥

ओं ह्रीं सिद्धश्रुतप्रासाय नमः अर्घं ।

दोधक छन्द ।

जीव अजीव सवय प्रतिभासी, केवल जोति लहो तम नाशी ।
सिद्ध समूह नमूं शिरनाई, पाप कलाप सबै खिर जाई ॥१८८॥
ॐ ह्रीं सिद्धकेवलप्राप्ताय नमः अर्घं ।

चेतन रूप सदेश विराजै, आकृतिरूप अलिंग सु छाजै ।
सिद्ध समूह नमूं शिरनाई, पाप कलाप सबै खिर जाई ॥१८९॥
ओं ह्रीं सिद्धसाकारनिराकाराय नमः अर्घं ।

नाहि गहें पर आश्रित जानो, सो अवलम्ब बिना पद मानो ।
सिद्ध समूह जजों मन लाई, पाप कलाप सबै खिर जाई ॥१९०॥
ॐ ह्रीं सिद्धनिरालंबाय नमः अर्घं ।

राग विपाद बसे नहिं जामें, जोग वियोग भोग नहिं तामैं ।
सिद्ध समूह जजों मन लाई, पाप कलाप सबै खिर जाई ॥१९१॥
ॐ ह्रीं सिद्धनिष्कलंकाय नमः अर्घं ।

ज्ञान प्रभाव प्रकाश भयो है, कर्म समूह विनाश भयो है ।
सिद्ध समूह जजों मन लाई, पाप कलाप सबै खिर जाई ॥१६२॥

ओं ह्रीं सिद्धतेजसंपन्नाय नमः अर्घं ।

आतम लाभ निजाश्रित पाया, द्वैत विभाव समूह नसाया ।
सिद्ध समूह जजों मन लाई, पाप कलाप सबै खिर जाई ॥१६३॥

ॐ ह्रीं सिद्धआतमसंपन्नाय नमः अर्घं ।

मोतियादाम छन्द ।

चहूं गति काय स्वरूप प्रत्यक्ष, शिवालय वास अरूप अलक्ष ।
भजों मन आनन्दसों शिवनाथ, धरों चरणांबुजको निज माथ ।१६४

ॐ ह्रीं सिद्धगर्भवासाय नमः अर्घं ।

निजानंद श्रीयुत ज्ञान अथाह, सुशोभित तृप्त भयो सुख पाय ।
भजों मन आनन्दसों शिवनाथ, धरों चरणांबुजको निज माथ ॥१६५॥

ॐ ह्रीं सिद्धलक्ष्मीसंतर्पकाय नमः अर्घं ।

सुभाव निजातम अन्तर लीन, विभाव परातम आपद हीन ।
भजों मन आनन्दसों शिवनाथ, धरों चरणांबुजको निज माथ ॥१९६॥
ओं ह्रीं सिद्धअन्तराकाराय नमः अर्घं ।

जहां लग द्वेष प्रवेश न होय, तहां लग सार रसायन होय ।
भजो मन आनंदसों शिवनाथ, धरो चरणांबुजको निज माथ ॥१९७॥
ओं ह्रीं सिद्धसाररसाय नमः अघ ।

जिसो निरलेप हुए विषतुंब्य, तिसो जग आग्र निराश्रय लुंब्य ।
भजो मन आनंदसों शिवनाथ, धरों चरणांबुजको निज माथ ॥१९८।
ॐ ह्रीं सिद्धशिखरमण्डनाय नमः अर्घं ।

तिहूं जग शीस बिराजित नित्य, शिरोमणि सर्व समाज अनित्य ।
भजो मन आनंदसों शिवनाथ, धरों चरणांबुजको निज माथ । १९९ ।
ओं ह्रीं सिद्धत्रिलोकाग्रनिवासिने नमः अर्घं ।

अकाय अरूप अलक्ष अवेद, निजातम लीन सदा अविछेद ।

भजो मन आनंदसों शिवनाथ, धरो चरणांवुजको निजमाथ ॥२००॥

ओं ह्रीं सिद्धस्वरूपगुप्तेभ्यो नमः अर्घं ।

अडिल्ल छन्द—ऋषभ आदि चित धारि प्रथम दीक्षा धरी,
केवलज्ञान उपाय धर्म विधि उच्चरी ।
निज स्वरूप थितिकरण हरण विधि चार है,
परमारथ आचार्य सिद्ध सुखकार है ॥ २०१ ॥

ओं ह्रीं सूरिभ्यो नमः अर्घं ।

निज ही निज उर धार हेत सामर्थ है,
आत्मशक्ति कर व्यक्ति करण विधि व्यर्थ है ।
निज स्वरूप थितिकरण हरण विधि चार है,
परमारथ आचार्य सिद्ध सुखकार है ॥ २०२ ॥

ओं ह्रीं सूरिगुणभ्यो नमः अर्घं ।

साधन साधक साध्य भाव सब ही गयो,

भेद अगोचर रूप महासुख संभयो ।
निज स्वरूप थितिकरण हरण विधि चार है,
परमारथ आचार्य सिद्ध सुखकार है ॥ २०३ ॥
ओं ह्रीं सूरिस्वरूपगुणेभ्यो नमः अर्घं ।

तत्त्व प्रतीत निजातम रूप अनुभव कला,
पायो सत्यानन्द कुमारग दलमला ।
निज स्वरूप थितिकरण हरण विधि चार है,
परमारथ आचार्य सिद्ध सुखकार है ॥ २०४ ॥
ओं ह्रीं सूरिसम्यक्त्वगुणेभ्यो नमः अर्घं ।

वस्तु अनंत धर्म प्रकाशक ज्ञान है,
एक पक्ष हट गृहित निपट असुहान है ।
निज स्वरूप थितिकरण हरण विधि चार है,
परमारथ आचार्य सिद्ध सुखकार है ॥ २०५ ॥

ओं ह्रीं सूरिज्ञानगुणेभ्यो नमः अर्घं ।

वस्तु धर्म समान, ताहि अवलोकना ।
शुद्ध निजातम धर्म ताहि नहीं लोपना ॥
निज-स्वरूप थितिकरण हरण विधि चार है ।
परमारथ आचार्य सिद्ध सुखकार है ॥२०६ ॥

ओं ह्रीं सूरिदर्शनगुणेभ्यो नमः अर्घं ।

अतुल अकम्प अखेद, शुद्ध परणति धरैं ।
जगतरूप व्यापार न इक छिन आदरैं ॥
निज स्वरूप थितिकरण हरण विधि चार हैं ।
परमारथ आचार्य सिद्ध सुखकार हैं ॥ २०७ ॥

ओं ह्रीं सूरिवीर्यगुणेभ्यो नमः अर्घं ।

षट् त्रिंशति गुण सूरि मोक्ष-फल पाइयो ।
तातें हम इन गुण कर ही जश गाइयो ॥

निज-स्वरूप थितिकरण हरण विधि चार हैं ।
परमारथ आचार्य सिद्ध सुखकार हैं ॥ २०८ ॥
ओं ह्रीं सूरिषट्त्रिंशत्गुणेभ्यो नमः अर्घं ।

पंचाचार आचार्य साध शिवपद लियो ।
वास्तवमें ये गुण निजमें परगट कियो ॥
निज-स्वरूप थितिकरण हरण विधि चार हैं ।
परमारथ आचार्य सिद्ध सुखकार हैं ॥२०९ ॥
ॐ ह्रीं सूरिपंचाचारगुणेभ्यो नमः अर्घं ।

गुणसमुदाय सरूप द्रव्य आतम महा ।
परसों भिन्न अभेद निजातम पद लहा ॥
निज-स्वरूप थितिकरण हरण विधि चार हैं ।
परमारथ आचार्य सिद्ध सुखकार है ॥ २१० ॥
ॐ ह्रीं सूरिद्रव्यगुणेभ्यो नमः अर्घं ।

वीतराग परणति रचही सुखकार जू ।

परम शुद्ध स्वैसिद्ध भयो अनिवार जू ॥
निज स्वरूप थितिकरण हरण विधि चार हैं ।
परमारथ आचार्य सिद्ध सुखकार हैं ॥ २११ ॥

ओं ह्रीं सूरिपर्यायगुणेभ्यो नमः अर्घं ।

छन्द चञ्चला (एक ह्रस्व एक दीर्घ)

आप सुक्खरूप हो सु, और सौख्यकार होत ।
ज्यूं घटादिको प्रकाश कार है सुदीप जोत ॥
सूरि धर्मको प्रकाश सिद्ध धर्म, रूप जान ।
मैं नमूं त्रिकाल एक ही अभेद पक्षमान ॥ २१२ ॥

ओं ह्रीं सूरिमंगलेभ्यो नमः अर्घं ।

संस अंस भान वस्तु भावको प्रकाशमान ।
ज्ञान इन्द्रियाअनिन्द्रिया कहैं उभय प्रमाण ॥
सूरि धर्मको प्रकाश सिद्ध धर्म रूप जान ।
मैं नमूं त्रिकाल एक ही अभेद पक्षमान ॥ २१३ ॥
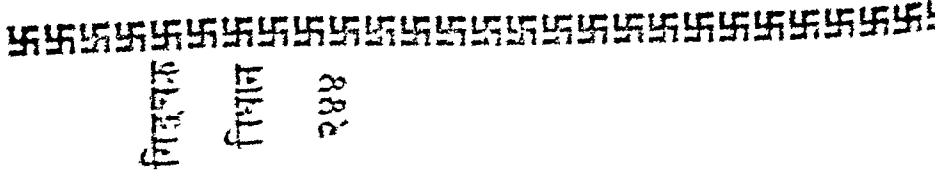
ओं ह्रीं सूरिज्ञानमंगलेभ्यो नमः अर्घं ।

लोक उत्तमा सु वसु कर्मको प्रसंग टार,
शुद्ध बुद्ध रिद्ध पाय लोक वेदना निवार।
सूरि धर्मको प्रकाश सिद्ध धर्म रूप जान,
मैं नमूं त्रिकाल एक ही अभेद पक्षमान ॥ २१४ ॥

ओं ह्रीं सूरिलोकोत्तमेभ्यो नमः अर्घं ।

लोकभीतसो अतीत आदि अन्त एक रूप,
लोकमें प्रसिद्ध सर्व भावको अनूप भूप।
सूरि धर्मको प्रकाश सिद्ध धर्म रूप जान,
मैं नमूं त्रिकाल एक ही अभेद पक्षमान ॥ २१५ ॥

ओं ह्रीं सूरिज्ञानलोकोत्तमेभ्यो नमः अर्घं ।

बीचमें न अन्तराय, आप ही सुखाय धाय,
या अबाध धर्मको, प्रकाशमें करै सहाय।

सूरि धर्मको प्रकाश, सिद्ध धर्म रूप जान,
मैं नमूं त्रिकाल एक ही अभेद पक्ष मान ॥ २१६॥
ओं ह्रीं सूरिदर्शनलोकोत्तमेभ्यो नमः अर्घं ।

मोह भारको निवार, शुद्ध चेतना सुधार,
येह वीर्यता अपार, लोकमें प्रशंसकार ।
सूरि धर्मको प्रकाश, सिद्ध धर्म रूप जान,
मैं नमूं त्रिकाल एक ही अभेद पक्षमान ॥ २१७ ॥
ओं ह्रीं सूरिवीर्यलोकोत्तमेभ्यो नमः अर्घं ।

धर्म केवली महान्, मोह अन्ध तेज भान,
सप्त तत्त्वको बखानि, मोक्ष-मार्गको निधान ।
सूरि धर्मको प्रकाश, सिद्ध धर्म रूप जान,
मैं नमूं त्रिकाल एक ही अभेद पक्षमान ॥ २१८ ॥
ॐ ह्रीं सूरिकेवलधर्माय नमः अर्घं ।

शील आदि पूर भेद कर्मके कलाप छेद,

आत्म-शक्तिको प्रकाश, शुद्ध चेतना विलास ।
सूरि धर्मको प्रकाश, शुद्ध धर्म रूप जान,
मैं नमूं त्रिकाल एक ही अभेद पक्षमान ॥ २१९ ॥
ओं ह्रीं सूरितपेभ्यो नमः अर्घं ।

लोक चाहकी न दाह, द्वेषको प्रवेश नाह,
शुद्ध चेतना प्रवाह, वृद्धता धरै अथाह ।
सूरि धर्मको प्रकाश, सिद्ध धर्म रूप जान,
मैं नमूं त्रिकाल एक ही अभेद पक्षमान ॥ २२० ॥
ओं ह्रीं सूरिपरमतपेभ्यो नमः अर्घं ।

मोहको न जोर जाय, घोर आपदा नसाय,
घोरतें तपो सु लोक शीश जाय मुक्ति पाय ।
सूरि धर्मको प्रकाश, सिद्ध धर्म रूप जान,
मैं नमूं त्रिकाल एक ही अभेद पक्षमान ॥२२१ ॥
ओं ह्रीं सूरितपोघोरगुणेभ्यो नमः अर्घं ।

कामिनीमोहन छन्द मात्रा २० ।

वृद्धपर वृद्ध गुण गहन नित हो जहाँ, शाश्वतं पूर्णता सातिशय गुण तहां ।
सूरि सिद्धांतके पारगामी भये, मैं नमूं जोरकर मोक्षधामी भये ॥२२२॥

ओं ह्रीं सूरिघोरगुणपराक्रमेभ्यो नमः अर्घं ।

एक सम-भाव सम और नहीं ऋद्धि है, सर्व ही रिद्ध जाके भये सिद्ध है ।
सूरि सिद्धांतके पारगामी भये, मैं नमूं जोरकर मोक्षधामी भये ।२२३।

ॐ ह्रीं सूरिरिद्धिऋषिभ्यो नमः अर्घं ।

जोगके रोकसे कर्मका रोक हो, शुद्ध साधन किये साध्य शिवलोक हो ।
सूरि सिद्धांतके पारगामी भये, मैं नमूं जोरकर मोक्षधामी भये ।२२४।

ओं ह्रीं सूरिसुयोगेभ्यो नमः अर्घं ।

ध्यान बल कर्मके नाशको हेतु है, कर्मको नाश शिववास ही देतु है ।
सूरि सिद्धांतके पारगामी भये, मैं नमूं जोरकर मोक्षधामी भये ॥२२५॥

ओं ह्रीं सूरिध्यानेभ्यो नमः अर्घं ।

पंचआचारमें आत्म अधिकार है, बाह्य आधार आधेय सुविकार है।
सूरि सिद्धांतके पारगामी भये, मैं नमूं जोरकर मोक्षधामी भये।२२६

ओं ह्रीं सूरिधात्रिभ्यो नमः अर्घं ।

सूर सम आप पर तेज करतार है, सूर ही मोक्षनिधि पात्र सुखकार है।
सूरि सिद्धांतके पारगामी भये, मैं नमूं जोरकर मोक्षधामी भये।२२७।

ओं ह्रीं सूरिपात्रेभ्यो नमः अर्घं ।

बाह्य छत्तीस अन्तर अभेदात्मा, आप थिर रूप है सूर परमात्मा।
सूरि सिद्धांतके पारगामी भये, मैं नमूं जोरकर मोक्षधामी भये।२२८।

ओं ह्रीं सूरिगुणशरणाय नमः अर्घं ।

ज्ञान उपयोगमें स्वस्थिता शुद्धता, पूर्ण चारित्रता पूर्ण ही बुद्धता।
सूरि सिद्धांतके पारगामी भये, मैं नमूं जोरकर मोक्षधामी भये।२२९।

ॐ ह्रीं सूरिधर्मगुणशरणाय नमः अर्घं ।

शरण दुख हरण पर आप स्वै शर्ण है, आपने कार्यमें आप ही कर्ण है।

सूरि सिद्धांतके पारगामी भये, मैं नमूं जोरकर मोक्षधामी भये।२३०।

ॐ ह्रीं सूरिस्वशरणाय नमः अर्घं ।

दोहा—ज्यों कञ्चन विन कालिमा, उज्जल रूप सुहाय ।
त्योंही कर्म-कलंक विन, निज स्वरूप दरशाय ॥ २३१ ॥

ओं ह्रीं सूरिस्वरूपशरणाय नमः अर्घं ।

भेदाभेद सु नय थकी, एक ही धर्म विचार ।
पायो सूरि सुबोध करि, भवदधि करि उद्धार ॥ २३२ ॥

ओं ह्रीं सूरिधर्मस्वरूपशरणाय नमः अर्घं ।

अन्य समस्त विकल्प तजि, केवल निजपद लीन ।
पूरण ज्ञान स्वरूप यह, पायो सूरि सुधीन ॥ २३३ ॥

ओं ह्रीं सूरिज्ञानस्वरूपशरणाय नमः अर्घं ।

सुखाभास इन्द्रीजनित, त्यागी सूरि महन्त ।
पूरण सुख स्वाधीन निज, साध्य भये सुखवन्त ॥ २३४ ।

ॐ ह्रीं सूरिसुखस्वरूपाय नमः अर्घं ।

अनेकांत तत्त्वार्थके, ज्ञाता सूरि महान ।
निरावर्ण निजरूप लखि, पायो पद निरवाण ॥ २३५ ॥

ॐ ह्रीं सूरिदर्शनस्वरूपाय नमः अर्घं ।

मोहादिक रिपु नाशिके, सूर्य महा सामर्थ ।
शिव भामिन भरतार नित, रमै साध निज अर्थ ॥ २३६ ॥

ॐ ह्रीं सूरिवीर्यस्वरूपाय नमः अर्घं ।

पद्धडी छन्द ।

जिन निज आतम निष्पाप कीन, त सन्त करैं पर पाप छीन ।
शिवमग प्रगटन आदित्य सूर, हम शरण गही आनंद पूर । २३७ ।

ॐ ह्रीं सूरिमंगलशरणाय नमः अर्घं ।

रत्नत्रै जीव सुभाव भाय, भवि पतित उधारण हो सहाय ।
शिवमग प्रगटन आदित्य सूर, हम शरण गही आनंद पूर ।२३८।

ॐ ह्रीं सूरिधर्मशरणाय नमः अर्घं ।

तपकर ज्यों कञ्चन अग्नि जोग, ह्वै शुद्ध निजातम पद मनोग।
शिवमग प्रगटन आदित्य सूर, हम शरण गही आनंद पूर ।२३९

ॐ ह्रीं सूरितपःशरणाय नमः अर्घं ।

एकाग्रह चिंताकर निरोध, पावै अबाध शिव आत्म सोध ।
शिवमग प्रगटन आदित्य सूर, हम शरण गही आनंद पूर ।२४०

ओं ह्रीं सूरिध्यानशरणाय नमः अर्घं ।

केवलज्ञानादि विभूति पाइ, ह्वै शुद्ध निरंजन पद सुखाइ ।
शिव मग प्रगटन आदित्य सूर, हम शरण गही आनंद पूर।२४१

ओं ह्रीं सूरिसिद्धशरणाय नमः अर्घं ।

तिहुं लोकनाथ तिहुं लोक माहिं, यासम दूजो सुखदाय नाहिं।
शिवमग प्रगटन आदित्य सूर, हम शरण गही आनंद पूर। २४२

ओं ह्रीं सूरित्रिलोकशरणाय नमः अर्घं ।

आगत अतीत अरु वर्तमान, तिहुं काल भव्य पावै निर्वाण ।

शिवमग प्रगटन आदित्य सूर, हम शरण गही आनंद पूर ।२४

ॐ ह्रीं सूरित्रिकालशरणाय नमः अर्घं ।

मध अधो ऊर्द्ध तिहुं जगतमाहिं, सब जीवन सुखकर और नाहिं।
शिवमग प्रगटन आदित्य सूर, हम शरण गही आनंद पूर ।२४४

ओं ह्रीं सूरित्रिजगन्मंगलाय नमः अर्घं ।

तिहुं लोकमाहिं सुखकार आप, सत्यारथ मंगल हरण पाप ।
शिवमग प्रगटन आदित्य सूर, हम शरण गही आनंद पूर ।२४५

ओं ह्रीं सूरित्रिलोकमंगलशरणाय नमः अर्घं ।

उत्तम मंगल परमार्थ रूप, जग दुख नासे शिव सुख स्वरूप ।
शिवमग प्रगटन आदित्य सूर, हम शरण गही आनंद पूर ।२४६।

ॐ ह्रीं सूरित्रिजगन्मंगलोत्तमशरणाय नमः अर्घं ।

शरणागत दुखनाशन महान, तिहुं जगहित कारण सुख निधान।
शिवमग प्रगटन आदित्य सूर, हम शरण गही आनंद पूर ।२४७।

ओं ह्रीं सूरित्रिजगन्मंगलशरणाय नमः अर्घं ।

तिहुं लोकनाथ तिहुं लोकपूज्य, शरणागत प्रतिपालन अदूज्य ।
शिवमग प्रगटन आदित्य सूर, हम शरण गही आनंद पूर ।२४८

ओं ह्रीं सूरित्रिलोकमण्डनशरणाय नमः अर्घं ।

अव्यय अपूर्व सामर्थ युक्त, संसारातीत विमोहमुक्त ।
शिवमग प्रगटन आदित्य सूर, हम शरण गही आनंद पूर ।२४९

ओं ह्रीं सूरिरिद्धिमण्डलशरणाय नमः अर्घं ।

त्रोटक छन्द ।

जिन रूप अनूप लखें सुख हो, जगमें यह मंत्र महान कहो ।
धरि भक्ति हिये गणराज सदा, प्रणमूं शिववास करैं सुखदा ॥२५०॥

ओं ह्रीं सूरिमंत्रस्वरूपाय नमः अर्घं ।

जिम नागदेव वश मंत्र विधी, भव वास हरण तुम नाम निधी ।
धरि भक्ति हिये गणराज सदा, प्रणमूं शिववास करै सुखदा ॥२५१॥

ओं ह्रीं सूरिमंत्रगुणाय नमः अर्घं ।

जगमोहित जीव न पावत हैं, यह मंत्र सु धर्म कहावत है ।

धरि भक्ति हिये गणराज सदा, प्रणमूं शिववास करै सुखदा ॥२५२॥

ओं ह्रीं सूरिधर्माय नमः अर्घं ।

चिद्रूप चिदातम भाव धरें, गुण सार यही अविरुद्ध वरें ।
धरि भक्ति हिये गणराज सदा, प्रणमूं शिववास करै सुखदा ॥२५३॥

ओं ह्रीं सूरिचैतन्यस्वरूपाय नमः अर्घं ।

अविकार चिदातम आनन्द हो, परमातम हो परमानन्द हो ।
धरि भक्ति हिये गणराज सदा, प्रणमूं शिववास करै सुखदा ॥२५४॥

ॐ ह्रीं सूरिचिदानंदाय नमः अर्घं ।

निज ज्ञान प्रमाण प्रकाश करैं, सुख रूप निराकुलता सु धरै ।
धरि भक्ति हिये गणराज सदा, प्रणमूं शिववास करै सुखदा ॥२५५॥

ओं ह्रीं सूरिज्ञानानन्दाय नमः अर्घं ।

धरि योग महा शम भाव गहैं, सुख राशि महा शिववास लहैं ।
धरि भक्ति हिये गणराज सदा, प्रणमूं शिववास करैं सुखदा ॥२५६॥

ओं ह्रीं सूरिशमभावाय नमः अर्घं ।

सम भाव महा गुण धारत हैं, निज आनन्द भाव निहारत हैं।
धरि भक्ति हिये गणराज सदा, प्रणमूं शिववास करै सुखदा ॥२५७॥
ओं ह्रीं सूरिसमभावतपोगुणानन्दाय नमः अर्घं ।

शिवसाधनको विधिनाश कहा, विधि नाशनको तप कर्ण महा ।
धरि भक्ति हिये गणराज सदा, प्रणमूं शिववास करै सुखदा ॥२५८॥
ओं ह्रीं सूरितपोगुणसुरूपाय नमः अर्घं ।

निज आत्म विषैं नित मगन रहै, जगके सुख मूल न भूलि चहै ।
धरि-भक्ति हिये गणराज सदा, प्रणमूं शिववास करै सुखदा ।२५९।
ओं ह्रीं सूरिहंसाय नमः अर्घं ।

वनवास उदास सदा जगतैं, पर आस न खास विलास रतै ।
धरि भक्ति हिये गणराज सदा, प्रणमूं शिववास करै सुखदा ॥२६०॥
ओं ह्रीं सूरिहंसगुणाय नमः अर्घं ।

निज नाम महागुण मंत्र धरै, छिन मात्र जपे भवि आश वरै ।
धरि भक्ति हिये गणराज सदा, प्रणमूं शिववास करै सुखदा ॥२६१॥

ॐ ह्रीं सूरिमंत्रगुणानन्दाय नमः अर्घं ।

परमोत्तम सिद्ध परियाय कही, अति शुद्ध प्रसिद्ध सुखात्म मही ।
धरि भक्ति हिये गणराज सदा, प्रणमूं शिववास करै सुखदा ॥२६२॥

ओं ह्रीं सूरिसिद्धानन्दाय नमः अर्घं ।

माला छन्द—शशि सन्ताप कलाप निवारण ज्ञान कला सरसै,
मिथ्यातम हरि भवि आनन्द करि अनुभव भा दरसै ।
सूरि निज भेद कियो परसैं,
भये मुक्ति मैं नमूं शीश निज जोर युगल करसै ॥ २६३ ॥

ओं ह्रीं सूरिअमृतचन्द्राय नमः अर्घ ।

पूरण चन्द्र सरूप कलाधर ज्ञान सुधा वरसै,
भवि चकोर चित चाहत नित मनु चरण जोति परसै ।
सूरि निज भेद कियो परसैं, भये मुक्ति मैं नमूं शीश० ॥२६४॥

ओं ह्रीं सूरिसुधाचन्द्रस्वरूपाय नमः अर्घं ।

जगजिय ताप निवारन कारण. विलसे अन्तरसैं,

देव सुधा सम गुण निवाहकर सकल चराचरसैं।
सूरि निज भेद कियो परसे, भये मुक्ति मैं नमूं शीश० ॥२६५॥

ॐ ह्रीं सूरिसुधागुणाय नमः अर्घं।

जा धुनि सुनि संशय विनसै जिम ताप मेघ वरसै,
मनहुं कमल मकरंद वृन्द अलि पाय सुधासरसै।
सूरि निज भेद कियो परसैं, भये मुक्ति मैं नमूं शीश ०। २६६।

ओं ह्रीं सूरिसुधाध्वनये नमः अर्घं।

अजर अमर सुखदाय भाय मन ज्यों मयूर हरसै,
गाजत घन बाजत ध्वनि सुनि मनु भाजत भय उरसैं।
सूरि निज भेद कियो परसैं, भये मुक्ति मैं नमूं शीश ०। २६७।

ओं ह्रीं सूरिअमृतध्वनिसुरूपाय नमः अर्घं।

चकोर छंद—जो अपने गुण वा पर्याय, वरै निज धर्म न होत विनास।

२५७

द्रव्य कहावत है सु अनंत, स्वभाव धरै निज आतम विलास ॥
सूरि कहाय सु कर्म खिपाइ, निजातम पाय गये शिवधाम ।
सु आतमराम सदा अभिराम भये सुख काम नमूं वसु जाम।२६८।

ओं ह्रीं सूरिद्रव्याय नमः अर्घं ।

ज्यों शशि जोति रहै सियरा नित, ज्यों रवि जोति रहै नित ताप ।
ज्यों निज ज्ञानकला परिपूरण, राजत हो निज करण सु आप ।
सूरि कहाय स कर्म खिपाइ, निजातम पाय गये शिवधाम ।
सु आतमराम सदा अभिराम, भये सुखकाम नमूं वसु जाम २६९

ओं ह्रीं सूरिगुणद्रव्याय नमः अर्घं ।

हो अविनाश अनूपम रूप सु, ज्ञानमई नित केलि करान ।
पै न तजै मरजाद रहै, जिम सिन्धु कलोल सदा परमाण ॥
सूरि कहाय सु कर्म खिपाइ, निजातम पाय गये शिवधाम ।
सु आतमराम सदा अभिराम, भये सुखकाम नमूं वसु जाम २७०

जे कछु द्रव्य तनो गुण है, सु समस्त मिलै गुण आतम माहीं ।
ताकरि द्रव्य कहावत है, अविनाश नमैं हम ताईं ॥
सूरि कहाय सु कर्म खिपाइ, निजातम पाय गये शिवधाम ।
सु आतमराम सदा अभिराम, भये सुखकाम नमूं वसु जाम २७१

ओं ह्रीं सूरिद्रव्यस्वरूपाय नमः अर्घं ।

जा गुणमें गुण और न हो, निज द्रव्य रहै नित और न ठौर ।
सो गुण रूप सदा निवसै, हम पूजत हैं करके कर जोर ॥
सूरि कहाय सु कर्म खिपाइ, निजातम पाय गये शिवधाम ।
सु आतमराम सदा अभिराम, भये सुखकाम नमूं वसु जाम २७२

ॐ ह्रीं सूरिगुणस्वरूपाय नमः अर्घं ।

जो परणाम धरैं तिनसो, तिन्मेंकरहै वरतै तिस रूप ।
सो पर्याय उपाय विना नित, आप विराजत हैं सु अनूप ॥
सूरि कहाय सु कर्म खिपाइ, निजातम पाय गये शिवधाम ।

सुआतमराम सदा अभिराम, भये सुखकाम नमूं वसु जाम २७३

ओं ह्रीं सूरिपर्यायस्वरूपाय नमः अर्घं ।

हो नित ही परणाम समै प्रति, सो उत्पाद कहो भगवान ।
सो तुम भाव प्रकाश कियो, निज यह गुणका उत्पाद महान ॥
सूरि कहाय सु कर्म खिपाइ निजातम पाय गये शिवधाम ।
सु आतमराम सदा अभिराम, भये सुखकाम नमूं वसु जाम २७६

ॐ ह्रीं सूरिगुणोत्पादाय नमः अर्घं ।

ज्यों मृतिका निज रूप न छांडत, है घटमांहि अनेक प्रकार ।
सो तुम जीव स्वभाव धरौ नित, मुक्त भए जगवास निवार ॥
सूरि कहाय सुकर्म खिपाइ, निजातम पाय गये शिवधाम ।
सु आतमराम सदा अभिराम, भये सुखकाम नमूं वसु जाम २७५

ॐ ह्रीं सूरिध्रुवगुणोत्पादाय नमः अर्घं ।

थे जगमें सब भाव विभाव, पराश्रित रूप अनेक प्रकार ।
ते सब त्याग भए शिवरूप, अबंध अमन्द महा सुखकार ॥

सूरि कहाय सु कर्म खिपाइ, निजातम पाय गये शिवधाम।
सु आतमराम सदा अभिराम, भये सुखकाम नमूं वसु जाम २७६

ॐ ह्रीं सूरिव्ययगुणोत्पादाय नमः अर्घं।

जे जगमें षट्द्रव्य कहै, तिनमें इक जीव :सु ज्ञान स्वरूपा।
और सभी विनज्ञान कहै, तुम राजत हो नित ज्ञान अनूपा ॥
सूरि कहाय सुकर्म खिपाइ, निजातम पाय गये शिवधाम।
सुआतमराम सदा अभिराम, भये सुखकाम नमूं वसु जाम २७७

ओं ह्रीं सूरिजीवतत्त्वाय नमः अर्घं।

ज्ञान सुभाव धरो नित ही, नहीं छाड़त हो कबहूं निज वान।
येहीं विशेष भयो सब सों नहीं, औरनमें ; गुण ये परधान ॥
सूरि कहाय सुकर्म खिपाइ, निजातम पाय गये शिवधाम।
सु आतमराम सदा अभिराम, भये सुखकाम नमूं वसु जाम २७८

ओं ह्रीं सूरिजीवतत्त्वगुणाय नमः अर्घं।

हो कर्तादि अनेक प्रकार, निजातममें परमै अनिवार ।
सो परको न लगाव रहो, निज ही निजकर्म रहा सुखकार ॥
सूरि कहाय सुकर्म खिपाइ, निजातम पाय गये शिवधाम ।
सु आतमराम सदा अभिराम, भये सुखकाम नमूं वसु जाम ।२७९।

ॐ ह्रीं सूरिजीवविद्भ्यो नमः अर्घं ।

द्रव्य तथापि विभाव दऊ, विधि कर्म प्रवाह वहै विन आदि ।
ते सब एक भये थिररूप, निजातम शुद्ध सुभाव प्रसाद ॥
सूरि कहाय सु कर्म खिपाइ, निजातम पाय गये शिवधाम ।
सु आतमराम सदा अभिराम, भये सुखकाम नमूं वसु जाम २८०

ॐ ह्रीं सुरिआश्रयविनाशाय नमः अर्घं ।

मोदक छन्द—बंध दऊ विधिके दुख कारण, नाश कियो भवपार उतारण
सूरि भये निज ज्ञान कलाकर, सिद्ध भये प्रणमूं मैं मनधर ।२८१।

ओं ह्रीं सरिबंधतत्त्वविनाशाय नमः अर्घं ।

सम्वर तत्त्व महा ख हेतु है, आश्रव रोकनको यह हेतु है ।

सूरि महा निज ज्ञान कलाकर, सिद्ध भये प्रणमूं मन मैं धर।२८२।

ओं ह्रीं सूरिसंवरगुणाय नमः अर्घं।

ज्यूं मणि दीप अडोल अनूप ही, संवर तत्त्व निराकुलरूप ही।

सूरि महा निज ज्ञान कलाकर, सिद्ध भये प्रणमूं मन मैं धर।२८३।

ओं ह्रीं सूरिसंवरतत्त्वस्वरूपाय नमः अर्घं।

संवरके गुण ते मुनि पावत, जो मुनि शुद्ध सुभाव सुध्यावत।

सूरि महा निज ज्ञान कलाकर, सिद्ध भये प्रणमूं मन मैं धर।२८४।

ओं ह्रीं सूरिसंवरगुणाय नमः अर्घं।

संवर धर्मतनी शिव पावहि, संवर धरम तहां दरशावहि।

सूरि महा निज ज्ञान कलाकर, सिद्ध भये प्रणमूं मन मैं धर।२८५।

ओं ह्रीं सूरिसंवरधर्माय नमः अर्घं।

दोहा—एक देश वा सर्व विधि, दोनों मुक्ति स्वरूप।

नमूं निरजरा तत्त्वसों, पायो सिद्ध अनूप।२८६।

ओं ह्रीं सूरिनिर्जरातत्त्वाय नमः अर्घं।

शुद्ध सुभाव जहां तहां, कहो कर्मको नाश ।
एम निरजरा तत्त्वका, रूप कियो परकाश ॥ २८७ ॥
ॐ ह्रीं सूरिनिर्जरातत्त्वस्वरूपाय नमः अर्घं ।

कोटि जन्मके विधि सकल, सूके तृण सम जान ।
दहे निर्जरा अग्निसों, इह गुण है परधान ॥ २८८ ॥
ॐ ह्रीं सूरिनिर्जरागुणस्वरूपाय नमः अर्घं ।

निज बल कर्म खपाइये, कहो निर्जरा धर्म ।
धर्मी सोई आत्मा, एक हि रूप सुपर्म ॥ २८९ ॥
ॐ ह्रीं सूरिनिर्जराधर्मस्वरूपाय नमः अर्घं ।

समय समै गुण श्रेणिका, खिरै कर्म बल ध्यान ।
ये सम्बंध निवार करि, करै मुक्ति सुख पान ॥ २९० ॥
ॐ ह्रीं सूरिनिर्जरानुबंधाय नमः अर्घं ।

अतुल शक्ति थिर भावकी, सो प्रगटी तुम माहिं ।
यहां निर्जरा रूप है, नमूं भक्ति कर ताहि ॥ २९१ ॥

ॐ ह्रीं सूरिनिर्जरास्वरूपाय नमः अर्घं ।

सर्व कर्मके नाश विन, लहै न शिव-सुखरास ।
निश्चय तुम ही निर्जरा, कियो प्रतीत प्रकाश ॥ २९२ ॥

ओं ह्रीं सूरिनिर्जराप्रतीताय नमः अर्घं ।

सकल कर्ममल नाशतें, शुद्ध निरंजन रूप ।
ज्यों कंचन विन कालिमा, राजै मोक्ष अनूप ॥ २९३ ॥

ॐ ह्रीं सूरिमोक्षाय नमः अर्घं ।

द्रव्य भाव दोनों सुविधि, करै जगतमें वास ।
दोऊं विध बन्ध उखारके, भये मुक्त सुखरास ॥ २९४ ॥

ॐ ह्रीं सूरिबन्धमोक्षाय नमः अर्घं ।

पर विकलप सुख दुख नहीं, अनुभव निज आनन्द ।
जन्म मरण विधि नाशकर, राजत शिवसुख कंद ॥ २९५ ॥

ॐ ह्रीं सूरिमोक्षस्वरूपाय नमः अर्घं ।

जहां न दुखको लेश है, उदय कर्म अनुमार।
सो शिवपद पायो महा, नमूं भक्ति उर धार॥ २९६॥
ओं ह्रीं सूरिमोक्षगुणाय नमः अर्घं।

जो शिव सुगुण प्रसिद्ध है, तिनसों नित्त प्रबन्ध।
जे जगवास विलास दुख, तिनसों नमूं अबन्ध॥ २९७॥
ओं ह्रीं सूरिमोक्षानुबंधाय नमः अर्घं।

जैसी निज तन आकृती, तज कीनो शिववास।
ते तैसैं नित अचल हैं, ज्ञानानन्द प्रकाश॥ २९८॥
ॐ ह्रीं सूरिमोक्षानुप्रकाशाय नमः अर्घं।

खयोपशम परिणाम कर, सधै न निजका रूप।
या निजपदमें लीनता, ये ही गुप्त स्वरूप॥ २९९॥
ओं ह्रीं सूरिस्वरूपगुप्तये नमः अर्घं।

इन्द्रियजनित न दुख जहां, सदा निजानन्द रूप।

निर आकुल स्वाधीनता, वरतै शुद्ध स्वरूप ॥ ३०० ॥

ॐ ह्रीं सूरिपरमात्मस्वरूपाय नमः अर्घं ।

रोला छन्द—संपूरण श्रुत सार निजातम बोध लहानो,
निज अनुभव शिव मूल मनुज उपदेश करानो ।
शिष्यनके अज्ञान हरै ज्यूं रवि अंधियारा,
पाठक गुण संभवै सिद्ध प्रति नमन हमारा ॥ ३०१ ॥

ॐ ह्रीं पाठकेभ्यो नमः अर्घं ।

मुक्ति मूल है आत्मज्ञान सोई श्रुत ज्ञानी,
तत्त्व ज्ञानसों लहै निजातम पद सुखदानी ।
शिष्यनके अज्ञान हरै ज्यूं रवि अन्धियारा,
पाठक गुण संभवै सिद्ध प्रति नमन हमारा ॥ ३०२ ॥

ॐ ह्रीं पाठकमोक्षमण्डनाय नमः अर्घं ।

भवसागरतैं भव्य जीव तारण अनिवारा,

तुममें यह गुण अधिक आप पायो तिस पारा।
शिष्यनके अज्ञान हरै ज्यूं रवि अन्धियारा,
पाठक गुण सभंवै सिद्ध प्रति नमन हमारा ॥३०३॥
ओं ह्रीं पाठकगुणेभ्यो नमः अर्घं।

दर्शन ज्ञान स्वभाव धरो तद्रूप अनूपी,
हीनाधिक विन अचल विराजत शुद्ध सरूपी।
शिष्यनके अज्ञान हरै ज्यूं रवि अन्धियारा,
पाठक गुण सभंवै सिद्ध प्रति नमन हमारा ॥३०४॥
ओं ह्रीं पाठकगुणस्वरूपेभ्यो नमः अर्घं।

निज गुण वा परयाय अखण्डित नित्य धरै है।
तिहुं काल प्रति अन्य भाव नहीं ग्रहण करै हैं।
शिष्यनके अज्ञान हरै ज्यूं रवि अन्धियारा,

पाठक गुण सम्भवै सिद्ध प्रति नमन हमारा ॥३०५॥
ओं ह्रीं पाठकद्रव्याय नमः अर्घं ।

सह भावी गुण सार जहां परभाव न लेसा,
अगुरुलघू परणाम वस्तु सद्भाव विशेषा ।
शिष्यनके अज्ञान हरै ज्यूं रवि अन्धियारा,
पाठक गुण सम्भवै सिद्ध प्रति नमन हमारा ॥३०६॥
ओं ह्रीं पाठकगुणपर्यायेभ्यो नमः अर्घं ।

गुण समुदायी द्रव्य याहितें निरगुण नाहीं,
सो अनन्त गुण सदा विराजत तुम पद माहीं ।
शिष्यनके अज्ञान हरै ज्यूं रवि अन्धियारा,
पाठक गुण सम्भवै सिद्ध प्रति नमन हमारा ॥३०७॥
ओं ह्रीं पाठकगुणद्रव्याय नमः अर्घं ।

सत सरूप सब द्रव्य सधै नीके अबाधकर,

सो तुम सत्य सरूप विराजो द्रव्य भाव धर।
शिष्यनके अज्ञान हरै ज्यूं रवि अन्धियारा,
पाठक गुण सम्भवै सिद्ध प्रति नमन हमारा ।३०८।
ओं ह्रीं पाठकद्रव्यसरूपाय नमः अर्घं ।

जे जे हैं परनाम विना परनामी नाहीं,
परनामी परनाम एक ही है तुममाही ।
शिष्यनके अज्ञान हरै ज्यों रवि अंधियारा,
पाठक गुण सम्भवै सिद्ध प्रति नमन हमारा ॥३०९॥
ओं ह्रीं पाठकद्रव्यपर्यायाय नमः अर्घं ।

अगुरुलघू पर्याय शुद्ध परनाम बखानी,
निज सरूपमें अंतरगत श्रुतज्ञान प्रमानी ।
शिष्यनके अज्ञान हरै ज्यों रवि अंधियारा,

पाठक गुण सम्भवै सिद्ध प्रति नमन हमारा ॥२१०॥

ओं ह्रीं पाठकपर्यायस्वरूपाय नमः अर्घं ।

जगतवास सब पापमूल जियको दुखदाई,
ताको नाशन हेत कहो शिव मूल उपाई ।
शिष्यनके अज्ञान हरै ज्यूं रवि अंधियारा,
पाठक गुण सम्भवै सिद्ध प्रति नमन हमारा ॥२११॥

ओं ह्रीं पाठकमंगलाय नमः अर्घं ।

जहां न दुखको लेश सर्वथा सुख ही जानो,
सोई मंगल गुण तुममें प्रत्यक्ष लखानो ।
शिष्यनके अज्ञान हरे ज्यूं रवि अंधियारा,,
पाठक गुण सम्भवे सिद्ध प्रति नमन हमारा।३१२।

ओं ह्रीं पाठकमंगलगुणाय नमः अर्घं ।

औरन मंगलकरन आप मंगलमय राजे,

दर्शन कर सुखसार मिलै सब ही अघ भाजै ।
शिष्यनके अज्ञान हरै ज्यूं रवि अंधियारा,
पाठक गुण सम्भवे सिद्धध प्रति नमन हमारा ।३१३।
ओं ह्रीं पाठकमंगलगुणस्वरूपाय नमः अर्घं ।
आदि अनंत अविरुद्ध शुभ मंगलमय मूरति,
निज सरूपमें वसै सदा परभाव विदूरित ।
शिष्यनके अज्ञान हरै ज्यूं रवि अंधियारा,
पाठक गुण सम्भवे सिद्धध प्रति नमन हमारा । ३१४ ।
ओं ह्रीं पाठकद्रव्यमंगलाय नमः अर्घं ।
जितनी परणति धरो सबहि मंगलमय रूपी,
अन्य अवस्थित टार धार तद्रूप अनूपी ।
शिष्यनके अज्ञान हरै ज्यूं रवि अन्धियारा,
पाठक गुण सम्भवे सिद्धध प्रति नमन हमारा । ३१५।

ओं ह्रीं पाठकमंगलपर्यायाय नमः अर्घं।

निश्चय वा विवहार सर्वथा मंगलकारी,
जग जीवनके विघन विनाशन सर्व प्रकारी।
शिष्यनके अज्ञान हरै ज्यूं रवि अन्धियारा,
पाठक गुण सम्भवे सिद्ध प्रति नमन हमारा। ३१६।

ओं ह्रीं पाठकद्रव्यमंगलपर्यायाय नमः अर्घं।

भेदाभेद प्रमाण वस्तु सर्वस्व बखानो,
वचन अगोचर कहो तथा निर्दोष कहानो।
शिष्यनके अज्ञान हरै ज्यूं रवि अन्धियारा,
पाठक गुण सम्भवे सिद्ध प्रति नमन हमारा। ३१७।

ओं ह्रीं पाठकद्रव्यगुणपर्यायमंगलाय नमः अर्घं।

सर्व विशेष प्रतिभाससमान मंगलमय भासे,

निर्विकल्प आनन्दरूप अनुभूति प्रकाशे ।
शिष्यनके अज्ञान हरै ज्यूं रवि अंधियारा,
पाठक गुण सम्भवै सिद्ध प्रति नमन हमारा। ३१८।
ओं ह्रीं पाठकस्वरूपमंगलाय नमः अर्घं ।

पायता छन्द—निर्विघ्न निराश्रय होई, लोकोत्तम मंगल सोई ।
तुम गुण अनन्त श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया । ३१९ ।
ओं ह्रीं पाठकमंगलोत्तमाय नमः अर्घं ।

जगजीवनको हम देखा, तुम ही गुण सार विशेखा ।
तुम गुण अनन्य श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया । ३२० ।
ओं ह्रीं पाठकगुणलोकोत्तमाय नमः अर्घं ।

षट्द्रव्य रचित जग सारा, तुम उत्तम रूप निहारा ।
तुम गुण अनन्त श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया । ३२१ ।
ओं ह्रीं पाठकद्रव्यलोकोत्तमाय नमः अर्घं ।

निज ज्ञान शुद्धता पाई, जिस करि यह है प्रभुताई।
तुम गुण अनंत श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया ॥३२२॥
ओं ह्रीं पाठकज्ञानाय नमः अर्घं ।

जग जीव अपूरण ज्ञानी, तुम ही लोकोत्तम मानी।
तुम गुण अनंत श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया ॥३२३॥
ओं ह्रीं पाठकज्ञानलोकोत्तमाय नमः अर्घं ।

युगपत् निरभेद निहारा, तुम दर्शन भेद उघारा।
तुम गुण अनन्त श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया ॥३२४॥
ओं ह्रीं पाठकदर्शनाय नमः अर्घं ।

हम सोवत हैं नित मोही, देखे देखत तुमको ही।
तुम गुण अनन्त श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया ॥३२५॥
ओं ह्रीं पाठकदर्शनलोकोत्तमाय नमः अर्घं ।

भगवंत महासुखकारा, तुम ज्ञान महा अविकारा।

तुम गुण अनन्त श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया॥ ३२६ ॥

ओं ह्रीं पाठकदर्शनस्वरूपाय नमः अर्घं ।

निरशंस अनंत अबाधा, निज बोधन भाव अराधा ।

तुम गुण अनन्त श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया ॥३२७॥

ओं ह्रीं पाठकसम्यक्त्वाय नमः अर्घं ।

सम्यक्त महा सुखकारी, निज गुण स्वरूप अविकारी ।

तुम गुण अनंत श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया ॥ ३२८ ॥

ओं ह्रीं पाठकसम्यक्त्वगुणस्वरूपाय नमः अर्घं ।

निरखेद अछेद अभेदा, सुख रूप वीर्य निर्वेदा ।

तुम गुण अनन्त श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया॥ ३२९ ॥

ओं ह्रीं पाठकवीर्याय नमः अर्घं ।

निज भोग कलेश न लेशा, यह वीर्य अनन्त अदेशा ।

तुम गुण अनन्त श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया ॥

ओं ह्रीं पाठकवीर्यगुणाय नमः अर्घं ॥ ३३० ॥

परनाम सुथिर निज माहीं, उपजै न कलेस कदाही ।
तुम गुण अनन्त श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया ॥

ॐ ह्रीं पाठकवीर्यपर्यायाय नमः अर्घं ॥ ३३१ ॥

द्रव्य भाव लहो तुम जैसो, पावै जगवासी नहि ऐसो ।
तुम गुण अनन्त श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया ॥

ओं ह्रीं पाठकवीर्यद्रव्याय नमः अर्घं ॥ ३३२ ॥

निज ज्ञान सुधारस पीवत, आनन्द सुभाव सु जीवत ।
तुम गुण अनन्त श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया ॥

ॐ ह्रीं पाठकवीर्यगुणपर्यायाय नमः अर्घं ॥ ३३३ ॥

अविशेष अनन्त सुभावा, तुम दर्शन माहिं लखावा ।
तुम गुण अनन्त श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया ॥

ॐ ह्रीं पाठकदर्शनपर्यायाय नमः अर्घं ॥ ३३४ ॥

एकवार लखे सबहीको, तद्रूप निजातम ही को ।

तुम गुण अनंत श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया ॥
ओं ह्रीं पाठकदर्शनपर्यायस्वरूपाय नमः अर्घं । २३५ ॥

सपरस आदिक गुण नाहीं, चिद्रूप निजातम माहीं ।
तुम गुण अनंत श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया । ३६।
ओं ह्रीं पाठकज्ञानद्रव्याय नमः अर्घं ।

सरनागति दीनदयाला, हम पूजत भाव विशाला ।
तुम गुण अनंत श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया ।२३७।
ओं ह्रीं पाठकशरणाय नमः अर्घं ।

जिनशरण गही शिव पायो, इस शरण महा गुण गायो ।
तुम गुण अनंत श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया ॥२३८॥
ओं ह्रीं पाठकगुणशरणाय नमः अर्घं ।

अनुभव निज बोध करावै, यह ज्ञान शरण कहलावै ।
तुम गुण अनंत श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया ॥२३९॥

ओं ह्रीं पाठकज्ञानगुणशरणाय नमः अर्घं ।

द्रग मात्र तथा सरधाना, निश्चय शिववास कराना ।
तुम गुण अनंत श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया ॥ ३४० ॥

ओं ह्रीं पाठकदर्शनशरणाय नमः अर्घं ।

निरभेद स्वरूप अनूपा, है शर्ण तणी शिव भूपा ।
तुम गुण अनंत श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया ॥ ३४१ ॥

ओं ह्रीं पाठकदर्शनस्वरूपशरणाय नमः अर्घं ।

निज आतम-स्वरूप लखाया, इह कारण शिवपद पाया ।
तुम गुण अनंत श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया ॥ ३४२ ॥

ओं ह्रीं पाठकसम्यक्त्वशरणाय नमः अर्घं ।

आतम-स्वरूप सरधाना, तुम शरण गहौं भगवाना ।
तुम गुण अनंत श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया ॥ ३४३ ॥

ओं ह्रीं पाठकसम्यक्त्वस्वरूपाय नमः अर्घं ।

निज आतम साधन माहीं, पुरुषारथ छूटै नाहीं।
तुम गुण अनंत श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया ॥ ३४४ ॥
ओं ह्रीं पाठकवीर्यशरणाय नमः अर्घं।

आतम शक्ती प्रगटावै, तब निज स्वरूप जिय पावै।
तुम गुण अनंत श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया ॥ ३४५ ॥
ओं ह्रीं पाठकवीर्यस्वरूपशरणाय नमः अर्घं।

परमातम वीर्य महा है, पर निमित न लेश तहां है।
तुम गुण अनंत श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया ॥ ३४६ ॥
ओं ह्रीं पाठकवीर्यपरमात्मशरणाय नमः अर्घं।

श्रुतद्वादशांग जिनवानी, निश्चय शिवद्वारा करानी।
तुम गुण अनंत श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया ॥ ३४७ ॥
ओं ह्रीं पाठकद्वादशांगशरणाय नमः अर्घं।

दश पूर्व महा जिनवाणी, निश्चय शिववास करानी।

तुम गुण अनंत श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया ॥ ३४८ ॥
ओं ह्रीं पाठकदशपूर्वांगाय नमः अर्घं ।

दश चार पूर्व जिनवानी, निश्चय शिववास करानी ।
तुम गुण अनंत श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया ॥ ३४९ ॥
ओं ह्रीं पाठकचतुर्दशपूर्वांगाय नमः अर्घं ।

निज आतम चर्ण प्रगटावै, आचार अंग कहलावै ।
तुम गुण अनंत श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया ॥ ३५० ॥
ओं ह्रीं पाठकआचारांगाय नमः अर्घं ।

रेखता छन्द

विविध संस्यादि तम टारी, निरंतर ज्ञान आचारी ।
पूर्ण श्रुतज्ञान बल पाया, नमूं सत्यार्थ उवझाया ॥ ३५१ ॥
ओं ह्रीं पाठकज्ञानाचाराय नमः अर्घं ।

पराश्रित भाव विनशाया, सुथिर निजरूप दर्शाया ।

पूर्ण श्रुतज्ञान बल पाया, नमूं सत्यार्थ उवझाया ॥ ३५२ ॥

ओं ह्रीं पाठकतपसाचाराय नमः अर्घं ।

मुक्तपद दैन अनिवारी, सर्व बुध चरण आचारी।
पूर्ण श्रुतज्ञान बल पाया, नमूं सत्यार्थ उवझाया ॥ ३५३ ॥

ओं ह्रीं पाठकरत्नत्रयाय नमः अर्घं ।

शुद्ध रत्नत्रय धारी, निजातमरूप अविकारी।
पूर्ण श्रुतज्ञान फल पाया, नमूं सत्यार्थ उवझाया ॥ ३५४ ॥

ओं ह्रीं पाठकरत्नत्रयसहायाय नमः अर्घं ।

वो ध्रुव पंचमगती पाई, जन्म फुनि मरण छुटकाई।
पूर्ण श्रुतज्ञान फल पाया, नमूं सत्यार्थ उवझाया ॥ ३५५ ॥

ओं ह्रीं पाठकध्रुवसंसाराय नमः अर्घं ।

अनूपम रूप अधिकाई, असाधारण स्वपद पाई।
पूर्ण श्रुतज्ञान फल पाया, नमूं सत्यार्थ उवझाया ॥ ३५६ ॥

ओं ह्रीं पाठकएकत्वस्वरूपाय नमः अर्घं।

आन तुम सम न गुण होइ, कह्यो एकत्व गुण सोई।
पूर्ण श्रुतज्ञान फल पाया, नमूं सत्यार्थ उवझाया ॥३५७॥

ओं ह्रीं पाठकएकत्वगुणाय नमः अर्घं।

निजानन्द पूर्ण पद पाया, सोई परमात्म कहलाया।
पूर्ण श्रुतज्ञान फल पाया, नमूं सत्यार्थ उवझाया ॥ ३५८ ॥

ॐ ह्रीं पाठकएकत्वपरमात्मने नमः अर्घं।

उच्चगत मोक्षका दाता, एक निजधर्म विख्याता।
पूर्ण श्रुतज्ञान फल पाया, नमूं सत्यार्थ उवझाया ॥ ३५९ ॥

ओं ह्रीं पाठकएकत्वधर्माय नमः अर्घं।

जो तुम चेतनता परकाशी, न पावै ऐसी जगवासी।
पूर्ण श्रुतज्ञान फल पाया, नमूं सत्यार्थ उवझाया ॥ ३६० ॥

ओं ह्रीं पाठकएकत्वचेतनाय नमः अर्घं।

ज्ञान दर्शन स्वरूपी हो, असाधारण अनूपी हो।
पूर्ण श्रुतज्ञान फल पाया, नमूं सत्यार्थ उवझाया ॥ ३६१ ॥
ओं ह्रीं पाठकएकत्वचेतनस्वरूपाय नमः अर्घं ।

गहै नित निज चतुष्टय को, मिलै कबहूं नहीं परसों।
पूर्ण श्रुतज्ञान बल पाया, नमूं सत्यार्थ उवझाया ॥ ३६२ ॥
ॐ ह्रीं पाठकएकत्वद्रव्याय नमः अर्घं ।

स्वपद अनुभूत सुख रासी, चिदानन्द भाव परकासी।
पूर्ण श्रुतज्ञान फल पाया नमूं सत्यार्थ उवझाया ॥ ३६३ ॥
ओं ह्रीं पाठकचिदानन्दाय नमः अर्घं ।

अन्त पुरुषार्थ साधक हो, जन्म मरणादि बाधक हो।
पूर्ण श्रुतज्ञान बल पाया, नमूं सत्यार्थ उवझाया ॥ ३६४ ॥
ओं ह्रीं पाठकसिद्धसाधकाय नमः अर्घं ।

स्वआतम ज्ञान दरशाया, ये पूरण रिद्ध पद पाया।

पूर्ण श्रुतज्ञान फल पाया, नमूं सत्यार्थ उवझाया ॥ ३६५ ॥

ओं ह्रीं पाठकऋद्धिपूर्णाय नमो अर्घं ।

सकल विधि मूर्छात्यागी, तुम्ही निरग्रन्थ बडभागी ।
पूर्ण श्रुतज्ञान फल पाया, नमूं सत्यार्थ उवझाया ॥ ३६६ ॥

ओं ह्रीं पाठकनिरग्रन्थाय नमो अर्घं ।

निजाश्रित अर्थ जानाहीं, अबाधित अर्थ तुममाहीं ।
पूर्ण श्रुतज्ञान बल पाया, नमूं सत्यार्थ उवझाया । ३६७ ।

ओं ह्रीं पाठकअर्थविधानाय नमो अर्घं ।

न फिर संसार पद पाया, अपूरब बन्ध विनसाया ।
पूर्ण श्रुतज्ञान फल पाया, नमूं सत्यार्थ उवझाया । ३६८ ।

ओं ह्रीं पाठकसंसारानुबन्धाय नमो अर्घं ।

आप कल्याणमय राजो, सकल जगवास दुख त्याजो ।
पूर्ण श्रुतज्ञान बल पाया, नमूं सत्यार्थ उवझाया । ३६९ ।

ओं ह्रीं पाठककल्याणाय नमो अर्घं ।

स्वपर हितकार गुणधारी, परम कल्याण अविकारी।
पूर्ण श्रुतज्ञान फल पाया, नमूं सत्यार्थ उवझाया। ३७०।

ओं ह्रीं पाठककल्याणगुणाय नमो अर्घं।

अहित परहार पद जो है, परम कल्याण तासो है।
पूर्ण श्रुतज्ञान फल पाया, नमूं सत्यार्थ उवझाया। ३७१।

ओं ह्रीं पाठककल्याणस्वरूपाय नमो अर्घं।

स्वसुख द्रव्याश्रयें माहीं, जहां कछु पर निमित्त नाहीं।
पूर्ण श्रुतज्ञान फल पाया, नमूं सत्यार्थ उवझाया।३७२।

ओं ह्रीं पाठककल्याणद्रव्याय नमो अर्घं।

जोहै सोहै अमित काला, अन्यथा भाव विधि टाला।
पूर्ण श्रुतज्ञान फल पाया, नमूं सत्यार्थ उवझाया। ३७३।

ओं ह्रीं पाठकतत्त्वगुणाय नमो अर्घं।

रहै नित चेतना माही, कहैं चिद्रूप मुनि ताही।

पूर्ण श्रुतज्ञान फल पाया, नमूं सत्यार्थ उवझाया । ३७४ ।

ओं ह्रीं पाठकचिद्रूपाय नमो अर्घं ।

सर्वथा ज्ञान परिणामी, प्रगट है चेतना नामी ।
पूर्ण श्रुतज्ञान फल पाया, नमूं सत्यार्थ उवझाया ॥ ३७५ ॥

ओं ह्रीं पाठकचेतनाय नमो अर्घं ।

नहीं अन्तर भेदा है, गुणी गुण निरविछेदा है ।
पूर्ण श्रुतज्ञान फल पाया, नमूं सत्यार्थ उवझाया ॥३७६॥

ओं ह्रीं पाठकचेतनागुणाय नमो अर्घं ।

घटाघट वस्तु परकाशी, धरे हैं जोति प्रतिभाशी ।
पूर्ण श्रुतज्ञान फल पाया, नमूं सत्यार्थ उवझाया ॥३७७॥

ओं ह्रीं पाठकज्योतिप्रकाशाय नमो अर्घं ।

वस्तु सामान्य अवलोका, है युगपत दर्श सिद्धोंका ।
पूर्ण श्रुतज्ञान फल पाया, नमूं सत्यार्थ उवझाया ॥३७८॥

ओं ह्रीं पाठकदर्शनचेतनाय नमो अर्घं ।

विशेषण युक्त साकारा, ज्ञान दुतिमें प्रगट सारा ।
पूरण श्रुतज्ञान फल पाया, नमूं सत्यारथ उवझाया ॥३७९॥
ओं ह्रीं पाठकज्ञानचेतनाय नमो अर्घं ।

ज्ञानसों जीव नामी है, भेद समवाय स्वामी है ।
पूरण श्रुतज्ञान फल पाया, नमू सत्यारथ उवझाया ॥३८०॥
ओं ह्रीं पाठकजीवचिदानंदाय नमः अर्घं ।

चराचर वस्तु स्वाधीना, एक ही समय लखलीना ।
पूरण श्रुतज्ञान फल पाया, नमूं सत्यार्थ उवझाया ॥ ३८१ ॥
ओं ह्रीं पाठकवीर्यचेतनाय नमः अर्घं ।

सकल जीवोंके सुख कारन, सरन तुमही हो अनिवारन ।
पूरण श्रुतज्ञान फल पाया, नमूं सत्यार्थ उवझाया ॥ ३८२ ॥
ओं ह्रीं पाठकसकलशरणाय नमः अर्घं ।

तुम हो त्रयलोक हितकारी, छूते शरण बलिहारी ।
पूरण श्रुतज्ञान फल पाया, नमूं सत्यार्थ उवझाया ॥ ३८३ ॥
ओं ह्रीं पाठकत्रैलोक्यशरणाय नमः अर्घं ।

तुमारी शरण तिहूं काला, करत जग जीव प्रतिपाला ।
पूरण श्रुतज्ञान फल पाया, नमूं सत्यार्थ उवझाया ॥ ३८४ ॥
ओं ह्रीं पाठकत्रिकालशरणाय नमः अर्घ ।

शरण अनिवार सुखदाई, प्रगट सिद्धांतमें गाई ।
पूरण श्रुतज्ञान फल पाया, नमूं सत्यार्थ उवझाया ॥ ३८५ ॥
ओं ह्रीं पाठकत्रिमंगलशरणाय नमो अर्घं ।

लोकमें धर्म विख्याता, सो तुमहीमें सुखसाता ।
पूरण श्रुतज्ञान फल पाया, नमूं सत्यार्थ उवझाया ॥३८६॥
ओं ह्रीं पाठकलोकशरणाय नमो अर्घं ।

जोग विन आश्रवै नाहीं, भये निर आश्रवा ताही ।
पूरण श्रुतज्ञान फल पाया, नमूं सत्यारथ उवझाया ॥३८७॥

ॐ ह्रीं पाठकआश्रववेदाय नमः अर्घं ।

आश्रव करमका होना, कार्य था आपका खोना ।
पूरण श्रुतज्ञान फल पाया, नमूं सत्यारथ उवझाया ॥ ३८८ ॥

ॐ ह्रीं पाठकआश्रवविनाशाय नमः अर्घं ।

तत्त्व निर्बाध उपदेशा, विनाशे कर्म परवेशा ।
पूरण श्रुतज्ञान बल पाया, नमूं सत्यारथ उवझाया ॥३८९॥

ओं ह्रीं पाठकआश्रवउपदेशछेदकाय नमः अर्घं ।

प्रकृति सब कर्मकी चूरी, भाव मल नाश दुख पूरी ।
पूरण श्रुतज्ञान बल पाया, नमूं सत्यार्थ उवझाया ॥३९०॥

ओं ह्रीं पाठकबंधमुक्ताय नमः अर्घं ।

न फिर संसार अवतारा, बंध विधि अन्त कर डारा ।

पूरण श्रुतज्ञान बल पाया, नमूं सत्यारथ उवझाया ॥३९१॥

ओं ह्रीं पाठकबंधविधिरहिताय नमः अर्घं ।

आश्रव कर्म दुखदाई रुके, संवर ये सुखदाई ।

पूरण श्रुतज्ञान बल पाया, नमूं सत्यारथ उवझाया ॥ ३९२ ॥

ॐ ह्रीं पाठकसंवराय नमः अर्घं ।

सर्वथा जोग विनसाया, स्वसंवर रूप दरशाया ।

पूरण श्रुतज्ञान बल पाया, नमूं सत्यारथ उवझाया ॥ ३९. ॥

ॐ ह्रीं पाठकसंवरस्वरूपाय नमः अर्घं ।

भावमें कलुषता नाहीं, भये संवर करण ताहीं ।

पूरण श्रुतज्ञान बल पाया, नमूं सत्यारथ उवझाया ॥३९४॥

ॐ ह्रीं पाठकसंवरकरणाय नमः अर्घं ।

कुपरगति राग रुख नाशन, निरजरा रूप प्रतिभासन ।

पूर्ण श्रुतज्ञान बल पाया, नमूं सत्यार्थ उवझाया ॥ ३९५ ॥

ओं ह्रीं पाठकनिर्जरास्वरूपाय नमः अर्घं ।

कामदेव दाहे जग सारा, आप तिस भस्म कर डारा ।
पूर्ण श्रुतज्ञान बल पाया, नमूं सत्यार्थ उवझाया ॥ ३९६ ॥

ओं ह्रीं पाठकरूपछेदकाय नमः अर्घं ।

चहुं विधि बंध त्रिधि चूरा, यो विस्फोटक कहो पूरा ।
पूर्ण श्रुतज्ञान बल पाया, नमूं सत्यार्थ उवझाया ॥ ३९७ ॥

ओं ह्रीं पाठककर्मविस्फोटकाय नमः अर्घं ।

दऊ विधि कर्मका खोना, सोई है मोक्षका होना ।
पूर्ण श्रुतज्ञान बल पाया, नमूं सत्यार्थ उवझाया ॥ ३९८ ॥

ॐ ह्रीं पाठकमोक्षाय नमः अर्घं ।

द्रव्य अर भाव मल टारा, नमूं शिवरूप सुखकारा ।
पूर्ण श्रुतज्ञान बल पाया, नमूं सत्यार्थ उवझाया ॥ ३९९ ॥

ॐ ह्रीं पाठकमोक्षस्वरूपाय नमः अर्घं ।

अरति रति परिणमित खोई, आत्म रति है प्रगट सोई ।

पूर्ण श्रुतज्ञान बल पाया, नमूं सत्यार्थ उवझाया ॥ ४०० ॥

ओं ह्रीं पाठकआत्मरतये नमः अर्घं ।

लोलतरंग छन्द तथा बड़ी चौपाई ।

अठाइस मूल गुणधारी, सो सब साधु वरैं शिव नारी ।
साधु भये शिव साधनहारै, सो तुम साधु हरो अघ म्हारै । ४०१ ।

ओं ह्रीं सर्वसाधुभ्यो नमः अर्घं ।

मूल तथा सब उत्तर गाये, यो गुण पालत साधु कहाये ।
साधु भये शिव साधन हारै, सो तुम साधु हरो अघ म्हारै ४०२

ओं ह्रीं सर्वसाधुगुणेभ्यो नमः अर्घं ।

साधुनके गुण साधुहि जाने, होत गुणी गुण ही परमाने ।
साधु भये शिव साधनहारे, सो तुम साधु हरो अघ म्हारे ४०३

ॐ ह्रीं सर्वसाधुगुणस्वरूपाय नमः अर्घं ।

नेम थकी शिववास करे जो, द्रव्य थकी शिवरूप कहै जो ।
साधु भये शिव साधनहारे, सो तुम साधु हरो अघ म्हारे ४०४

ॐ ह्रीं सर्वसाधुद्रव्याय नमः अर्घं ।

जीव सदा चिन भाव विलासी, आप ही आप सधें शिव राशी ।
साधु भये शिव साधनहारे, सो तुम साधु हरो अघ म्हारे ४०५

ॐ ह्रीं सर्वसाधुगुणद्रव्याय नमः अर्घं ।

ज्ञानमई निज ज्योति प्रकाशी, भेद विशेष सबै प्रतिभाशी।
साधु भये शिव साधनहारे, सो सब साधु हरो अघ म्हारै ४०६

ॐ ह्रीं साधुज्ञानगुणाय नमः अर्घं ।

एक हि वार लखाय अभेदा, दर्शनको सब रोग विछेदा।
साधु भये शिव साधन हारै, सो सब साधु हरो अघ म्हारै ४०७

ॐ ह्रीं साधुदर्शनाय नमः अर्घं । ४०८ ।

आपहि साधन साध्य तुम्ही हो, एक अनेक अबाध तुम्हीं हो। साधु० ।

ओं ह्रीं साधुद्रव्यभावाय नमः अर्घं ।

चेतनता निज भाव न छारे, रूप सपर्स न औगुन धारे ।

साधु भये शिव साधनहारे, सो सब साधु हरो अघ म्हारै ॥४०९॥
ओं ह्रीं साधुद्रव्यस्वरूपाय नमः अर्घं ।
जो उतपाद भयो इकवारा, सो निरबाध रहै अविकारा ।
साधु भये शिव साधनहारै, सो सब साधु हरो अघ म्हारै ॥४१०॥
ॐ ह्रीं साधुवीर्याय नमः अर्घं ।
है परनाम अभिन्न प्रणामी, सो तुम सोध भये शिवगामी ।
साधु भये शिव साधनहारै, सो सब साधु हरो अघ म्हारै ४११
ओं ह्रीं साधुद्रव्यपर्यायाय नमः अर्घं ।
जो गुण वा परियाय धरो हो, सो निज माहीं अभिन्न वरो हो।
साधु भये शिव साधनहारै, सो सब साधु हरो अघ म्हारै। ४१२
ओं ह्रीं साधुद्रव्यगुणपर्यायाय नमः अर्घं ।
मंगलमय तुम नाम कहावै, लेतहि नाम सु पाप नसावै ।
साधु भये शिवसाधन हारै, सो सब साधु हरो अघ म्हारै ।४१३।

ओं ह्रीं साधुमंगलाय नमः अर्घ ।

मंगल रूप अनूपम सोहै, ध्यान किये नित आनंद होहै ।
साधु भये शिव साधनहारे, सो सब साधु हरो अघ म्हारे ।४१४

ओं ह्रीं साधुमंगलस्वरूपाय नमः अर्घं ।

पाप मिटै तुम शरण गहेतें, मंगल शरण कहाय लहैतें ।
साधु भये शिव साधनहारे, सो सब साधु हरो अघ म्हारे ४१५

ॐ ह्रीं साधुमंगलशरणाय नमः अर्घ ।

देखत ही सब पाप नसे है, आनंद मंगलरूप लसे है ।
साधु भये शिव साधनहारै, सो सब साधु हरो अघ म्हारै ॥४१६॥

ओं ह्रीं साधुमंगलदर्शनाय नमः अर्घ ।

जानत हैं तुमको मुनि नीके, पाप कलाप मिटै तिनहीके ।
साधु भयो शिव साधनहारै, सो सब साधु हरो अघ म्हारै ॥४१७॥

ओं ह्रीं साधुमगलज्ञानाय नमः अर्घ ।

ज्ञानमई तुम हो गुणरासा, मंगल जोति धरै रवि जैसा ।

साधु भये शिव साधनहारे, सो सब साधु हरो अघ म्हारे ४१८

ओं ह्रीं साधुज्ञानगुणमंगलाय नमः अर्घं ।

मंगल वीर्य तुम्हीं दर्शाया, काल अनंत न पाप लगाया ।
साधु भये शिव साधनहारे, सो सब साधु हरो अघ म्हारे ४१९

ओं ह्रीं साधुवीर्यमंगलाय नमः अर्घं ।

वीर्य महा गुणरूप निहारा, पाप विना नित ही अविकारा ।
साधु भये शिव साधनहारे, सो सब साधु हरो अघ म्हारे ४२०

ओं ह्रीं साधुवीर्यमंगलस्वरूपाय नमः अर्घं ।

मंगल वीर्य महा गुणधामी, निज पुरुषार्थ हि मोक्ष लहामी ।
साधु भये शिव साधनहारे, सो सब साधु हरो अघ म्हारे ४२१

ओं ह्रीं साधुवीर्यपरममंगलाय नमः अर्घं ।

वीर्य स्वभाविक पूर्ण तिहारा, कर्म नशाय भये भवपारा ।
साधु भये शिव साधनहारे सो सब साधु हरो अघ म्हारे ४२२

ओं ह्रीं साधुवीर्यद्रव्याय नमः अर्घं ।

तीन हि लोक लखे सब जोई, आप समान न उत्तम कोई ।
साधु भये शिव साधनहारे, सो सब साधु हरो अघ म्हारे ४२३

ॐ ह्रीं साधुलोकोत्तमाय नमः अर्घं ।

लोक सभी विधि बन्धन माही, उत्तम रूप धरो तुम ताहीं । साधु०

ओं ह्रीं साधुलोकोत्तमगुणाय नमः अर्घं । ४२४ ।

लोकनके गुण पाय कलेशा, उत्तम रूप नहीं तुम जैसा । साधु० ॥

ॐ ह्रीं साधुलोकोत्तमगुणस्वरूपाय नमः अर्घं । ४२५ ।

लोक अलोक निहारक नामी, उत्तम द्रव्य तुम्हीं अभिरामी । साधु० ॥

ॐ ह्रीं साधुलोकोत्तमद्रव्याय नमः अर्घं । ४२६ ।

लोक सभी षट्द्रव्य रचाया, उत्तम द्रव्य तुम्हीं हम पाया । साधु० ॥

ओं ह्रीं साधुलोकोत्तमद्रव्यस्वरूपाय नमः अर्घ । ४२७ ।

ज्ञानमई चित उत्तम सोहै, ऐसो लोक विषैं अरु को है । साधु० ॥

ओं ह्रीं साधुलोकोत्तमज्ञानाय नमः अर्घं। ४२८।

ज्ञान स्वरूप सुभाव तिहारा, उत्तम लोक कहै इम सारा। साधु० ॥

ओं ह्रीं साधुलोकोत्तमज्ञानस्वरूपाय नमः अर्घं। ४२९।

देखनमें कछु आड न आवैं, लोक तनी सब उत्तम गावैं। साधु० ॥

ओं ह्रीं साधुलोकोत्तमदर्शनाय नमः अर्घं। ४३०।

देखन जानन भाव धरो हो, उत्तम लोक कहै सगरो हो। साधु०

ॐ ह्रीं साधुलोकोत्तमज्ञानदर्शनाय नमः अर्घं। ४३१।

जाकर लोक शिखरपद धारा, उत्तम धर्म कहो जग सारा। साधु० ॥

ओं ह्रीं साधुलोकोत्तमधर्माय नमः अर्घं। ४३२।

धर्म स्वरूप निजातम सोही, उत्तम लोक विषैं ठहराई। साधु० ॥

ओं ह्रीं साधुलोकोत्तमधर्मस्वरूपाय नमः अर्घं। ४३३।

अन्य सहाय न चाहत जाको, उत्तम लोक कहै बल ताको। साधु० ॥

ओं ह्रीं साधुलोकोत्तमवीर्याय नमः अर्घं। ४३४।

उत्तम वीर्य सरूप निहारा, साधन मोक्ष कियो अनिवारा। साधु० ॥
ओं ह्रीं साधुलोकोत्तमवीर्यसरूपाय नमः अर्घं। ४३५।
पूरण आतम कला परकाशी, लोक विषै अतिशय अविनाशी। साधु० ॥
ओं ह्रीं साधुलोकोत्तमअतिशयाय नमः अर्घं। ४३६।
राग विरोध न चेतन माहीं, ब्रह्म कहो जग उत्तम ताहीं। साधु० ॥
ॐ ह्रीं साधुलोकोत्तमब्रह्मज्ञानाय नमः अर्घं। ४३७।
ज्ञान सरूप अकम्प अडोला, पूरण ब्रह्म प्रकाश अटोला। साधु० ॥
ओं ह्रीं साधुलोकोत्तमब्रह्मज्ञानसरूपाय नमः अर्घं।
राग विरोध जयो शिवगामी, आतम अनातम अन्तरजामी। साधु० ॥
ओं ह्रीं साधुलोकोत्तमजिनाय नमः अर्घं।
भेद विना गुण भेद धरो हो, सांख्य कुवादिक पक्ष हरो हो। साधु० ॥
ओं ह्रीं साधुलोकोत्तमगुणसम्पन्नाय नमः अर्घं।
साधत आतम पुरुष सखाई, उत्तम पुरुष कहो जग ताई। साधु० ॥
ओं ह्रीं साधुलोकोत्तमपुरुषाय नमोऽर्घं।

साधु समान न दीनदयाला, शरण गहै सुख होत विशाला । सा० ॥

ओं ह्रीं साधुलोकोत्तमशरणाय नमोऽर्घं ।

जे जन साधू शरण गही है, ते शिव आनन्द लाभ लही है । सा० ॥

ओं ह्रीं साधुलोकोत्तमगुणशरणाय नमो अर्घं ।

साधुनके गुण द्रव्य चितारे, होत महासुख शरण उभारे । सा० ॥

ओं ह्रीं साधुगुणद्रव्यशरणाय नमो अर्घं ।

लावनी छन्द ।

तुम चितवत वा अवलोकत वा सरधानी, इम शरण गहै पावै निश्चय शिवरानी
निज रूप मगनमन ध्यान धरै मुनिराजै, मैं नमूं साधु सम सिद्ध अकम्पविराजै

ओं ह्रीं साधुदर्शनशरणाय नमो अर्घं ।

तुम अनुभव करि शुद्धोपयोग मन धारा, यह ज्ञान शरण पायो निश्चै अविकारा
निज रूप मगन मन ध्यान धरै मुनिराजै, मैं नमूं सा० ॥ ४४९ ॥

ओं ह्रीं साधुज्ञानशरणाय नमो अर्घं ।

निज आत्म रूपमें दृढ़ सरधा तुम पाई, थिर रूप सदा निवसो शिववास कराई
निज रूप मगन मन ध्यान धरै मुनिराजै, मैं नमूं सा० ॥ ४४७ ॥

ओं ह्रीं साधुआत्मशरणाय नमो अर्घं ।

तुम निराकार निरभेद अछेद अनूपा, तुम निरावरण निरद्वंद स्वदर्श सरूपा
निज रूप मगन मन ध्यान धरै मुनिराजै, मैं नमूं सा० ॥ ४४८ ॥

ओं ह्रीं साधुदर्शनसरूपाय नमो अर्घं ।

तुम परम पूज्य परमेश परम पद पाया, हम शरण गही पूजैं नित मनवचकाया
निज रूप मगन मन ध्यान धरै मुनिराजै, मैं नमूं सा० ॥ ४४९ ॥

ओं ह्रीं साधुपरमोत्मशरणाय नमो अर्घं ।

तुममन इन्द्री व्यापार जीत सुअ भीता, हम शरण गही मनु आजकर्म रिपुजीता
निज रूप मगन मनु ध्यान धरै मुनिराजै, मैं नमूं साधु० ॥४५०॥

ओं ह्रीं साधुनिजात्मशरणाय नमो अर्घं ।

भववास दुखी जे शरण गहैं तुम मनमें,
तिनको अवलम्ब उभारो भयहर छिनमें । निज रूप० मैं० ।४५१।
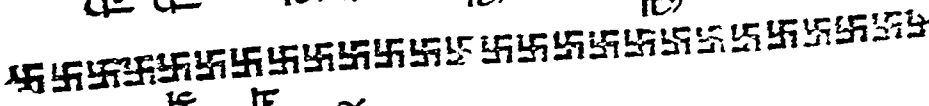
ओं ह्रीं साधुवीर्यशरणाय नमो अर्घं ।

दृगबोध अनन्तानन्त धरो निरखेदा,
तुम बल अपार शरणागति विघन विछेदा। निज०। मैं०। ४५२।

ओं ह्रीं वीर्यातमशरणाय नमो अर्घं ।

निज ज्ञानानन्दी महालक्षिमी तुम सोहै,
सुर असुरनमें नित परम मुनी मन मोहै। निज० मैं०। ४५३।

ओं ह्रीं साधुलक्ष्मीअलंकृताय नमोऽर्घं।

भववास महा दुखरास ताहि विनशाया,
अविछीन लीन स्वाधीन महासुख पाया। निज०। मैं०। ४५४।

ओं ह्रीं साधुलक्ष्मीप्रणीताय नमो अर्घं ।

त्रिभुवनका ईश्वरपना तुम्हींमें पाया,
त्रिभुवनके पातिक हरो मोन रवि छाया। निज०। मैं०। ४५५।

ओं ह्रीं साधुलक्ष्मीरूपाय नमो अर्घं ।

तुम काल अनन्तानन्त अबाध विराजो,
परनिमित्त विकार निवार सु नित्य जु छाजो। निज० मैं०। ४५६

ओं ह्रीं साधुध्रुवाय नमो अर्घं।

तुम छायक लब्धि प्रभाव परम गुण धारी,
निवसो निज आनन्द मांहि अचल अविकारी। निज० मैं०।४५७

ओं ह्रीं साधुगुणध्रुवाय नमो अर्घं।

तेरम चौदस गुण थान द्रव्य है जैसो, रहै काल अनन्तानन्त शुद्धता तैसो।
निज रूप मगन मनु ध्यान धरै मुनिराजै, मैं नमूं सा०। ४५८।

ओं ह्रीं साधुद्रव्यगुणध्रुवाय नमो अर्घं।

फिर जन्म मरण नहीं होय जन्म वो पाया, संसार विलक्षण स्वै अपूर्व पद पाया
निज रूप मगन मन ध्यान धरै मुनिराजै, मैं नमूं सा०। ४५९।

ओं ह्रीं साधुद्रव्योत्पादाय नमो अर्घं।

सूक्ष्म अलब्धि अपर्याप्त निगोद शरीरा, ते तुच्छ द्रव्य कर नाश भये भव तीरा

निज रूप मगन मन ध्यान धरैं मुनिराजै, मैं नमूं सा० । ४६० ।

ओं ह्रीं साधुद्रव्यव्यापिने नमो अर्घं ।

रागादि परिग्रह टारि तत्व सरधानी, इम साधु जीव नित साधतशिवसुखदानी
निज रूप मगन मन ध्यान धरै मुनिराजै, मैं नमूं सा० ॥ ४६१ ॥

ओं ह्रीं साधुजीवाय नमो अर्घं ।

स्वसंवेदन विज्ञान परम अमलाना, इष्ट अरु निष्ट विकलप जाल दुखसाना ।
निज रूप मगन मन ध्यान धरै मुनिराजै, मैं नमूं सा० ॥ ४६२ ॥

ॐ ह्रीं साधुजीवगुणाय नमः अर्घं ।

देखन जानन चेतन सुरूप अविकारी,
गुण गुणी भेदमें अन्य भेद व्यभिचारी । निज० मैं नमूं० ४६३

ओं ह्रीं साधुचेतनगुणाय नमः अर्घं ।

चेतनकी परिणति रहै सदा चित मांही,
ज्यों सिन्धु लहर हो सिंधु और कछु नाहीं । निज० मैं० ४६४

ओं ह्रीं साधुचेतनसरूपाय नमः अर्घं ।

चेतन विलास सुख रास नित्य परकाशी,
सो साधु दिगम्बर साधु भये अविनाशी । निज०, मैं० ।४६५

ओं ह्रीं साधुचेतनाय नमः अर्घं ।

तुम असाधारण अरु परमात्म प्रकाशी,
नहीं अन्य जीव यह लहै गहै भववासी ।
निज रूप मगन मनु ध्यान धरैं मुनिराजैं,
मैं नमूं साधु सम सिद्ध अकंप बिराजैं ॥

ॐ ह्रीं साधुपरमात्मप्रकाशाय नमः अर्घं ॥ ४६६ ॥

तुम मोह तिमिर विन स्वयं सूर्य परकाशी,
गुण द्रव्य पर्य सब भिन्न भिन्न प्रतिभाशी । निज० मैं० ।

ओं ह्रीं साधुज्योतिसरूपाय नमः अर्घ ॥ ४६७ ॥

ज्यों घटपटादि दीपककी ज्योति दिखावै,
त्यों ज्ञान ज्योति सब भिन्न भिन्न दरशावै । निज० मैं० ।

ॐ ह्रीं साधुज्योतिप्रदीपाय नमः अर्घं ॥ ४६८ ॥

सामान्य रूप अवलोकन युगपत सारा,
तुम दर्शन ज्योति प्रदीप हरै अँधियारा। निज० मैं०।

ओं ह्रीं साधुदर्शनज्योतिप्रदीपाय नमः अर्घं ॥ ४६९ ॥

साकार रूप सु विशेष ज्ञान द्युति माहीं,
युगपत कर प्रतिबिंबित वस्तू प्रगटाईं। निज०, मैं०।

ओं ह्रीं साधुज्ञानज्योतिप्रदीपाय नमः अर्घं ॥ ४७० ॥

जे अर्थजन्य कहैं ज्ञान वो झूठे वादी,
है स्वपर प्रकाशक आतम ज्योति अनादी। निज० मैं०।

ओं ह्रीं साधुआत्मज्योतिषे नमः अर्घं ॥ ४७१ ॥

है तारन तरण जिहाज अथित भवसागर,
हम शरण गहैं पावैं शिववास उजागर। निज० मैं०।

ॐ ह्रीं साधुशरणाय नमः अर्घं ॥ ४७२ ॥

सामान्य रूप सब साधु मुक्ति मग साधै,

हम पावैं निज पद नेमरूप आराधैं ।
निज रूप मगन मनु ध्यान धरैं मुनिराजैं,
मैं नमूं साधु सम सिद्ध अकंप बिराजैं ॥
ओं ह्रीं साधुसर्वशरणाय नमः अर्घं ॥ ४७३ ॥

त्रस नाड़ी ही मैं तत्त्वज्ञान सरधानी,
ताकर साधैं निश्चय पावैं शिवरानी । निज० मैं० ।
ओं ह्रीं साधुलोकशरणाय नमः अर्घं ॥ ४७४ ॥

तिहुं लोक करन हित वरते नित उपदेशा,
हम शरण गही मेटो भववास कलेशा । निज० मैं० ।
ॐ ह्रीं साधुत्रिलोकशरणाय नमः अर्घं ॥ ४७५ ॥

संसार विषम दुखकार असार अपारा,
तिस छेदक वेदक सुखदायक हितकारा । निज० मैं० ।
ओं ह्रीं साधुसंसारछेदकाय नमः अर्घं ॥ ४७६ ॥

यद्यपि इक क्षेत्र अवगाह अभिन्न विराजैं,

तद्यपि निज सत्ता माहि भिन्नता साजै । निज० मैं० ।

ओं ह्रीं साधुएकत्वाय नमः अर्घं ॥ ४७७ ॥

यद्यपि सामान्य सु पूरण ज्ञानी,
तद्यपि निज आश्रय भाव भिन्न परनामी । निज० मैं० ।

ॐ ह्रीं साधुएकत्वगुणाय नमः अर्घं ॥ ४७८ ॥

है असाधारण एकत्व द्रव्य तुम माही,
तुम सम संसार मंझार और कोऊ नाहीं । निज० मैं० ।

ओं ह्रीं साधुएकत्वद्रव्याय नमः अर्घं ॥ ४७९ ॥

यद्यपि सब ही हो असंख्यात परदेशी,
तद्यपि निजमें निज रूप स्वद्रव्य सुदेशी । निज० मैं० ।

ओं ह्रीं साधुएकत्वस्वरूपाय नमः अर्घं ॥ ४८० ॥

सामान्य रूप सब ब्रह्म कहावै ज्ञानी,
तिनमें तुम वृषभ सु परम ब्रह्म परणामी । निज० मैं० ।

ओं ह्रीं साधुपरमब्रह्माय नमः अर्घं ॥ ४८१ ॥

सापेक्ष एक ही कहै सु नय विस्तारा,
तुम भाव प्रगट कर कहै सु निश्चै कारा। निज० मैं० ।

ओं ह्रीं साधु परमस्याद्वादाय नमः अर्घं ॥ ४८२ ॥

है ज्ञान निमित यह वचन जाल परमाणा,
वाचक वाच्य संयोग ब्रह्म कहलाना। निज० मैं नमूं० ।

ॐ ह्रीं साधु शुद्धब्रह्माय नमः अर्घं ॥ ४८३ ॥

षट् द्रव्य निरूपण करै सोई आगम हो,
तिसके तुम मूल निधान सु परमागम हो।
निज रूप मगन मनु ध्यान धरै मुनिराजैं,
मैं नमूं साधु सम सिद्ध अकंप बिराजैं ॥

ओं ह्रीं साधु परमागमाय नमः अर्घं ॥ ४८४ ॥

तीर्थेश कहै सर्वज्ञ दिव्य धुनि माहीं,
तुम गुण अपार इम कहो जिनागम ताही। निज० मैं० ४८५

ओं ह्रीं साधु जिनागमाग नमः अर्घं ।

तुम नाम प्रसिद्ध अनेक अर्थका वाची,
ताके प्रबोधसों हो प्रतीत मन सांचीं। निज० मैं०॥ ४८६ ॥

ओं ह्रीं साधु अनेकार्थाय नमः अर्घं ।

लोभादिक मेटे विन न सौचता होई,
है वृथा तीर्थ स्नान करो भी कोई । निज०। मैं०॥ ४८७ ॥

ओं ह्रीं साधु शौचत्वाय नमः अर्घं ।

है मिथ्या मोह प्रबल मल इनका खोना,
सो शुद्ध सौच गुण यही न तनका धोना।
निज रूप मगन मनु ध्यान धरै मुनिराजै,
मैं नमूं साधु सम सिद्ध अकंप बिराजै ॥ ४८८ ।

ओं ह्रीं साधुशुचित्वगुणाय नमः अर्घं ।

इकदेश कर्ममल नाश पवित्र कहायो,

तुम सर्व कर्ममल नाशि परम पद पायो। निज० मैं० ॥४८९॥

ओं ह्रीं साधुपवित्राय नमः अर्घं ।

तुम रहो बन्धसों दूरि एकांत सुखाई,
ज्यों नभ अलिप्त सब द्रव्य रहो तिसमाहीं। निज० मैं० ४९०

ओं ह्रीं साधुबन्धविमुक्ताय नमः अर्घं ।

सब द्रव्य भाव नोकर्म बन्ध छुटकाया,
तुम शुद्ध निरंजन निज सरूप थिर पाया। निज० मैं० ॥९१॥

ओं ह्रीं साधुबन्धमुक्ताय नमः अर्घं ।

अडिल्ल छन्द—भवाश्रव विन अतिशय सहित अबन्ध हो,
मेघ पटल बिन ज्यौं रवि किरण अबन्ध हो।
मोक्षमार्ग वा मोक्षाश्रय सब साधु हैं,
नमत निरंतर हमहूं कर्मरिपुको दहैं ॥ ९२ ॥

ओं ह्रीं साधुबन्धप्रतिबन्धकाय नमः अर्घं ।

तुम स्वरूपमें लीन परम संवर करैं,
यह कारण अनिवार कर्म आवन हरैं। मोक्षमार्ग० नमत निरंतर०

ओं ह्रीं साधुसंवरकारणाय नमः अर्घं ॥ ४६३ ॥

पुद्गलीक परिणाम आठ विधि कर्म हैं,
तिनकी करत निर्जरा शुद्ध सु परम हैं। मोक्षमार्ग० नमत०

ॐ ह्रीं साधुनिर्जराद्रव्याय नमः अर्घं ॥ ४६४ ॥

पर्म शुद्ध उपयोग रूप वरते जहां,
छिनमें नन्तानन्त कर्म खिर है तहां। मोक्षमार्ग० नमत निरन्तर०

ओं ह्रीं साधुनिर्जरानिमित्ताय नमः अर्घं ॥ ४६५ ॥

सकल विभाव अभाव निरजरा करत हैं,
ज्यों रवि तेज प्रचण्ड सकल तम हरत हैं। मोक्षमार्ग० नमत०

ॐ ह्रीं साधुनिर्जरागुणाय नमः अर्घं ॥ ४६६ ॥

जे संसार निमित ते सब दुखरूप हैं,

तुम निमित्त शिव कारण शुद्ध अनूप हैं । मोक्षमार्ग० नमत०

ॐ ह्रीं साधु निमित्तमुक्ताय नमः अर्घं ॥ ४९७ ॥

संशय रहित सुनिश्चै सन्मतिदाय हो,
मिथ्या भ्रमतम नाशन सहज उपाय हो । मोक्षमार्ग० नमत०

ॐ ह्रीं साधु बोधधर्माय नमः अर्घं ॥ ४९८ ॥

अति विशुद्ध निज ज्ञान स्वभाव सु धरत हो,
भव्यनके संशय आदिक तम हरत हो । मोक्षमार्ग० नमत०

ॐ ह्रीं साधु बोधगुणाय नमः अर्घं ॥ ४९९ ॥

अविनाशी अविकार परम शिवधाम हो,
पायो सो तुम सुगत महा अभिराम हो । मोक्षमार्ग० नमत०

ॐ ह्रीं साधु सुगतिभावाय नमः अर्घं ॥ ५०० ॥

जासो परे न और जन्म वा मरण हो,
सो उत्तम उत्कृष्ट परम गतिको लहो । मोक्षमार्ग० नमत०

ओं ह्रीं साधु सुगतिभावाय नमः अर्घं ॥ ५०१ ॥

पर निमित्त रागादिक जे परनाम हैं,
इनसों रहित विभाव इसीसे नाम हैं। मोक्षमार्ग० नमत०।

ओं ह्रीं साधु विभावरहिताय नमः अर्घं ॥ ५०२ ॥

निज सुभाव सामर्थ सु प्रभुता पाइयो,
इन्द्र फनैंद्र नरेन्द्र शीश निज नाइयो। मोक्षमार्ग० नमत०।

ओं ह्रीं साधु स्वभावसहिताय नमः अर्घं । ५०३ ॥

कर्मबंधसों रहित सोई शिवरूप हैं,
निवसे सदा अबंध स्वशुद्ध अनूप हैं। मोक्षमार्ग० नमत०।

ॐ ह्रीं साधु मोक्षस्वरूपाय नमः अर्घं ॥ ५०४ ॥

सकल द्रव्य पर्याय विषैं स्वज्ञान हो,
सत्यारथ निश्चल निश्चै परमाण हो। मोक्षमार्ग० नमत०।

ओं ह्रीं साधु परमानंदाय नमः अर्घं ॥ ५०५ ॥

तीन लोकके पूज्य यतीजन ध्यावहीं,

कर्म-शत्रु को जीत अर्हं पद पावही । मोक्षमार्ग० नमत० ।
ओं ह्रीं साधु अर्हत्स्वरूपाय नमः अर्घं ॥ ५०६ ॥

परम इष्ट शिव साधत सिद्ध कहाइयो,
तीन लोक परमेष्ट परम पद पाइयो । मोक्षमार्ग० नमत० ।
ओं ह्रीं साधु सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ ५०७ ॥

शिव मारग प्रगटावन कारण हो तुम्हीं,
भविजन पतित उधारन तारन हो तुम्हीं । मोक्षमार्ग० नमत० ।
ओं ह्रीं साधु सूरिप्रकाशिने नमः अर्घं ॥ ५०८ ॥

स्वपर स्वहितकरि परम बुद्धि भरतार हो,
ध्यान धरत आनंद बोध दातार हो । मोक्षमार्ग० नमत० ।
ओं ह्रीं साधु उपाध्यायाय नमः अर्घं ॥ ५०९ ॥

पंच परम गुरु प्रगट तुम्हारो नाम है,
भेदाभेद सुभाव सु आतमराम है । मोक्षमार्ग० नमत० ।
ओं ह्रीं साधु अर्हतसिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुभ्यो नमः अर्घं ॥ ५१० ॥

लोकालोक सु व्यापक ज्ञान सुभावतें,
तद्यपि निज पद लीन विहीन विभावतें। मोक्षमार्ग० नमत०।

ओं ह्रीं साधुआत्मरतये नमो अर्घं।

रत्नत्रय निज भाव विशेष अनन्त हैं,
पंच परम गुरु भये नमें नित सन्त हैं। मोक्षमार्ग० नमत०

ओं ह्रीं साधुअर्हंतसिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुरत्नत्रयात्मकअनन्तगुणेभ्यो नमः अर्घं।

पंच परम गुरु नाम विशेषणको धरैं, तीन लोकमें मंगलमय आनन्द करैं।
पूरी कर थुति नाम अनन्त सुखकारणं, पूजूं हूं युत भाव सु अर्घ उतारणं।

ओं ह्रीं अर्हं द्वादशाधिकपंचशतगुणयुतसिद्धेभ्यो नमः पूर्णार्घम्।

यहां ॐ ह्रीं असि आ उ सा नमः १०८ वार जपना चाहिये।

अथ जयमाला।

रत्नत्रय भूषित महा, पंच सुगुरु शिवकार।
सकल सुरेन्द्र नमें नमूं, पाऊँ सो गुण सार॥ १॥

पद्धडी छन्द ।

जय महामोह दल दलन सूर, जय निर्विकल्प आनंदपूर ।
जय दोऊ विधि कर्म विमुक्त, देव जय निजानंद स्वाधीन एव १
जय संशयादि भ्रम तम निवार, जय स्वात्मशक्ति द्युति थुति अपार ।
जय युगपति सकल प्रत्यक्ष लक्ष, जय निरावरण निर्मल अनक्ष २
जय जय जय सुखसागर अगाध, निरद्वंद निरामय निर उपाधि ।
जय मन वच सब व्यापार नाश, जय थिरसरूप निज पद प्रकाश ३
जय पर निमित्त सुख दुख निवार, निरलेप निराश्रय निर्विकार ।
निजमें परको परमें न आप, परवेश न हो नित निर मिलाप ॥ ४ ॥
तुम परम धरम आराध्य सार, निज सम करि कारण दुर्निवार ।
तुम पंच परम आचार युक्त, नित भक्त वर्ग दातार मुक्त ५
एकादशांग सर्वांग पूव, स्वै अनुभव पायो फल अपूर्व ।
अन्तर बाहिर परिग्रह नसाय, परमारथ साधू पद लहाय ६

हम पूजत जिन उर भक्ति ठान, पावैं निश्चय शिवपद महान।
ज्यों शशि किरणावलि सियर पाय, मणि चंद्र कांति द्रवता लहाय ७

घत्तानन्द छन्द।

जय भव भयहारं बन्धविडारं, सुख सारं शिव करतारं
नित सन्त सु ध्यावत पाप नसावत, पावत पद निज अधिकारं ॥

ॐ ह्रीं अर्हं अष्टाधिकपंचशतदलोपरिस्थितसिद्धेभ्यो नमः पूर्णार्घम्।

सोरठा—तुम गुण अमल अपार, अनुभवतें भव भय नशै।
सन्त सदा चित धार, शांति करो भवतप हरो ॥

अथ अष्टमी पूजा १०२४ नाम सहित ।

छप्पय छन्द—ऊरध अधो सरेफ बिन्दु हंकार बिराजै,
अकारादि स्वरलिप्त कर्णिका अन्त सु छाजै ।
वर्गनि पूरित वसुदल अम्बुज तत्त्व संधिधर,
अग्र भागमें मंत्र अनाहत सोहत अतिवर ॥
पुनि अन्त ह्री वेढ्यो परम, सुर ध्यावत अरि नागको,
ह्वै केहरि सम पूजन निमित्त, सिद्धचक्र मंगल करो ॥१॥

ओं ह्रीं नमो सिद्धाणं श्रीसिद्धपरमेष्ठिन चतुर्विंशत्यधिकैकसहस्र १०२४ गुणसहित विराजमान अत्रावतरावतर संवौषट्, अत्र तिष्ठ ठः ठः, अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

इति यंत्र स्थापनं ।

दोहा—सूक्ष्मादि गुण सहित हैं, कर्म रहित निररोग ।
सिद्धचक्र सो थापहूं, मिटै उपद्रव योग ॥ २ ॥

अथाष्टक ।

गोता छन्द—निज आत्मरूप सु तीर्थ मग नित, सरस आनंद धार हो।
नाशे त्रिविध मल सकल दुखमय, भव जलधिके पार हो ॥
यातैं उचित ही है जु तुमपद, नीरसों पूजा करूँ ।
इक सहस अरु चौवीस गुण गण भावयुत मनमें धरूँ ॥ १ ॥

ओं ह्रीं श्री सिद्धपरमेष्ठिने चतुर्विंशत्यधिकैकसहस्र १०२४ गुणसंयुक्ताय श्री समत्तणाणदंसणवीर्यसुहमत्तहेव अवग्गहणंअगुरुलघुमव्वावाहं जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

शीतल सुरूप सुगन्ध चन्दन, एक भव तप नासही ।
सो भव्य मधुकर प्रिय सु यह, नहिं और ठौर सु बास ही ॥
यातें उचित ही है जु तुमपद मलयसों पूजा करूं ।
इक सहस अरु चौवीस गुण गण, भावयुत मनमें धरूं ॥ २ ॥

ओं ह्रीं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने चतुर्विंशत्यधिकैकसहस्र १०२४ गुणसंयुक्ताय श्रीसमत्त-

णाणदंसणवीर्यसुहमत्तहेव अवग्गहणं अगुरुलघुमव्वाबाहं संसारतापविनाशनाय चन्दनं ।

अक्षय अबाधित आदि अन्त, समान स्वच्छ सुभाव हो ।
ज्यों तुस विना तंदुल दिपै त्यूं, निखिल अमल अभाव हो ॥
यातें उचित ही है जु तुमपद, अक्षतं पूजा करूं ।
इक सहस अरु चौवीस गुण गण, भावयुत मनमें धरूं ॥ ३ ॥

ओं ह्रीं श्री सिद्धपरमेष्ठिने चतुर्विंशत्यधिकैकसहस्र १०२४ गुणसंयुक्ताय श्री समत्तणाणदंसणवीर्य सुहमत्तहेव अवग्गहणं अगुरुलघुमव्वाबाहं अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं ।

गुण पुष्पमाल विशाल तुम, भवि कंठ पहिरैं भावसों ।
जिनके मधुप मनरसिक लुब्धित, रमत नित प्रति चावसों ॥
यातें उचित ही है जु तुमपद, पुष्पसों पूजा करूं ।
इक सहस अरु चौवीस गुण गण, भावयुत मनमें धरूं ॥ ४ ॥

ओं ह्रीं श्री सिद्धपरमेष्ठिने चतुर्विंशत्यधिकैकसहस्र १०२४ गुणसंयुक्ताय श्री समत्त णाणदंसण वीर्य सुहमत्तहेव अवग्गहणं अगुरुलघुमव्वाबाहं कामबाणविनाशनाय पुष्पं ।

शुद्धात्म सरस सुपाक मधुर, समान और न रस कहीं ।

ताके हो आस्वादी सो तुम सम, और संतुष्टित नहीं ॥
यातैं उचित ही है जु तुमपद, चरुनसों पूजा करूं ।
इक सहस अरु चौवीस गुण गण, भावयुत मनमें धरूं ॥ ५ ॥

ओं ह्रीं श्री सिद्धपरमेष्ठिने चतुर्विंशत्यधिकैकसहस्रगुणसंयुक्ताय श्रीसमत्तणाण दंसण वीर्य सुहमत्तहेव अवग्गहणं अगुरुलघुमव्वावाहं क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं ।

स्वै प्रकाश स्वभावधर, ज्यूं निज स्वरूप संभारते ।
त्यूं ही त्रिकाल अनंत द्रव्य पर्याय, प्रगट निहारते ॥
यातैं उचित ही है जु तुमपद, दीपसों पूजा करूं ।
इक सहस अरु चौवीस गुण गण, भावयुत मनमें धरूं ॥ ६ ॥

ओं ह्रीं श्री सिद्धपरमेष्ठिने चतुर्विंशत्यधिकैकसहस्र १०२४ गुणसंयुक्ताय श्रीसमत्त-णाण दंसणवीर्य सुहमत्तहेव अवग्गहणं अगुरुलघुमव्वावाहं मोहांधकारविनाशनाय दीपं

वर ध्यान अगनि जराय वसुविधि, ऊर्द्धगमन स्वभावतें ।
राजै अचल शिव थान नित, तिह धर्मद्रव्य अभावतें ॥

यातैं उचित ही है जु तुमपद, धूपसों पूजा करूं।
इक सहस अरु चौबीस गुणगण, भावयुत मनमें धरूं॥ ७॥

ओं ह्रीं श्री सिद्धपरमेष्ठिने चतुर्विंशत्यधिकैकसहस्र १०२४ गुणसंयुक्ताय श्रीसम्यक्त्तणाण दंसणवीर्य सुहमत्तहेंव अवग्गहण अगुरुलघुमव्वावाहं अष्टकर्मदहनाय धूपं।

सर्वोत्कृष्ट सु पुण्य फल, तीर्थेश पद पायो महा।
तीर्थेश पदको स्वरुचिधर, अव्यय अमर शिवफल लहा॥
यातैं उचित ही है जु तुम पद, फलनसों पूजा करूं।
इक सहस अरु चौबीस गुणगण, भावयुत मनमें धरूं॥ ८॥

ओं ह्रीं श्री सिद्धपरमेष्ठिने चतुर्विंशत्यधिकैकसहस्र १०२४ गुणसंयुक्ताय श्रीसम्यक्त्तणाण दंसणवीर्य सुहमत्तहेंव अवग्गहणं अगुरुलघुमव्वावाहं मोक्षफलप्राप्तये फलं।

अष्टांग मूल सु विधि हरो, निज अष्ट गुण पायो सही।
अष्टार्द्ध गति संसार मेटि सु अचल ह्वै अष्टम मही॥
यातैं उचित ही है जु तुमपद, अर्घसों पूजा करूं।

इक सहस अरु चौवीस गुण गण, भावयुत मनमें धरूं ॥ ६ ॥

ओं ह्रीं श्री सिद्धपरमेष्ठिने चतुर्विंशत्यधिकैकसहस्र१०२४गुणसंयुक्ताय श्रीसमत्त-णाणदंसणवीर्य सुहमत्तहेव अवग्गहणं अगुरुलघुमव्वावाहं अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घं ।

गीता छन्द ।

निर्मल सलिल शुभ वास चंदन, धवल अक्षत युत अनी ।
शुभ पुष्प मधुकर नित रमें, चरु प्रचुर स्वाद सु विधि घनी ॥
वर दीपमाल उजाल धूपायन रसायन फल भलै ।
करि अर्घ सिद्ध समूह पूजत, कर्मदल सब दलमलै ॥
ते कर्मवर्त नशाय युगपति ज्ञान निर्मल रूप है ।
दुख जन्म टार अपार गुण सूक्षम सरूप अनूप है ॥
कर्माष्ट विन त्रैलोक्य पूज्य अछेद शिवकमलापती ।
मुनि ध्येय सेय अभेय चाहूं गुण गेह द्यो हम शुभ मती ॥ पूर्णार्घम् ॥

अथ १०२४ नामगुणसहित अर्घं ।

दोहा—इन्द्रिय विषय कषाय हैं, अन्तर शत्रु महान ।
तिनको जीतत जिन भये, नमूं सिद्ध भगवान । १ ।

ओं ह्रीं जिनाय नमो अर्घं ।

रागादिक जीते सु जिन, तिनमें तुम परधान ।
तातें नाम जिनेन्द्र हैं, नमूं सदा धरि ध्यान । २ ।

ओं ह्रीं जिनेन्द्राय नमो अर्घं ।

रागादिक लवलेश विन, शुद्ध निरंजन देव ।
पूरण जिनपद तुम विषैं, राजत हो स्वयमेव । ३ ।

ओं ह्रीं जिनपूर्णकाय नमः अर्घं ।

बाह्य शत्रु उपचरितको, जीतत जिन नहीं होय ।
अन्तर शत्रु प्रबल जये, उत्तम जिन है सोय । ४ ।

ओं ह्रीं जिनोत्तमाय नमः अर्घं ।

इन्द्रादिक पूजत चरन, सेवत हैं तिहुं काल।
गणधरादि श्रुत केवली, जिन आज्ञा निज भाल। ५।

ओं ह्रीं जिनराज्ञे नमः अर्घं।

गणधरादि सत पुरुष जे, वीतराग निरग्रन्थ।
तुमको सेवत जिन भये, साधत हैं शिवपंथ। ६।

ओं ह्रीं जिनाधिपाय नमः अर्घं।

एक देश जिन सर्व मुनि, सर्व भाव अरहंत।
द्रव्यभाव सर्वातमा, नमूं सिद्ध भगवंत। ७।

ओं ह्रीं जिनाधीशाय नमो अर्घं।

गणधरादि सेवत चरन, शुद्धातम लवलाय।
तीन लोक स्वामी भये, नमूं सिद्ध अधिकाय। ८।

ओं ह्रीं जिनस्वामिने नमो अर्घं।

नमत सुरासुर जिन चरन, तीन काल धरि ध्यान।

सिद्ध जिनेश्वर मैं नमूं, पाऊँ शिवसुख थान। ९।

ओं ह्रीं जिनेश्वराय नमो अर्घं।

तीन लोक तारण तरण, तीन लोक विख्यात।
सिद्ध महा जिननाथ हैं, सेवत पाप नशात। १०।

ओं ह्रीं जिननाथाय नमो अर्घं।

एकदेश श्रावक तथा, सर्वदेश मुनिराज।
नितप्रति रक्षक हो महा, सिद्ध सु पुण्य समाज। ११।

ॐ ह्रीं जिनपतये नमो अर्घं।

त्रिभुवन शिखाशिरोमणी, राजत सिद्ध अनन्त।
शिवमारग परसिद्ध कर, नमत भवोदधि अन्त। १२।

ॐ ह्रीं जिनप्रभवे नमः अर्घं।

जिन आज्ञा त्रिभुवनविषैं, वरते सदा अखंड।
मिथ्यामति दुरपक्षको, देत नीति सों दंड। १३।

ओं ह्रीं जिनेश्वराय नमः अर्घं ।

तीन लोक परिपूर्ण है, लोकालोक प्रकाश ।
राजत है विस्तीर्ण जिन, नमूं हरो भववास ॥ १४ ॥

ॐ ह्रीं जिनविभवे नमः अर्घं ।

आत्मज्ञ जिन नमत हैं शुद्धातमके हेत ।
स्वामी हो तिहुं लोकके, नमूं वसे शिवखेत । १५ ।

ओं ह्रीं जिनभर्त्रे नमः अर्घं ।

मिथ्यामतिको नाश करि, तत्त्वज्ञान परकाश ।
दीप्ति रूप रविसम सदा, करो सदा उर वास ॥ १६ ॥

ओं ह्रीं तत्त्वप्रकाशाय(श्रीजिनरवये) नमः अर्घं ।

कर्म शत्रु जीते सु जिन, तिनके स्वामी सार ॥
धर्म मार्ग प्रगटात है, शुद्ध सुलभ सुखकार ॥ १७ ॥

ओं ह्रीं जिनकर्मजिते नमः अर्घं ।

अमृत सम निज दृष्टिसों, यथाख्यात आचार।
तिन सबके स्वामी नमूं, पायो शिवपद सार ॥ १८ ॥

ओं ह्रीं जिनेशाय नमो अर्घं।

समोशरण आदिक बिभव, तिसके तुम परधान।
सुद्धातम शिवपद लहो, नमूं कर्मकी हान ॥ १९ ॥

ओं ह्रीं जिननायकाय नमः अर्घं।

सूरज सम तिहुं लोकमें, मिथ्या तिमिर निवार।
सहज दिखायो मोक्षमग, मैं बंदूं हित धार ॥ २० ॥

ओं ह्रीं जिननेत्रे नमः अर्घं।

जन्म मरण दुख जीति कर, जिन जिन नाम धराय।
नमूं सिद्ध परमातमा, भवदुख सहज नसाय ॥ २१ ॥

ओं ह्रीं जिनजंत्रे नमः अर्घं।

अचल अबाधित पद लहो, निज स्वभाव दिढ भाय।

नमूं सिद्ध कर जोरि कर, भाव सहित उर लाय ॥ २२ ॥

ओं ह्रीं जिनपरिदृढ़ाय नमः अर्घं ।

सर्व-व्यापी परमातमा, सर्व पूज्य विख्यात ।

श्री जिनदेव नमूं त्रिविध, सर्व पाप नशि जात ॥ २३ ॥

ओं ह्रीं जिनदेवाय नमो अर्घं ।

श्री जिनेश जिनराज हो, निज स्वभाव अनिवार ।

पर निमित्त विनशे सकल, बन्दूं शिवसुखकार ॥ २४ ॥

ओं ह्रीं जिनेशाय नमो अर्घं ।

परम धर्म दातार हो तीन लोक सुखदाय ।

तीन लोक पालक महा, मैं बन्दूं शिवराय ॥ २५ ॥

ओं ह्रीं जिनपालकाय नमः अर्घं ।

गणधरादि सेवत महा, तुम आज्ञा शिर धार ।

अधिक अधिक जिनपद लहो, नमूं करो भवपार । २६ ।

ओं ह्रीं जिनअधिराजाय नमो अर्घं ।

परम धर्म उपदेश करि, प्रगटायो शिवराय ।
श्री जिन निज आनन्द विषैं, वर्तैं बन्दूं ताय । २७ ।

ओं ह्रीं जिनशासनेशाय नमः अर्घ ।

पूरण पद पावत निपुण, सब देवनके देव ।
मैं पूजूं नित भावसों, पाऊँ शिव स्वयमेव । २८ ।

ओं ह्रीं जिनदेवाधिदेवाय नमः अर्घं ।

तीन लोक विख्यात हैं, तारण तरण जिहाज ।
तुम सम देव न और हैं, तुम सबके शिरताज । २९ ।

ॐ ह्रीं जिन अद्वितीयाय नमः अर्घ ।

तीन लोक पूजत चरन, भाव सहित शिर नाय ।
इन्द्रादिक थुति करि थकित, मैं बन्दूं तिस पाय । ३० ।

ॐ ह्रीं जिनाधिनाथाय नमः अर्घं ।

तुम समान नहीं देव है, भविजन तारन हेत।
चरणाम्बुज सेवत सुभग, पावे शिवसुख खेत। ३१।

ॐ ह्रीं जिनेन्द्रविध्वंधसेये नमः अर्घं।

भवाताप करि तप्त हैं, तिनकी विपत्ति निवार।
धर्मामृत कर पोखियो, वरते शशि उनहार। ३२।

ॐ ह्रीं जिनचन्द्राय नमः अर्घं।

मिथ्यातम करि अन्ध थे, तीन लोकके जीव।
तत्त्व मार्ग प्रगटाइयो, रवि सम दीप्त अतीव। ३३।

ॐ ह्रीं जिनादित्याय नमः अर्घं।

विन कारण तारणतरण, दीप्त रूप भगवान।
इन्द्रादिक पूजत चरण, करत कर्मकी हान। ३४।

ॐ ह्रीं जिनदीप्तरूपाय नमः अर्घ।

जैसे कुञ्जर चक्रके, जीते दलको साज।

चार संघ नायक प्रभु, वन्दूं सिद्ध समाज । ३५ ।

ओं ह्रीं जिनकुञ्जराय नमः अर्घं ।

दीप्त रूप तिहुं लोकमें, है प्रचण्ड परताप ।
भक्तनको नित देत हैं, भोगैं शिवसुख आप । ३६ ।

ओं ह्रीं जिनार्काय नमः अर्घं ।

रत्नत्रय मग साधकर, सिद्ध भये भगवान ।
पूरण निजसुख धरत हैं, निजमें निज परिणाम । ३७ ।

ओं ह्रीं जिनधौर्याय नमः अर्घं ।

तीन लोकके नाथ हो, ज्यूं तारागण सूर्य ।
शिव सुख पायो परम पद, वन्दौं श्री जिन धूर्य्य । ३८ ।

ओं ह्रीं जिनधूर्याय नमः अर्घं ।

पराधीन विन परम पद, तुम विन लहै न और ।
उत्तमातमा मैं नमूं, तीन लोक शिरमौर । ३९ ।

ओं ह्रीं जिनोत्तमाय नमः अर्घ।

जहां न दुखको लेश है, तहां न परसों कार।
तुम विन कहूं न श्रेष्ठता, तीन लोक दुख टार। ४०।

ओं ह्रीं त्रिलोकदुःखनिवारणाय नमः अर्घं।

पूर्ण रूप निज लक्ष्मी, पाई श्री जिनराज।
परम श्रेय परमातमा, वन्दूं शिवसुख साज। ४१।

ओं ह्रीं जिनवराय (जिनवर्याय) नमः अर्घं।

निरभय हो निर आश्रय, निरसंगी निरबंध।
निज साधन साधक सुगुन, परसों नहिं सम्बंध। ४२।

ॐ ह्रीं जिननिःसंगाय नमः अर्घं।

अन्तराय विधि नाशकै, निजानन्द भयो प्राप्त।
संत नमैं करजोर युग, भव-दुख करो समाप्त॥ ४३॥

ओं ह्रीं जिनउद्धाराय नमः अर्घं।

शिवमारगमें धरत हो, जग मारगतें काढ़।

धर्मधुरन्धर मैं नमूं, पाऊं भव वन बाढ़ ॥
ॐ ह्रीं जिनवृषभाय नमः अर्घं । ४४ ।

धर्मनाथ धर्मेश हो, धर्म तीर्थ करतार ।
रहो सु थिर निज धर्म में, मैं वन्दूं सुखकार ॥
ॐ ह्रीं जिनवृषभदेवाय नमः अर्घं । ४५ ।

जगत जीव विधि धूलि सों, लिप्त न लहै प्रभाव ।
रत्नराशि सम तुम दिपो, निर्मल सहज सुभाव ॥
ॐ ह्रीं जिनरत्नाय नमः अर्घं । ४६ ।

तीन लोकके शिखर पर, राजत हो विख्यात ।
तुम सम और न जगतमें, बड़ा कोई दिखलात ॥
ओं ह्रीं जिनौरसाय नमः अर्घं । ४७ ।

इन्द्रिय मन व्यापार बहु, मोहशत्रु को जीत ।
लहो जिनेश्वर सिद्धपद, तीन लोकके मीत ॥
ओं ह्रीं जिनेशाय नमः अर्घं । ४८ ।

चारि घातिया कर्मको, नाश कियो जिनराय।
घाति अघाति विनाश जिन, अग्र भये सुखदाय॥
ओं ह्रीं जिनाग्राय नमः अर्घं। ४९।

निज पौरुषकर साधियो, निज पुरुषारथ सार।
अन्य सहाय नहीं चहैं, सिद्ध सु वीर्य अपार॥
ओं ह्रीं जिनशार्दूलाय नमः अर्घं। ५०।

इन्द्रादिक नित ध्यावते, तुम सम और न कोय।
तीन लोक चूड़ामणी, नमूं सिद्ध सुख होय॥
ओं ह्रीं (त्रिलोकचूडामणये) जिनपुंगवाय नमः अर्घं। ५१।

निजानंद पदको लहो, अविरोधी मल नास।
समकित विन तिहुं लोकमें, और नहीं सुखरास।
ओं ह्रीं जिनप्रवेकाय नमः अर्घं। ५२।

जगत शत्रुको जीतिके, कल्पित जिन कहलाय।

मोहशत्रु जीते सु जिन, उत्तम सिद्ध सुखाय ॥
ओं ह्रीं जिनहंसाय नमः अर्घं । ५३ ।

द्रव्य भाव दोनों नहीं, उत्तम शिवसुख लीन ।
मन वच तन करि मैं नमूं, निज सम भवि जन कीन ॥
ओं ह्रीं जिनोत्तमसुखधारकाय नमः अर्घं । ५४ ।

चार संघ नायक प्रभू, शिवमग सुलभ कराय ।
तारण तरण जहाज हो, मैं बन्दूं शिवराय ॥
ओं ह्रीं जिननायकाय नमः अर्घं । ५५ ।

स्वयं बुद्ध शिवमार्गमें, आप चले अनिवार ।
भविजन अग्रेश्वर भये बन्दूं भक्ति विचार ॥
ओं ह्रीं जिनाग्रण्यै नमः अर्घं । ५६ ।

शिव मारगके चिह्न हो, सुखसागरकी पाल ।
शिवपुरके तुम हो धनी, धर्म नगर प्रतिपाल ॥ ५७ ॥
ओं ह्रीं जिनग्रामण्यै नमः अर्घं ।

तुम सम और न जगतमें, उत्तम श्रेष्ठ कहाय।
आप तिरै भवि तार दे, बन्दूं तिनके पाय ॥ ५८ ॥
ओं ह्रीं जिनसत्तमाय नमः अर्घं ।

स्वपर कल्याणक हो प्रभू, पंचकल्याणक ईश।
श्रीपति शिव-शंकर नमूं, चरणाम्बुज धरि शीश ॥ ५९ ॥
ओं ह्रीं जिनप्रभवाय नमः अर्घं ।

मोह महाबल दलमलो, विजय लक्ष्मीनाथ।
परम ज्योति शिवपद लहो, चरण नमूं धरि माथ ॥ ६० ॥
ओं ह्रीं परमजिनाय नमः अर्घं ।

चहुं गति दुःख विनाशिया, पूरा निज पुरुषार्थ।
नमूं सिद्ध कर जोरिकैं, पाऊं मैं सर्वार्थ ॥ ६१ ॥
ओं ह्रीं जिनचतुर्गतिदुःखान्तकाय नमः अर्घं ।

जीते कर्म निकृष्टको, श्रेष्ठ भये जिनदेव।
तुम सम और न जगतमें, वन्दूं मैं तिन भेव ॥ ६२ ॥

ओं ह्रीं जिनश्रेष्ठाय नमः अर्घं ।

आप मोक्ष मग साधियो, औरन सुलभ कराय ।
आदि पुरुष तुम जगतमें, धर्म रीत वरताय ॥ ६३ ॥

ओं ह्रीं जिनज्येष्ठाय नमः अर्घं ।

मुख्य पुरुषारथ मोक्ष है, साधत सुखिया होय ।
मैं बन्दूं तिन भक्तिकर, सिद्ध कहावे सोय ॥ ६४ ॥

ओं ह्रीं जिनमुखाय नमः अर्घं ।

सुरपति सम अग्रेश हो, निज पर भासनहार ।
आप तिरे भवि तारियो, बन्दूं योग संभार ॥ ६५ ॥

ओं ह्रीं जिनाग्राय नमः अर्घं ।

रागादिक रिपु जीत तुम, श्री जिन नाम धराय ।
सिद्ध भये कर जोरिके, बन्दूं तिनके पाय ॥ ६६ ॥

ओं ह्रीं श्रीजिनाय नमः अर्घं ।

विषय कषाय न लेश है, दृष्टि ज्ञान परिपूर्ण ।

उत्तम जिन शिवपद लियो, नमत कर्मको चूर्ण ॥ ६७ ॥
ओं ह्रीं जिनउत्तमाय नमः अर्घं ।

चहुं प्रकारके देवता, नित्य नमावत शीश ।
तुम देवनके देव हो, नमूं सिद्ध जगदीश ॥ ६८ ॥
ओं ह्रीं वृन्दारकाय नमः अर्घं ।

जो निज सुख होने न दे, साँचा रिपु है सोय ।
ऐसे रिपुको जीतके, नमूं सिद्ध जो होय ॥ ६९ ॥
ओं ह्रीं अरिजिताय नमः अर्घं ।

अविनाशी अविकार हो, अचलरूप विख्यात ।
जामें विघ्न न लेश है, नमूं सिद्ध कहलात ॥ ७० ॥
ओं ह्रीं निर्विघ्नशमरतये नमः अर्घं ।

रागदोष मद मोह अरु, ज्ञानावरण नशाय ।
शुद्ध निरंजन सिद्ध हैं, बन्दू तिनके पाय ॥ ७१ ॥
ओं ह्रीं विरजसे नमः अर्घ ।

मत्सर भाव दुखी करैं, निजानन्दको घात ।
सो तुम नाशो छिनकमें, शम सुखिया कहलात ॥७२॥
ओं ह्रीं निरस्तमत्सराय नमः अर्घं ।

परकृत भाव न लेश है, भेद कह्यो नहि जाय ।
वचन अगोचर शुद्ध हैं, सिद्ध महा सुखदाय ॥ ७३ ॥
ओं ह्रीं शुद्धाय नमः अर्घं ।

रागादिक मल विन दिपो, शुद्धं सुवर्ण समान ।
शुद्ध निरंजन पद लियो, नमूं चरण धरि ध्यान ॥ ७४ ॥
ओं ह्रीं निरंजनाय नमः अर्घं ।

द्रव्य भाव दो विधि करम, नाश भये शिवराय ।
वन्दूं मन वच काय कर, भविजनको सुखदाय ॥ ७५ ॥
ओं ह्रीं कर्मघ्ने नमः अर्घं ।

ज्ञानावर्णी आदि ले, चार घातिया कर्म ।

तिनको अन्त सुपाइके, लियो मोक्षपद पर्म ॥ ७६ ॥
ॐ ह्रीं घातिकर्मान्तकाय नमः अर्घं ।

ज्ञानावरणी पटल विन, ज्ञान दीप्त परकाश ।
शुद्ध सिद्ध परमातमा, वंदित भवदुख नाश ॥ ७७ ॥
ओं ह्रीं जिनदीप्तये नमः अर्घं ।

कर्म रुलावे आतमा, रागादिक उपजाय ।
तिनको मर्म विनाशकैं, सिद्ध-भये सुखदाय ॥ ७८ ॥
ॐ ह्रीं कर्ममर्मभिदे नमः अर्घं ।

पाप कलाप न लेश है, शुद्धाशुद्ध विख्यात ।
मुनि मन मोहन रूप है, नमूं जोरि जुग हाथ ॥ ७९ ॥
ओं ह्रीं अनुदयाय नमः अर्घं ।

राग नहीं थुतिकारसों, निंदकसों नहीं द्वेष ।
सम सुखिया आनन्द घन, बन्दूं सिद्ध हमेश ॥ ८० ॥

ॐ ह्रीं वीतरागाय नमः अर्घं ।

क्षुधा वेदनी नाशकर, स्वै सुख भुंजनहार ।
निजानन्द सन्तुष्ट हैं, बन्दूं भाव विचार ॥ ८१ ॥

ओं ह्रीं (निजानंदाय) अक्षुधाय नमः अर्घं ।

एक दृष्टि सबको लखैं, इष्ट अनिष्ट न कोय ।
द्वेष अंश व्यापै नहीं, सिद्ध कहावत सोय ॥ ८२ ॥

ओं ह्रीं अद्वेषाय नमः अर्घं ।

भवसागरके तीर हो, शिवपुरके हैं राह ।
मिथ्यातमहर सूर्य हो, मैं बन्दूं हूं ताहि ॥ ८३ ॥

ॐ ह्रीं (तमोहराय) निर्मोहाय नमः अर्घं ।

जग जनमें यह दोष है, सुखी दुखी बहु भेव ।
ते सब दोष निवारियो, उत्तम हैं स्वयमेव ॥ ८४ ॥

ओं ह्रीं निर्वेदाय नमः अर्घं ।

जनम मरण यह रोग है, तिनको कठिन इलाज।
परमौषध यह रोगकी, वन्दूं मेटन काज ॥ ८५ ॥
ॐ ह्रीं अगदाय नमः अर्घं।

राग कहो ममता कहो, मोह कर्म सो होय।
सो जिन मोह विनाशियो, नमूं सिद्ध है सोय ॥ ८६ ॥
ओं ह्रीं निर्ममत्वाय नमः अर्घं।

तृष्णा दुखको मूल है, सुखी भये तिस नाश।
मन वच तन करि मैं नमूं, है आनन्द विलास ॥ ८७ ॥
ओं ह्रीं वीततृष्णाय नमः अर्घं।

अन्तर बाह्य निरइच्छ है, एकी रूप अनूप।
निष्पृह परमेश्वर नमूं, निजानन्द शिवभूप ॥ ८८ ॥
ओं ह्रीं असंगाय नमः अर्घं।

क्षायिक समकितको धरैं, निर्भय थिरता रूप।

निजानन्दसों नहिं चिगें, बन्दूं मैं शिवभूप ॥ ८९ ॥

ओं ह्रीं निर्भयाय नमः अर्घं ।

स्वप्न प्रमादी जीवके, अल्प-शक्ति सो होय ।
निज बल अतुल महा धरैं, सिद्ध कहावैं सोय ॥ ९० ॥

ओं ह्रीं अस्वप्नाय नमः अर्घं ।

दर्श ज्ञान सुख भोगतैं, खेद न रंचक होय ।
सो अनन्त बलके धनी, सिद्ध नमामी सोय ॥ ९१ ॥

ओं ह्रीं निःश्रमाय नमः अर्घं ।

युगपत सब प्रापत भये, जानत सब है भेव ।
संशय विन आश्चर्य नहीं, नमूं सिद्ध स्वयमेव ॥ ९२ ॥

ओं ह्रीं निःसंशयाय (वीतविस्मयाय) नमो अर्घं ।

सिद्ध सनातन कालसे, जगमें हैं परसिद्ध ।
तथा जन्म फिर नहीं धरैं, नमूं जोरि कर सिद्ध ॥ ९३ ॥

ओं ह्रीं अजन्मिने नमः अर्घं ।

भ्रम विन ज्ञान प्रकाशमें, भासै जीव अजीव ।
संशय विन निश्चल सुखी, बन्दूं सिद्ध सदीव ॥ १४ ॥

ओं ह्रीं निश्चलाय नमो अर्घं ।

तुम पूरण परमातमा, सदा रहो इक सार ।
जरा न व्यापै तुम विषैं, नमूं सिद्ध अविकार ॥ १५ ॥

ओं ह्रीं निर्जराय नमः अर्घं ।

तुम पूरण परमातमा, अन्त कभी नहीं होय ।
मरण रहित बन्दूं सदा, देउ अमर पद सोय ॥ १६ ॥

ओं ह्रीं अमराय नमः अर्घ ।

निजानन्दके भोगमें, कभी न आरत आय ।
यातें तुम अरतीत हो, बन्दूं सिद्ध सुहाय ॥ १७ ॥

ॐ ह्रीं अरतीताय नमः अर्घं ।

होत नहीं सोच न कभूं, ज्ञान धरै परतक्ष।
नमूं सिद्ध परमातमा, पाऊं ज्ञान अलक्ष ॥ ९८ ॥
ओं ह्रीं निश्चिताय नमः अर्घं।

जानत है सब ज्ञेयको, पर ज्ञेयनतैं भिन्न।
यातैं निर्विषयी कहो, लेश न भोगैं अन्य ॥ ९९ ॥
ॐ ह्रीं निर्विषयाय नमो अर्घं।

अहंकार आदिक त्रिषट्, तुम पद निवसैं नाहिं।
सिद्ध भये परमातमा, मैं बन्दूं हूं ताहिं ॥ १०० ॥
ॐ ह्रीं त्रिषड्जिते नमः अर्घं।

जेते गुण परजाय हैं, द्रव्य अनन्त सुकाल।
तिनको तुम जानो प्रभू, बन्दूं मैं नमि भाल ॥ १०१ ॥
ओं ह्रीं सर्वज्ञाय नमः अर्घं।

ज्ञान आरसी तुम विषैं, झलके ज्ञेय अनन्त।

सिद्ध भये तिनको नमें, तीनों काल सु सन्त ॥ १०२ ॥
ॐ ह्रीं सर्वविदे नमः अर्घं ।

चक्षु अचक्षु न भेद हैं, समदर्शी भगवान ।
नमूं सिद्ध परमातमा, तीनों जोग प्रधान ॥ १०३ ॥
ॐ ह्रीं सर्वदर्शिने नमः अर्घं ।

देखन कछु बाकी नहीं, तीनों काल मझार ।
सर्वालोकी सिद्ध हैं, नमूं त्रियोग समार ॥ १०४ ॥
ओं ह्रीं सर्वावलोकाय नमः अर्घं ।

तुम सम पराक्रम और सब, जगवासीमें नाहिं ।
निज बल शिवपद साधियो, मैं बन्दूं हूं ताहि ॥ १०५ ॥
ॐ ह्रीं अनन्तविक्रमाय नमः अर्घं ।

निजसुख भोगत नहीं चिगे, वीर्य अनन्त धराय ।
तुम अनन्त बलके धनी, बन्दूं मन वच काय ॥१०६॥

ओं ह्रीं अनन्तवीर्याय नमः अर्घं ।

सुखाभास जग जीवके, पर निमित्तसैं होय ।
निज आश्रय पूरण सुखी, सिद्ध कहावै सोय ॥ १०७ ॥

ओं ह्रीं अनन्तसुखाय नमः अर्घं ।

निज सुखमें सुख होत है, पर सुखमें सुख नाहिं ।
सो तुम निज सुखके धनी, मैं बन्दूं हूं ताहि ॥ १०८ ॥

ओं ह्रीं अनन्तसौख्याय नमः अर्घं ।

तीन लोक तिहुं कालके, गुण पर्यय कछु नाहिं ।
जाको तुम जानों नहीं, ज्ञान भानुके माहि ॥ १०९ ॥

ओं ह्रीं विश्वज्ञानाय नमः अर्घं ।

द्रव्य तथा गुण पर्यको, देखै एकीवार ।
विश्व दर्श तुम नाम है, बन्दों भक्ति विचार ॥ ११० ॥

ओं ह्रीं विश्वदर्शिने नमो अर्घं ।

संपूरण अवलोकतें, दर्शन धरो अपार।
नमूं सिद्ध कर जोरिके, करो जगतसे पार ॥ १११ ॥

ओं ह्रीं अखिलार्थदर्शिने नमः अर्घं।

इन्द्रिय ज्ञान परोक्ष है, क्रमवर्ती कहलाय।
विन इन्द्रिय प्रत्यक्ष है, धरो ज्ञान सुखदाय ॥ ११२ ॥

ओं ह्रीं निष्पक्षदर्शनाय नमः अर्घं।

विश्व मांहि तुम अर्थ सब, देखो एकीबार।
विश्व चक्षु तुम नाम है, बन्दूं भक्ति विचार ॥ ११३ ॥

ओं ह्रीं विश्वचक्षुपे नमः अर्घं।

तीन लोकके अर्थ जे, बाकी रहो न शेष।
युगपत तुम सब जानियो, गुण पर्याय विशेष ॥ ११४ ॥

ॐ ह्रीं अशेषविदे नमः अर्घं।

पराधीन अरु विघ्न विन, है सांचा आनन्द।

सो शिवगतिमें तुम लियो, मैं बन्दूं सुखकंद ॥ ११५ ॥
ओं ह्रीं आनन्दाय नमः अर्घं ।

सत प्रशंसया नित्य है, या सद्भवा सरूप ।
सो तुममें आनन्द है, बन्दत हूं शिवभूप ॥ ११६ ॥
ओं ह्रीं सदानन्दाय नमः अर्घं ।

उदय महा सत् रूप है, जामें असत न होय ।
अन्तराय अरु विघन विन, सत्य उदै है सोय ॥ ११७ ॥
ओं ह्रीं सदोदयाय नमः अर्घं ।

नित्यानन्द महासुखी, हीनाधिक नहीं होय ।
नहीं गत्यन्तर रूप हो, शिवगतिमें है सोय ॥ ११८ ॥
ओं ह्रीं नित्यानंदाय नमः अर्घं ।

जासों परे न और सुख, अहमिन्द्रनमें नाहिं ।
सोऽहं श्रेष्ठ सुख भोगते, बन्दूं हूं मैं ताहि ॥ ११९ ॥

ओं ह्रीं परमानंदाय नमो अर्घं ।

पूरण सुखकी हद धरैं, सो महान आनन्द।
सो तुम पायो शिव-धनी, बन्दूं पद अरविंद ॥ १२० ॥

ओं ह्रीं महानंदाय नमो अर्घं ।

उत्तम सुख स्वाधीन है, परम नाम कहलाय।
चारों गतिमें सो नहीं, तुम पायो सुखदाय ॥ १२१ ॥

ओं ह्रीं परमानंदाय नमो अर्घं ।

जाम विघन न लश है, उदय तेज विज्ञान।
जाको हम जानत नहीं, सुलभ रूप विधि दान ॥ १२२ ॥

ॐ ह्रीं परोदगाय नमः अर्घं ।

परम शक्ति परमातमा, पर सहाय विन आप।
स्वयं वीर्य आनन्दके, नमत कटैं सब पाप ॥ १२३ ॥

ओं ह्रीं परमोजसे नमः अर्घं ।

महातेजके पुंज हो, अविनाशी अविकार।
झलकत ज्ञानाकार सब, दर्पण बल आधार ॥ १२४ ॥

ॐ ह्रीं परमतेजसे नमः अर्घं ।

परम धाम उतकृष्ट पद, मोक्ष नाम कहलाय ।
जासों फिर आवत नहीं, जन्म मरण नहीं पाय ॥ १२५ ॥

ॐ ह्रीं परमधाम्ने नमः अर्घं ।

जग गुरु सिद्ध परमातमा, जगत सूर्य शिव नाम ।
परम हंस योगीश हैं, लियो मोक्ष अभिराम ॥ १२६ ॥

ॐ ह्रीं परमहंसाय नमः अर्घं ।

दिव्यज्योति स्वज्ञानमें, तीन लोक प्रतिभास ।
शंका विन विश्वास कर, निजपर कियो प्रकाश ॥ १२७ ॥

ओं ह्रीं प्रत्यक्षज्ञात्रे नमः अर्घं ।

निज विज्ञान सु ज्योतिम, संशय आदिक नाहिं।
सो तुम सहज प्रकाशियो, मैं बन्दूं हूं ताहि ॥ १२८ ॥
ओं ह्रीं ज्योतिपे नमो अर्घं ।

शुद्ध बुद्ध परमातमा, परम ब्रह्म कहलाय।
सर्व लोक उतकृष्ट पद, पायो बन्दूं पाय ॥ १२९ ॥
ॐ ह्रीं परब्रह्मणे नमो अर्घं ।

चार ज्ञान नहीं जासमें, शुद्ध सुरूप अनूप।
परको नाहिं प्रवेश है, एकाकी शिवरूप। १३०।
ओं ह्रीं परमरहसे नमः अर्घ।

निज गुण द्रव्य पर्यायमें, भिन्न भिन्न सब रूप।
एक क्षेत्र अवगाह करि, राजत हैं चिद्रूप। १३१।
ओं ह्रीं प्रत्यक्षात्मने नमो अर्घं ।

शुद्ध बुद्ध परमातमा, निज विज्ञान प्रकाश।

सो आतमके बोधतें, कियो कर्मको नाश । १३२ ।

ओं ह्रीं प्रबोधात्मने नमः अर्घं ।

कर्म मैलसे लिप्त हैं, जगति आत्म दिन रैन ।
कर्म नाश महापद लियो, वन्दूं हूं सुख देन । १३३ ।

ओं ह्रीं महात्मने नमः अर्घं ।

आतमको गुण ज्ञान है, यही यथारथ होय ।
ज्ञानानन्द ऐश्वर्यता, उदय भयो है सोय । १३४ ।

ओं ह्रीं आत्ममहोदयाय नमः अर्घं ।

दश ज्ञान सुख वीर्यको, पाय परम पद होय ।
सो परमातम तुम भये, नमूं जोर कर दोय । १३५ ।

ओं ह्रीं परमात्मने नम अर्घं ।

मोहकर्मके नाशतें, शान्ति भये सुखदेन ।
क्षोभ रहित पर शान्ति हो, शान्त नमूं सुख लेन । १३६ ।

ओं ह्रीं प्रशांतात्मने नमः अर्घं ।

पूरण पद तुम पाइयो, बातैं परे न कोय ।
तुम समान नहीं और हैं, वन्दूं हूं पद दोय । १३७ ।

ओं ह्रीं परमात्मने नमो अर्घं ।

पुद्गल कृत तन छारकैं, निज आतममें वास ।
स्वै प्रदेश ग्रहके विषैं, नित ही करत विलास । १३८ ।

ॐ ह्रीं आत्मनिकेताय नमः अर्घं ।

औरनको नित देत हैं, शिवसुख भोगें आप ।
परम इष्ट तुम हो सदा, निज सम करत मिलाप । १३९ ।

ओं ह्रीं परमेष्ठिने नमः अर्घं ।

मोक्ष लक्ष्मी नाथ हो, भक्तन प्रति नित देत ।
महा इष्ट कहलात हो, वन्दूं शिवसुख हेत । १४० ।

ओं ह्रीं महितात्मने नमः अर्घं ।

रागादिक मल नासिकै, श्रेष्ठ भये जगमांहि ।
सो उपासना करणको, तुम सम कोई नाहिं । १४१ ।

ओं ह्रीं श्रेष्ठात्मने नमो अर्घं ।

परमें ममत विनाशकै, स्व आतम थिर धार ।
पर विकल्प संकल्प विन, तिष्ठो सुख आधार । १४२ ।

ओं ह्रीं स्वात्मनिष्ठिताय नमो अर्घं ।

स्व आतममें मग्न हैं, स्व आतम लवलीन ।
परमें भ्रमण करैं नहीं, सन्त चरण शिर दीन । १४३ ।

ओं ह्रीं ब्रह्मनिष्ठाय नमो अर्घं ।

तीन लोकके नाथ हो, इन्द्रादिक कर पूज ।
तुम सम और महानता, नहिं धारत हैं दूज । १४४ ।

ओं ह्रीं महाजेष्ठाय नमो अर्घं ।

तीन लोक परसिद्ध हो, सिद्ध तुम्हारा नाम ।

सर्व सिद्धता ईश हो, पूरहु सबके काम । १४५ ।

ओं ह्रीं निरूढ़ात्मने नमः अर्घं ।

स्वै आतम थिरता धरैं, नहीं चलाचल होय ।

निश्चल परम सुभावमें, भये प्रकृतिको खोय । १४६ ।

ओं ह्रीं द्रढ़ात्मने नमः अर्घं ।

क्षयोपशम नानाविधैं, क्षायक एक प्रकार ।

सो तुममें नहीं और सौ, बन्दूं भाव लगार । १४७ ।

ॐ ह्रीं एकविद्याय नमः अर्घं ।

कर्म पटलके नाशतैं, निर्मल ज्ञान उदार ।

तुम महान विद्या धरैं, बन्दूं योग संभार । १४८ ।

ओं ह्रीं महाविद्याय नमो अर्घं ।

परम पूज्य परमेश पद, पूरण ब्रह्म कहाय ।

पायो सहज महान पद, बन्दूं तिनके पाय । १४९ ।

ॐ ह्रीं महापदेश्वराय नमो अर्घं ।

पंच परम पद पाईयो, ब्रह्म नाम है एक ।
पूजूं मन वच काय करि, नाशै विघन अनेक । १५० ।

ओं ह्रीं पंचब्रह्मणे नमः अर्घं ।

निज विभूति सर्वस्व तुम, पायो सहज सुभाव ।
हीनाधिक बिन बिलसते, बन्दूं ध्यान लगाय। १५१।

ओं ह्रीं सर्वस्वाय नमो अर्घं ।

पूरन पंडित ईश हो, बुद्धि धाम अभिराम ।
बन्दूं मन वच काय करि, पाऊं मोक्ष सुधाम ॥ १५२ ॥

ओं ह्रीं सर्वविदेश्वराय नमः अघ्र ।

मोह कर्म चकचूरतें, स्वाभाविक शुभ चाल ।
शुभ परिणाम धरैं सदा, बंदूं नित नमि भाल ॥ १५३ ॥

ओं ह्रीं शुचये नमो अर्घं ।

ज्ञान दर्श, आवर्ण विन, दीपो नंताऽनंत ।
सकल ज्ञेय प्रतिभास हैं, तुम्हें नमैं नित संत ॥ १५४ ॥

ओं ह्रीं अनन्तदीप्तये नमो अर्घं ।

इक इक गुण प्रति छेदको, पार न पायो जाय ।
सो गुण रास अनंत हैं, बंदूं तिनके पाय । १५५ ।

ॐ ह्रीं अनन्तात्मने नमः अर्घं ।

अहमिंद्रनकी शक्ति जो, करो अनंती रास ।
सो तुम शक्ति अनंत गुण, करै अनंत प्रकाश । १५६ ।

ॐ ह्रीं अनन्तशक्तये नमः अर्घं ।

छायक दर्शन जोतिमें, निरावरण परकास ।
सो अनंत द्रग तुम धरौ, नमैं चरण नित दास । १५७ ।

ओं ह्रीं अनन्तदृशे नमः अर्घं ।

जाकी शक्ति अपार है, हेतु अहेतु असिद्ध ।

गणधरादि जानन नहीं, मैं वंदूं नित सिद्ध ॥ १५८ ।

ॐ ह्रीं अनंतसिद्धये नमः अर्घं ।

चेतन शक्ति अनंत है, निरावरण जो होय ।
सो तुम पायो सहज ही, कर्म पुञ्जको खोय । १५९ ।

ॐ ह्रीं अनंतचिदेशाय नमः अर्घं ।

जो सुख है निज आश्रये, सो सुख परमें नाहिं ।
निजानन्द रस लीन हैं, मैं बन्दूं हूं ताहि । १६० ।

ॐ ह्रीं अनन्तमुदे नमः अर्घं ।

जाकैं कर्म लिपै न फिर, दिपै सदा निरधार ।
सदा प्रकाशक सहित है, बन्दूं योग सम्हार । १६१ ।

ओं ह्रीं सदाप्रकाशाय नमो अर्घं ।

निजानन्दके माहि हैं, सर्व अर्थ परसिद्ध ।
सो तुम पायो सहज ही, नमत मिले नवनिद्ध । १६२ ।

ओं ह्री सर्वार्थसिद्धेभ्यो नमो अर्घं ।

अति सूक्षम जे अर्थ हैं, काय अकाय कहाय ।
साक्षात् सबको लखो, वन्दूं तिनके पांय । १६३ ।

ओं ह्रीं साक्षात्कारिणे नमः अर्घं ।

सकल गुणनमय द्रव्य हो, शुद्ध सुभाव प्रकाश ।
तुम समान नहीं दूसरो, वन्दत पूरे आश । १६४ ।

ओं ह्रीं समग्रर्द्धये नमः अर्घं ।

सर्व कर्मको छीन करि, जरी जेवरी सार ।
सो तुम धूलि उडाइयो, वन्दूं भक्ति विचार । १६५ ।

ॐ ह्रीं कर्मक्षीणाय नमः अर्घं ।

चहुं गत जगत कहात है, ताको करि विध्वंश ।
अमर अचल शिवपुर वसै, कर्म न राखो अंश । १६६ ।

ॐ ह्रीं जगद्विध्वंसिने नमः अर्घं ।

इन्द्री मन व्यापारमें, जाको नहिं अधिकार।
सो अलक्ष आतम प्रभू, होउ सुमति दातार। १६७।

ओं ह्रीं अलक्षात्मने नमः अर्घं।

नहीं चलाचल अचल हैं, नहीं भ्रमण थिर धार।
सो शिवपुरमें वसत हैं, बन्दूं भक्ति विचार। १६८।

ओं ह्रीं अचलस्थानाय नमः अर्घं।

पर कृत निमित्त बिगाड है, सोई दुविधा जान।
सो तुममें नहीं लेश है, निराबाध परमाण। १६९।

ओं ह्रीं निराबाधाय नमः अर्घं।

जैसे हो तुम आदिमें, सोई हो तुम अन्त।
एक भांति निवसैं सदा, वंदत हैं नित सन्त। १७०।

ॐ ह्रीं प्रतिज्ञानात्मने नमः अर्घं।

धर्मनाथ जगदीश हो, सुर मुनि मानैं आन।

मिथ्यामत नहीं चलत है, तुम आगे परमाण । १७१ ।

ओं ह्रीं धर्मचक्रिणे नमः अर्घं ।

ज्ञान शक्ति उतकृष्ट है, धर्म सर्व तिस माहिं ।
श्रेष्ठ ज्ञान तुम पुञ्ज हो, पर निमित्त कछु नाहिं । १७२ ।

ओं ह्रीं विदांवराय नमो अर्घं ।

निज अभावसे मुक्त हो, कहैं कुवादी लोग ।
भूतात्मा सो मुक्त हैं, सो तुम पायो जोग । १७३ ।

ॐ ह्रीं भूतात्मने नमो अर्घं ।

सहज सुभाव प्रकाशियो, पर निमित्त कछु नाहि ।
सो तुम पायो सुलभतें, स्व सुभावके मांहि ॥ १७४ ॥

ओं ह्रीं सहजज्योतिषे नमो अर्घं ।

विश्व नाम तिहुँ लोकमें, तिसमें करत प्रकाश ।
विश्वज्योति कहलात हैं, नशत मोह तम नाश ॥ १७५ ॥

ॐ ह्रीं विश्वज्योतिषे नमो अर्घं ।

फरश आदि पन इन्द्रियां, द्वार ज्ञान कछु नाहिं।
यातें अतिइन्द्रिय कहो, जिन-सिद्धांतके मांहि ॥ १७६ ॥

ओं ह्रीं अतींद्रियाय नमः अर्घं ।

एक ज्ञान असहाय हो, शुद्ध बुद्ध निर अंश।
केवल तुमको धर्म है, नमें तुम्हें नित संत ॥ १७७ ॥

ओं ह्रीं केवलाय नमः अर्घं ।

लौकिक जन या लोकमें, तुम सारूं गुण नाहिं।
केवल तुमहीमें वसै, मैं बन्दूं हूं ताहि ॥ १७८ ॥

ओं ह्रीं केवलअनलोकनाय नमः अर्घ ।

लोक अनंत कहो सही, तातें नन्तानन्त।
है अलोक अवलोकियो, तुम्हें नमें नित संत ॥ १७९ ॥

ओं ह्रीं लोकालोकअनलोकाय नमः अर्घं ।

ज्ञान द्वार निज शक्ति हो, फैलो लोकालोक।
भिन्न भिन्न सब जानियो, नमूं चरण दे धोक ॥ १८० ॥

ओं ह्रीं विवृताय नमः अर्घं ।

विन सहाय निज शक्ति हो, प्रगटो आपोआप ।
स्वयं बुद्ध ह्वै सिद्ध हैं, नमत नसै सब पाप ॥ १८१ ॥

ओं ह्रीं केवलाय नमः अर्घं ।

सूक्षम सुभग सुभावतें, मन इन्द्रि नहिं ज्ञात ।
वचन अगोचर गुण धरैं, नमूं चरन दिन रात ॥ १८२ ॥

ओं ह्रीं अव्यक्ताय नमः अर्घं ।

कर्म उदय दुख भोगवैं, सर्व जीव संसार ।
तिन सबको तुम ही शरण, देहो सुक्ख अपार ॥ १८३ ॥

ओं ह्रीं सर्वशरणाय नमः अर्घं ।

चिंतवनमें आवै नहीं, पार न पावे कोय ।
महा विभवके हो धनी, नमूं जोर कर दोय ॥ १८४ ॥

ओं ह्रीं अचिंत्यविभवाय नमः अर्घं ।

छहो कायके वासको, विश्व कहै सब लोक ।

तिनके थंभनहार हो, राज काजके जोग ॥ १८५ ॥

ओं ह्रीं विश्वभृते नमः अर्घं ।

घट घटमें राजो सदा, ज्ञान द्वार सब ठोर ।
विश्व रूप जीवात्म हो, तीन लोक सिरमोर ॥ १८६ ॥

ओं ह्रीं विश्वरूपात्मने नमः अर्घं ।

घट घटमें नितव्याप्त हो, ज्यों घट दीपक जोति ।
विश्वनाथ तुम नाम है, पूजत शिवसुख होत ॥ १८७ ॥

ॐ ह्रीं विश्वआत्मने नमः अर्घं ।

इन्द्रादिक जे विश्वपति, तुम पद पूजैं आन ।
यातें सुखिया हो सही, मैं पूजूं धरि ध्यान ॥ १८८ ॥

ओं ह्रीं विश्वतोमुखाय नमः अर्घं ।

ज्ञान द्वार सब जगतपें, व्यापि रहे भगवान ।
विश्वव्यापि मुनि कहत हैं, ज्यूं नभमें शशि भान ॥ १८९ ॥

ओं ह्रीं विश्वव्यापिने नमः अर्घं ।

निरावरण निरलेप हैं, तेज रूप विख्यात ।
ज्ञान कला पूरण धरैं, मैं वन्दूं दिन रात ॥ १९० ॥

ओं ह्रीं विश्वजोतिषे नमः अर्घं ।

चिंतवनमें आवै नहीं, धारैं सुगुण अपार ।
मन वच काय नमूं सदा, मिटै सकल संसार ॥ १९१ ॥

ओं ह्रीं अचिंत्यात्मने नमः अर्घं ।

नय प्रमाणको गमन नहीं, स्वयं ज्योति परकाश ।
अद्भुत गुण पर्यायमें, सुखसूं करै विलास ॥ १९२ ॥

ओं ह्रीं अमितप्रभावाय नमः अर्घं ।

मती आदि क्रमवर्त्त विन, केवल लक्ष्मीनाथ ।
महाबोध तुम नाम है, नमूं पांय धरि माथ ॥ १९३ ॥

ओं ह्रीं महाबोधाय नमः अर्घं ।

कर्मयोगतें जगतमें, जीव शक्तिको नाश ।
स्वयं वीर्य अद्भुत धरैं, नमूं चरण सुखरास ॥ १९४ ॥

ओं ह्रीं महावीर्याय नमो अर्घं ।

छायक लब्धि महान है, ताको लाभ लहाय ।
महा लाभ यातें कहै, बन्दूं तिनके पांय ॥ १९५ ॥

ॐ ह्रीं महालाभाय नमः अर्घं ।

ज्ञानावरणादिक पटल, छायो आतम ज्योति ।
ताको नाश भये विमल, दीप्त रूप उद्योत ॥ १९६ ॥

ओं ह्रीं महोदयाय नमः अर्घं ।

ज्ञानानन्द स्वै लक्षमी, भोगै बाधाहीन ।
पंचम गतिमें वास है नमूं जोग पद लीन ॥ १९७ ॥

ओं ह्रीं महाभोगसुगतये नमः अर्घं ।

पर निमित्त जामें नहीं, स्व आनन्द अपार।
सोई परमानन्द है, भोगै निज आधार। १६८।

ओं ह्रीं महाभोगाय नमः अर्घं।

दर्श ज्ञान सुख भोगते, नेक न बाधा होय।
अतुल वीर्य तुम धरत हो, मैं बन्दूं हूं सोय। १६६।

ओं ह्रीं अतुलवीर्याय नमः अर्घं।

शिवस्वरूप आनन्दमय, क्रीडा करत विलास।
महादेव कहलात हैं, बंदत रिपुगणनाश। २००।

ॐ ह्रीं यज्ञार्हाय नमः अर्घं।

महा भाग शिवगति लहो, तासम भाग न और।
सोई भगवत है प्रभू, नमूं पदाम्बुज ठौर। २०१।

ओं ह्रीं भगवते नमः अर्घं।

तीन लोकके पूज्य हैं, तीन लोकके स्वामि।

कर्म—शत्रुको छय कियो, तातैं अरहन्त नाम । २०२ ।

ॐ ह्रीं अरहन्ताय नमः अर्घं ।

सुरनर पूजत चरण युग, द्रव्य अर्थ जुत भाव ।
महाअर्घ तुम नाम है, पूजत कर्म अभाव ॥ २०३ ॥

ओं ह्रीं महाअर्घाय नमः अर्घं ।

शत इन्द्रन करि पूज्य हो, अहमिंद्रनके ध्येय ।
द्रव्य भाव करि पूज्य हो, पूजक पूज्य अभेय ॥ २०४ ॥

ओं ह्रीं मघवार्चिताय नमः अर्घं ।

छहो द्रव्य गुणपर्यको, जानत भेद अनन्त ।
महापुरुष त्रिभुवन धनी, पूजत हैं नित सन्त ॥ २०५ ॥

ओं ह्रीं भूतार्थयज्ञपुरुषाय नमः अर्घं ।

तुमसों कछु छाना नहीं, तीन लोकका भेद
दर्पण तल सम भास है, नमत कर्ममल छेद ॥ २०६ ॥

ॐ ह्रीं भूतार्थयज्ञाय नमः अर्घं ।

सकल ज्ञेयके ज्ञानतें, हो सबके सिरमोर ।
पुरुषोत्तम तुम नाम है, तुम लग सबकी दौर ॥ २०७ ॥

ओं ह्रीं भूतार्थक्रतुपुरुषाय नमः अर्घं ।

स्वयं बुद्ध शिवमग चरत, स्वयंबुद्ध अविरुद्ध ।
शिवमगचारी नित जजैं, पावैं आतम शुद्ध । २०८ ।

ओं ह्रीं पूज्याय नमः अर्घं ।

सब देवनके देव हो, तीन लोकके पूज्य ।
मिथ्या तिमिर निवारते, सूरज और न दूज । २०९ ।

ओं ह्रीं भट्टारकाय नमः अर्घं ।

सुरनर मुनिके पूज्य हो, तुमसे श्रेष्ठ न कोय ।
तीन लोकके स्वामि हो, पूजत शिवसुख होय । २१० ।

ओं ह्रीं तत्रभवते नमः अर्घं ।

महा पूज्य महा मान्य हो, स्वयंबुद्ध अविकार।
मन वच तनतैं ध्यावते, सुरनर भक्ति विचार। २११।

ओं ह्रीं अत्रभ ाते नमः अर्घं।

महाज्ञा केवल कहो, सो दीखे तुम मांहि।
महा नामसों पूजिये, संसारी दुख नाहिं। २१२।

ओं ह्रीं महते नमः अर्घं।

पूज्यपणा नहीं औरमें, इक तुमहीमें जान।
महा अर्ह तुम गुण प्रभू, पूजत हो कल्याण। २१३।

ॐ ह्रीं महार्हाय नमो अर्घं।

अचल शिवालयके विषै, अमित काल रहै राज।
चिरंजीवी कहलात हो, वन्दूं शिवसुख काज। २१४।

ओं ह्रीं तत्रायुपे नमो अर्घं।

मरण रहित शिवपद लसै, काल अनंतानन्त।

दीर्घायू तुम नाम है, बन्दत नितप्रति संत । २१५ ।

ओं ह्रीं दीर्घायुषे नमः अर्घं ।

सकल तत्त्वके अर्थ कहि, निराबाध निरशंस ।

धर्ममार्ग प्रगटाइयो, नमत मिटै दुख अंश । २१६ ।

ओं ह्रीं अर्थवाचे नमो अर्घं ।

मुनिजन नितप्रति ध्यावतें, पावें निज कल्याण ।

सज्जन जन आराध्य हो, मैं ध्याऊं धरि ध्यान । २१७ ।

ओं ह्रीं सज्जनवल्लभाय(आराध्याय) नमः अर्घं ।

शिवसुख जाको ध्यावतैं, पावैं सन्त मुनीन्द्र ।

परमाराध्य कहात हो, पायो नाम अतीन्द्र । २१८ ।

ओं ह्रीं परमाराध्याय नमः अर्घं ।

पंचकल्याण प्रसिद्ध हैं, गर्भ आदि निर्वाण ।

देवन करि पूजत भये, पायो शिवसुख थान । २१९ ।

ओं ह्रीं पंचकल्याणपूजिताय नमः अर्घं ।

देखो लोकालोकको, हस्त रेखकी सार ।
इत्यादिक गुण तुम विषैं, दीखै उदय अपार । २२० ।

ओं ह्रीं द्रगविशुद्धिगुणोदयाय नमः अर्घं ।

छायक समकितको धरैं, सौधर्मादिक इन्द्र ।
तुम पूजन परभावतें, अन्तिम होंय जिनेन्द्र । २२१ ।

ॐ ह्रीं सुरार्च्चिताय नमः अर्घं ।

निर्विकल्प शुभ चिह्न है, वीतराग सो होय ।
सो तुम पायो सहज ही, नमूं जोर कर दोय ।

ॐ ह्रीं दिवौकसे सुखदात्मने नमः अर्घं ॥ २२२ ॥

स्वर्ग आदि सुख थानके हो परकाशन हार ।
दोस रूप बलवान है, तुम मारग सुखकार ॥

ॐ ह्रीं दिवोज्से नमः अर्घं ॥ २२३ ॥

गर्भ कल्याणकके विषैं, तुम माता सुखकार।
षट् कुमारका सेवती, पावैं भवदधि पार।

ॐ ह्रीं सचीसेवितमातृकाय नमः अर्घं ॥ २२४ ॥

अति उत्तम तुम गर्भ है भवदुख जन्म निवार।
रत्नराशि दिवलोकतैं, वर्षैं मूसलधार।

ओं ह्रीं रत्नगर्भाय नमः अर्घं ॥ २२५ ॥

सुर शोधनतैं गर्भमें, दर्पण सम आकार।
यां पवित्र तुम गर्भ है, पावै शिवसुख सार।

ओं ह्रीं पूतिगर्भाय नमः अर्घं ॥ २२६ ॥

जाके गर्भागमनतैं, पहले उतसव ठान।
दिव्य नारि मंगल सहित पूजत श्री भगवान।

ओं ह्रीं गर्भोत्सवोत्सवसहिताय नमः अर्घं ॥ २२७ ॥

नित नित आनंद उपचरैं, सुर सुरीय हरषात।

मंगल साज समाज सब, उपजावैं दिन रात।

ॐ ह्रीं नित्योपचारोपचिताय नमः अर्घं ॥ २२८ ॥

केवलज्ञान सुलक्ष्मी, धरत महा विस्तार।
चरणकमल सुर मुनि जजैं, हम पूजत हितधार।

ओं ह्रीं पद्मप्रभवाय नमः अर्घं ॥ २२९ ॥

तिंहु विधि तन मल धोयकर, उज्वल निर्मल होय।
शिव आलयमें वसत हैं, शुद्ध सिद्ध हैं सोय।

ओं ह्रीं निखिलाय नमः अर्घं ॥ २३० ॥

असंख्यात परदेशमें, अन्य प्रदेश न होय।
स्वयं स्वभाव स्वजात हैं, मैं प्रणमामी सोय।

ॐ ह्रीं स्वयंस्वभावाय नमः अर्घं ॥ २३१ ॥

पूज्य यज्ञ आराधना, जो कुछ भक्ति प्रमाण।
तुम ही सबके मूल हो, नमत अमंगल हान। २३२।

ओं ह्रीं सर्वज्ञमनसे नमः अर्घं ।

सूर्य सुमेरु समान हो, या सुरतरुकी ठौर ।
महा पुन्यकी राश हो, सिद्ध नमूं कर जोर । २३३ ।

ओं ह्रीं पुन्यांगाय नमः अर्घं ।

ज्यूं सूरज मध्याह्नमें, दिपै अनंत प्रभाव ।
त्यों तुम ज्ञानकला दिपै, मिथ्या तिमिर अभाव । २३४ ।

ओं ह्रीं भास्वते नमः अर्घं ।

चहुंविधि देवनमें सदा, तुम सम देव न आन ।
निजानंदमें केलिकर, पूजत हूं धरि ध्यान । २३५ ।

ओं ह्रीं अद्भुतदेवाय नमः अर्घं ।

विश्व ज्ञान युगपद धरैं, ज्यूं दर्पण आकार ।
स्वपर प्रकाशक हो सही, नमूं भक्ति उरधार । २३६ ।

ओं ह्रीं विश्वज्ञानसम्भृते नमः अर्घं ।

सत स्वरूप सत ज्ञान है, तुम ही पूज्य प्रधान ।

पूजत हैं नित विश्वजन, देव मान परमान। २३७।

ॐ ह्रीं विश्वदेवाय नमः अर्घं।

सृष्टीको सुख करत हो, हरण दुक्ख भववास।
मोक्ष लक्ष्मी देत हो, जन्म जरा मृत नास। २३८।

ओं ह्रीं सृष्टिनिर्वृत्ताय नमः अर्घं।

इन्द्र सहस लोचन किये, निरखत रूप अपार।
मोक्ष लहै सो नेमतैं, मैं पूजूं निरधार

ॐ ह्रीं सहस्राक्षदृगोत्सवाय नमः अर्घं ॥२३९॥

संपूरण निज शक्तिके, है परताप अनन्त।
सो तुम विस्तीरण करो, नमें चरण नित संत।

ओं ह्रीं सर्वशक्तये नमः अर्घं ॥२४०॥

ऐरावतपर रूढ़ हैं, देव नृत्यता मांड।
पूजत हैं सो भक्तिसों, मटि भवार्णव हांड।

ओं ह्रीं देवैरावतायिने नमः अर्घं ॥२४१॥

सुरनर चारण मुनि जजैं, सुलभ गमन आकाश ।
परिपूरण हर्षात हैं, पूरे मनकी आश ।

ओं ह्रीं हर्षाकुलामरखगचारणार्पिमतोत्सवाय नमः अर्घं ॥२४२॥

रक्षक हो षट कायके, शरणागति प्रतिपाल ।
सर्वव्यापि निज ज्ञानतें, पूजत होय निहाल ।

ओं ह्रीं विष्णवे नमः अर्घं ॥ २४३ ॥

महा उच्च आसन प्रभू, है सुमेर विख्यात ।
जन्म अभिषेक सुरेन्द्र करि, पूजत मन उमगात ।

ओं ह्रीं स्नानपीठइन्द्रराजते नमः अर्घं ॥ २४४ ॥

जाकरि तरिए तीर्थसों, मानै मुनिगण मान्य ।
तुम सम कौन जु श्रेष्ठ है असत्यार्थ है अन्य ।

ओं ह्रीं तीर्थसमानदुग्धाब्धये नमः अर्घं ॥ २४५ ॥

लोकग्लान गिलानता, मेटै मेल शरीर ।

आतम प्रक्षालित कियो, तुम्हीं ज्ञान सु नीर ।
ओं ह्रीं स्नानवास्तवताय नमः अर्घं ॥ २४६ ॥

तारण तरण सुभाव हैं, तीन लोक विख्यात ।
ज्यूं सुगन्ध चम्पाकली, गन्धमई कहलात ॥ २४७ ॥
ओं ह्रीं गन्धपवित्रितत्रिलोकाय नमः अर्घं ।

सूक्षम तथा स्थूलमें ज्ञान करै परवेश ।
जाको तुम जानों नहीं, खाली रहो न देश ॥ २४८ ॥
ओं ह्रीं वज्रसूचये नमः अर्घं ।

औरन प्रति आनन्द करि, निर्मल शुचि आचार ।
आप पवित्र भये प्रभू, कर्मधूलिको टार ॥ २४९ ॥
ओं ह्रीं शुचिश्रवे नमः अर्घं

कर्मों करि किरतार्थ हो, कृत फल उत्तम पाय ।
करपर कर राजत प्रभू, बन्दूं हूं युग पाय ॥ २५० ॥
ॐ ह्रीं कृतार्थकृतहस्ताय नमः अर्घं ।

दर्शन इन्द्र अघात हैं, इष्ट मान उर माहिं ।
कर्म नाशि शिवपुर वसै, मैं बन्दूं हुं ताहि ॥ २५१ ॥

ओं ह्रीं शक्रेष्टाय नमः अर्घं ।

मघवा जाके नृत्य करि, ताकै तृप्ति महान ।
सो मैं उनको जजत हूं, होय कर्मकी हान ॥ २५२ ॥

ओं ह्रीं इन्द्रनृत्यतृप्तिकाय नमः अर्घं ।

शची इन्द्र अरु काम ये, जिन दासनके दास ।
निश्चय मनमें नमन कर, नित वंदन पद जास ॥ २५३ ॥

ओं ह्रीं शचीविस्मापिताय नमः अर्घं ।

जिनके सनमुख नृत्य करि, इन्द्र हर्ष उपजाय ।
जन्म सुफल मानैं सदा, हमपर होउ सहाय ॥ २५४ ॥

ओं ह्रीं शक्रारब्धानंदनृत्याय नमः अर्घं ।

धन सुवर्णतें लोकमें, पूरण इच्छा होय ।
चक्रवर्ती पद पाइये, तुम पूजत हैं सोय ॥ २५५ ॥

ओं ह्रीं देवपूर्णमनोरथाय नमः अर्घं ।

तुम आज्ञामें हैं सदा, आप मनोरथ मान ।
इन्द्र सदा सेवन करैं, पाप विनाशक जान ॥ २५६ ॥

ओं ह्रीं आज्ञार्थइन्द्रकृतमनोरथाय नमः अर्घं ।

सब देवनमें श्रेष्ठ हो, सब देवन सिरताज ।
सब देवनके इष्ट हो, बंदत सुलभ सु काज ॥ २५७ ॥

ओं ह्रीं देवश्रेष्ठाय नमः अर्घं ।

तीन लोकमें उच्च हो, तीन लोक परशंस ।
सो शिवगति पायो प्रभू, जजत कर्म विध्वंस ॥ २५८ ॥

ओं ह्रीं शिवोद्भवाय नमः अर्घं ।

जगतपूज्य शिवनाथ हो, तुम ही द्रव्य विशिष्ट ।
हित उपदेशक परम गुरू, मुनिजन माने इष्ट ॥ २५९ ॥

ओं ह्रीं अर्हंजगतपूज्यशिवनाथाय नमः (दीक्षाक्षण क्षुब्धजगते) अर्घं ।

मति, श्रुत, अवधि अवर्णको, नाश कियो स्वयमेव ।

केवलज्ञान स्वतै लियो, आप स्वयंभू देव ॥ २६० ॥

ओं ह्रीं स्वयंभुवे नमः अर्घं ।

समोशरण अद्भुत महा, और लहै नहीं कोय ।

धनपति रचो उछाहसों, मैं पूजूं हूं सोय । २६१ ।

ओं ह्रीं कुवेररचितस्थानाय नमः अर्घं ।

जाको अंत न हो कभी, ज्ञान लक्ष्मी नाथ ।

सोई शिवपुरके धनी, नमूं भाव धरि माथ । २६२ ।

ओं ह्रीं अनन्तश्रीजुषे नमः अर्घं ।

गणधरादि नित ध्यावते, पावैं शिवपुर वास ।

परम ध्येय तुम नाम है, पूरै मनकी आश । २६३ ।

ओं ह्रीं योगीश्वरार्चिताय नमः अर्घं ।

परम ब्रह्मका लाभ हो, तुम पद पायो सार ।

त्रिभुवन ज्ञाता हो सही, नय निश्चय व्यवहार । २६४ ।

२५

ओं ह्रीं ब्रह्मविदे नमो अर्घं ।

सर्व तत्त्वके आदिमें, ब्रह्म तत्त्व परधान ।
तिसके ज्ञाता हो प्रभू, मैं बंदूं धरि ध्यान । २६५ ।

ओं ह्रीं ब्रह्मतत्त्वाय नमो अर्घं ।

द्रव्य भाव द्वै विधि कहौ, यज्ञ जजनकी रीति ।
सो सब तुमहीं हेत हैं, रचत नशै सब (ईति) भीति । २६६ ।

ओं ह्रीं यज्ञपतये नमः अर्घं ।

महादेव शिवनाथ हो, तुमको पूजत लोक ।
मैं पूजूं हूं भावसौं, मेटो मनको शोक । २६७ ।

ओं ह्रीं (यज्ञाय) शिवनाथाय नमः अर्घं ।

कृत्य भए निज भावमें, सिद्ध भये सब काज ।
पायो निज पुरुषार्थको, बंदूं सिद्ध समाज ॥ २६८ ॥

ओं ह्रीं कृतविभवे नमः अर्घं ।

यज्ञविधानके अंग में, मुख्य नाम परधान ।

तुम विन यज्ञ न हो कभी, पूजत होय कल्यान ॥ २६९ ॥

ओं ह्रीं यज्ञांगाय नमो अर्घं ।

मरण रोगके हरणसों, अमर भये हो आप ।
शरणागतिको अमर कर, अमृत हो निष्पाप ॥ २७० ॥

ओं ह्रीं अमृताय नमः अर्घं ।

पूजन विधि अस्नान हो, पूजत शिवसुख होय ।
सुरनर नित पूजन करैं, मिथ्या मतिको खोय ॥ २७१ ॥

ॐ ह्रीं यज्ञाय नमः अर्घं ।

जो हो सो सामान्य कर, धरत विशेष अनेक ।
वस्तु सुभाव यही कहो, वंदूं सिद्ध प्रत्येक ॥ २७२ ॥

ॐ ह्रीं वस्तूत्पादकाय नमः अर्घं ।

इन्द्र सदा तुम थुति करैं, मनमें भक्ति उपाय ।
सर्व शास्त्रमें तुम थुति, गणधरादि करि गाय ॥ २७३ ॥

ओं ह्रीं स्तुतीश्वराय नमो अर्घं ।

मगन रहो निज तत्त्वमें, द्रव्य भाव विधि नाश ।
जो है सो है विविध विध, नमूं अचल अविनाश ॥ २७४ ॥

ॐ ह्रीं भावाय नमः अर्घं ।

तीन लोक सिरताज हैं, इन्द्रादिक करि पूज्य ।
धर्मनाथ प्रतिपाल जग, और नहीं है दूज्य ॥ २७५ ॥

ओं ह्रीं महापतये नमः अर्घं ।

महाभाग सरधानतें, तुम अनुभव करि जीव ।
सो सेवत पुन पाप तज, निजसुख लहै सदीव ॥ २७६ ॥

ओं ह्रीं महायज्ञाय नमः अर्घं ।

यह विधि उपदेशमें, तुम अग्रेश्वर जान ।
यज्ञ रचावनहार तुम, तुम ही हो यजमान ॥ २७७ ॥

ओं ह्रीं अग्रयाजकाय नमो अर्घं ।

तीन लोकके पूज्य हो, भक्ति भाव उर धार ।
धर्म अर्थ अरु मोक्षके. दाता तुम हो सार ॥ २७८ ॥

ॐ ह्रीं जगत्पूज्याय नमो अर्घं ।

दया मोह पुन्य पापतैं, दूर भये स्वैतंत्र ।
ब्रह्मज्ञानमें लय सदा, जपूं नाम तुम मंत्र ॥ २७९ ॥

ॐ ह्रीं दयापराय नमो अर्घं ।

तुम ही पूजन योग्य हो, तुम ही हो आराध्य ।
महा साधु सुख हेतुतैं, साधे हैं निज साध्य ॥ २८० ॥

ओं ह्रीं पूज्यार्हाय नमो अर्घं ।

निज पुरुषारथ सधनको, तुमको अर्चत जक्त ।
मनवांछित दातार हो, शिव सुख पावै भक्त ॥ २८१ ॥

ओं ह्रीं जगदार्च्चिताय नमो अर्घं ।

ध्यावत हैं नितप्रति तुम्हैं, देव चार परकार ।
तुम देवनके देव हो, नमूं भक्ति उर धार ॥ २८२ ॥

ॐ ह्रीं देवाधिदेवाय नमो अर्घं ।

इन्द्र समान न भक्त हैं, तुम समान नहीं देव।
ध्यावत हैं नित भावसों, मोक्ष लहैं स्वयमेव ॥ २८३ ॥

ओं ह्रीं शक्रार्च्चिताय नमः अर्घं ।

तुम देवनके देव हो, सदा पूजने योग्य।
जे पूजत हैं भावसों, भोगैं शिवसुख भोग ॥ २८४ ॥

ओं ह्रीं देवदेवाय नमः अर्घं ।

तीन लोक सिरताज हो, तुमसे बड़ा न कोय।
सुरनर पशु खग ध्यावते, दुविधा मनकी खोय ॥ २८५ ॥

ओं ह्रीं जगतगुरवे नमः अर्घं ।

जोहो सोही तुम सही, नहीं समझमें आय।
सुरनर मुनि सब ध्यावते, तुम वाणीको पाय ॥ २८६ ॥

ओं ह्रीं संहूत देवसंघाचार्याय नमः अर्घं ।

ज्ञानानन्द स्वलक्ष्मी, ताके हो भरतार।

स्वसुगंध वासित रहो, कमल गंधकी सार ॥ २८७ ॥

ॐ ह्रीं पद्मनन्दाय नमः अर्घं ।

सब कुवादि बादी हते, वज्र शैल उनहार ।
विजय ध्वजा फहरात है, बन्दूं भक्ति विचार ॥ २८८ ॥

ॐ ह्रीं जयध्वजाय नमः अर्घं ।

दशोंदिशा परकाश है, तिनकी ज्योति अमंद ।
भविजन कुमुद विकाश हो, बन्दूं पूरण चन्द ॥ २८९ ॥

ओं ह्रीं भामण्डलाय नमः अर्घं ।

चमरनि करि भक्ति करें, देव चार परकार ।
यह विभूति तुम ही विषैं, बन्दूं पाप निवार । २९० ।

ॐ ह्रीं चतुःषष्ठी चामराय नमः अर्घं ।

देव दुंदुभी शब्द करि, सदा करैं जयकार ।
तथा आप परसिद्ध हो, ढोल शब्द उनहार । २९१ ।

ओं ह्रीं देवदुंदुभोवाद्याय नमः अर्घं ।

तुम वाणी सब मनन कर, समझत हैं इक सार ।
अक्षरार्थ नहीं भ्रम पड़े, संशय मोह निवार । २९२ ।

ओं ह्रीं वाङ्स्पष्टाय नमः अर्घं ।

धनपति रचि तुम आसनं, महा प्रभूता जान ।
तथा स्व आसन पाइयो, अचल रहो शिवथान । २९३ ।

ओं ह्रीं लब्धासनाय नमः अर्घं ।

तीन लोकके नाथ हो, तीन छत्र विख्यात ।
भव्य जीव तुम छांहमें, सदा स्व आनन्द पात । २९४ ।

ओं ह्रीं छत्रत्रयाय नमः अर्घं ।

पुष्प वृष्टि सुर करत हैं, तीनों काल मझार ।
तुम सुगन्ध दश दिश रमी, भविजन भ्रमर निहार । २९५ ।

ॐ ह्रीं पुष्पवृष्टये नमः अर्घं ।

देव रचित आशोक है, वृक्ष महा रमणीक।
समोशरण शोभा प्रभु, शोक निवारण ठीक। २९६।

ओं ह्रीं दिव्याशोकाय नमः अर्घ।

मानस्तम्भ निहारके, कुमतिन मान गलाय।
समोशरण प्रभुता वहै, नमूं भक्ति उर लाय॥ २९७।

ओं ह्रीं मानस्थम्भाय नमः अर्घं।

सुरदेवी संगीत कर, गावैं शुभ गुण गान।
भक्ति भाव उरमें जगो, बन्दत श्री भगवान। २९८।

ओं ह्रीं संगीताहाँय नमः अर्घं।

मंगल सूचक चिह्न हैं, कहै अष्ट परकार।
तुम समीप राजत सदा, नमूं अमंगल टार। २९९।

ओं ह्रीं अष्टमंगलाय नमः अर्घं।

भविजन तरिये तीर्थसों, तुम हो श्री भगवान।

कोई न भंगे आन जिन, तीर्थ चक्रसो जान । ३०० ।

ॐ ह्रीं तीर्थचक्रवर्तिने नमः अर्घं ।

सम्यग्दर्शन धरत हो, निश्चै परमावगाढ ।

संशय आदिक मेटिके, नासो सकल विगाढ । ३०१ ।

ओं ह्रीं सुदर्शनाय नमो अर्घं ।

कर्त्ता हौ शिव काजके, ब्रह्मा जगकी रीति ।

वर्णाश्रमको थापकें, प्रगटायो शुभ नीत । ३०२ ।

ॐ ह्रीं कर्त्रे नमो अर्घं ।

सत्य धर्म प्रतिपालके, पोषत हो संसार ।

यति श्रावक दो धर्म के, भये नाथ सुखकार । ३०३ ।

ओं ह्रीं तीर्थभर्त्रे नमो अर्घं ।

धर्म तीर्थ मुनिराज हैं, तिनके हो तुम स्वामि ।

धर्म नाथ तुम जानके, नितप्रति करूं प्रणाम । ३०४ ।

ओं ह्रीं तीर्थेशाय नमो अर्घं ।

लोक तीर्थमें गिनत हैं, धर्मतीर्थ परधान ।
सो तुम राजत हो सदा, मैं बन्दूं धरि ध्यान ॥ ३०५ ॥

ॐ ह्रीं धर्मतीर्थकराय नमो अर्घं ।

तुम विन धर्म न हो कभी ढूंढो सकल जहान ।
दश लक्षण स्वैधर्मके, तीरथ हो परधान । ३०६ ।

ओं ह्रीं धर्मतीर्थयुताय नमो अर्घं ।

धर्म तीर्थ करतार हो, श्रावक या मुनिराज ।
दोनों विधि उत्तम कहो, स्वर्ग मोक्षके काज ॥ ३०७ ॥

ओं ह्रीं धर्मतीर्थकराय नमो अर्घं ।

तुमसे धर्म चले सदा, तुम्ही धर्मके मूल ।
सुरनर मुनि पूजैं सदा, छिदहिं कर्मके शूल ॥ ३०८ ॥

ॐ ह्रीं तीर्थप्रवर्त्तकाय नमो अर्घं ।

धर्मनाथ जगमें प्रगट, तारण तरण जिहाज।
तीन लोक अधिपति कहो, बन्दूं सुखके काज ॥ ३०९ ॥
ओं ह्रीं तीर्थवेधसे नमो अर्घं।

श्रावक या मुनि धर्मके, हो दिखलावनहार।
अन्य लिंग नहीं धर्मके, बुधजन लखो विचार ॥ ३१० ॥
ओं ह्रीं तीर्थविधाय नमो अर्घं।

स्वर्ग मोक्ष दातार हो, तुम्ही मार्ग सुखदान।
अन्य कुभेषिनमें नहीं, धर्म यथारथ ज्ञान ॥ ३११ ॥
ओं ह्रीं सत्यतीर्थकराय नमो अर्घं।

सेवन योग्य सु जक्तमें, तुम्ही तीर्थ हो सार।
सुरनर मुनि सेवन करैं, मैं बन्दूं दुख टार ॥ ३१२ ॥
ओं ह्रीं तीर्थसेव्याय नमः अर्घं।

भव समुद्र भवसै तिरै, सो तुम तीर्थ कहाय।

हो तारण तिहूं लोकमें, सेवत हूं तुम पाय ॥ ३१३ ॥

ओं ह्रीं तीर्थतारकाय नमः अर्घं ।

सर्व अर्थ परकाश करि, निर इच्छा तुम वैन ।
धर्म सुमार्ग प्रवर्त्तको, तुम राजत हो ऐन । ३१४ ।

ओं ह्रीं सत्यवाक्याधिपाय नमः अर्घं ।

धर्म मार्ग परगट करै, सो शासन कहलाय ।
सो उपदेशक आप हो, तिस संकेत कराय । ३१५ ।

ओं ह्रीं सत्यशासनाय नमः अर्घं ।

अतिशय करि सर्वज्ञ हो, ज्ञानावरण विनाश ।
नेम रूप भवि सुनत ही, शिवसुख करत प्रकाश । ३१६ ।

ओं ह्रीं अप्रतिशासनाय नमः अर्घं ।

कहै कथंचित धर्मको, स्यात वचन सुखकार ।
सो प्रमाणतैं साधियो, नय निश्चय व्यवहार । ३१७ ।

ओं ह्रीं स्याद्वाय नमः अर्घं।

निर अक्षर वाणी खिरे, दिव्य मेघकी गर्ज्ज।
अक्षरार्थ हो परिणवै, सुन भव्यन मन अर्ज्ज। ३१८।

ओं ह्रीं दिव्यध्वनये नमः अर्घं।

नय प्रमाण नहीं हतत है, तुम परकाशे अर्थ।
शिवसुखके साधन विषै, नहीं गिनत है व्यर्थ। ३१९।

ओं ह्रीं अव्याहतार्थाय नमः अर्घं।

करै पवित्र सु आत्मा, अशुभ कर्म मल खोय।
पहुंचावै ऊंची सुगति, तुम दिखलायो सोय। ३२०।

ॐ ह्रीं पुण्यवाचे नमो अर्घं।

तत्त्वारथ तुम भासियो, सम्यक विषै प्रधान।
मिथ्या जहर निवारणं, अमृत पान समान। ३२१।

ओं ह्रीं अर्थवाचे नमः अर्घं।

देव अतिशयसां खिरत हो, अक्षराथ मय होय।
दिव्य ध्वनि निश्चय करै, संशय तमको खोय। ३२२।

ओं ह्रीं अर्द्धमागधीयुक्ताय नमो अर्घं।

सब जीवनको इष्ट है, मोक्ष निजानन्द वास।
सो तुमने दिखलाइयो, संशय मोह विनाश। ३२३।

ओं ह्रीं इष्टवाचे नमः अर्घं।

नय प्रमान ही कहत है, द्रव्य पर्याय सु भेद।
अनेकांत साधै सही, वस्तु भेद निरभेद। ३२४।

ओं ह्रीं अनेकांतदर्शिने नमः अर्घं।

दुर्नय कहत एकांतको, ताको अन्त कराय।
सम्यक्मति प्रगटाइयो, पूजूं तिनके पाय। ३२५।

ॐ ह्रीं दुर्नयांतकाय नमः अर्घं।

एक पक्ष मिथ्यात्व है, ताको तिमिर निवार।

स्याद्वाद सम न्यायतें, भविजन तारे पार। ३२६।

ओं ह्रीं एकांतध्वांतभेदाय नमः अर्घं।

जो है सो निज भावमैं, रहै सदा निरवार।
मोक्ष साध्यमें सार है, सम्यक् विषै अपार। ३२७।

ओं ह्रीं तत्त्ववाचे नमः अर्घं।

निज गुण निज परयायमें, सदा रहो निरभेद।
शुद्ध बुद्ध अव्यक्त हो, पूजूं हूं निरखेद। ३२८।

ॐ ह्रीं प्रथकक्रताय नमः अर्घं।

स्यातकार उद्योतकर वस्तु धर्म निरशंस।
तासुध्वजा निर्विघ्नको, भाषो विधि विध्वंस। ३२९।

ओं ह्रीं स्यात्कारध्वजावाचे नमः अर्घं।

परम्पराई धर्मको उपदेशो श्रुत द्वार।
भवि भवसागर तीर लह, पायो शिव सुखकार। ३३०।

ॐ ह्रीं अर्हद्वाचे नमः अर्घं ।

द्रव्य दृष्टि नहिं पुरुष कृत, है अनादि परमान ।
सो तुम भाख्यौ है सही, यह पर्याय सु जान । ३३१ ।

ॐ ह्रीं अपौरुषेयवाचिने नमः अर्घं ।

नहीं चलाचल होठ हो, जिस वाणीके होत ।
सो मैं बन्दूं हो किया, मोक्षमार्ग उद्योत । ३३२ ।

ओं ह्रीं अचलोष्ठवाचिने नमः अर्घं ।

तुम सन्तान अनादि हैं, शाश्वत नित्य स्वरूप ।
तुमको बन्दूं भावसों, पाऊँ शिव—सुख कूप । ३३३ ।

ॐ ह्रीं शाश्वताय नमः अर्घं ।

हीनादिक वा और विधि, नहीं विरुद्धता जान ।
एक रूप सामान्य है, सब ही सुखकी खान । ३३४ ।

ओं ह्रीं अनिरुद्धाय नमः अर्घं ।

नय विवक्षते सधत है, सप्त भंग निरवाध ।
सो तुम भास्यो नमत हूं, वस्तु रूपको साध । ३३५ ।

ओं ह्रीं सप्तभंगवाचिने नमः अर्घं ।

अक्षर विन वाणी खिरे, सर्व अर्थ करि युक्त ।
भविजन निज सरधानतें, पावें जगतें मुक्त । ३३६ ।

ओं ह्रीं अवर्णगिरे नमः अर्घं ।

क्षुद्र तथा अक्षुद्र मय, सब भाषा परकाश ।
तुम मुखतें खिरकै करे, भर्म तिमिरको नाश । ३३७ ।

ओं ह्रीं सर्वभाषामयगिरे नमः अर्घं ।

कहने योग्य समर्थ सव, अर्थ करै परकाश ।
तुम वाणी मुखतें खिरे, करै भरम तम नाश । ३३८ ।

ओं ह्रीं व्यक्तगिरे नमः अर्घं ।

तुम वाणी नहीं व्यर्थ है, भङ्ग कभी नहीं होय ।
लगातार मुखतैं खिरे, संशय तमको खोय । ३३९ ।

ॐ ह्रीं अमोघवाचिने नमः अर्घं ।

वस्तु अनन्त पर्याय है, वचन अगोचर जान ।
तुम दिखलाये सहज ही, हरी कुमति मतिवान । ३४० ।

ॐ ह्रीं अवाच्यानंतवाचिने नमः अर्घं ।

वचन अगोचर गुण धरो, लहैं न गणधर पार ।
तुम महिमा तुमहीं विषैं, मुझ तारो भवपार । ३४१ ।

ओं ह्रीं अवाच्ये नमः अर्घं ।

तुम सम वचन न कहि सकै, असदमती छदमस्थ ।
धर्म मार्ग प्रगटाइयो, मेटी कुमति समस्त ॥ ३४२ ॥

ओं ह्रीं अद्वैतगिरे नमः अर्घं ।

सत्यप्रिय तुम बैन हैं, हितमित भविजन हेत ।

सो मुनिजन तुम ध्यावते, पावै शिपुर खेत ॥ ३४३ ॥

ओं ह्रीं सूनृतगिरे नमः अर्घं ।

नहीं सांच नहीं झूठ है, अनुभय वचन कहात ।
सो तीर्थंकर ध्वनि कही, सत्यारथ सत बात ॥ ३४४ ॥

ओं ह्रीं सत्यानुभयगिरे नमः अर्घं ।

मिथ्या अर्थ प्रकाश करै, कुगिरा ताकौ नाम ।
सत्यारथ उद्योत करै, सुगिरा तुम अभिराम ॥ ३४५ ॥

ॐ ह्रीं सुगिरे नमः अर्घं ।

जोजन एक चहूं दिशा, हो वाणी विस्तार ।
श्रवण सुनत भविजन लहै, आनंद हिये अपार ॥ ३४६ ॥

ओं ह्रीं योजनव्यापितगिरे नमः अर्घं ।

निर्मल क्षीर समान है, गौर श्वेत तुम बैन ।
पाप मलिनता रहित है, सत्य प्रकाशक एन ॥ ३४७ ॥

ॐ ह्रीं क्षीरगौरगिरे (निर्मलगौरवचनाय) नमः अर्घं ।

तीर्थ तत्त्व जो नहीं तजैं, तारण भविजन वान ।
यातें तीर्थंकर प्रभू, नमत पाप मल हान ॥ ३४८ ॥
ओं ह्रीं तीर्थतत्त्वगिरे नमः अर्घं ।

उत्तम तीर्थ पर्याय करि, आत्म तत्त्वको जान ।
सो तुम सत्यारथ कहो, मुनिजन उत्तम मान ॥ ३४९ ॥
ॐ ह्रीं परमार्थगवे नमः अर्घं ।

भव्यनिको श्रवणनि सुखद, तुम वाणी सुख देन ।
मैं वन्दूं हूं भावसों, धर्म बतायो एन ॥ ३५० ॥
ओं ह्रीं भव्यैकश्रवणगिरे नमो अर्घं ।

संशय विभ्रम मोहको, नाश करो निमूंल ।
सत्य वचन परमाण तुम, छेदत मिथ्या शूल ॥ ३५१ ॥
ओं ह्रीं सद्गवे नमः अर्घं ।

तुम वाणीमें प्रगट है, सब सामान्य विशेष ।
नानाविध सुन तर्कमें, संशय रहै न शेष ॥ ३५२ ॥

ओं ह्रीं चित्रगवे नमः अर्घं ।

परम कहै उतकृष्टको, अर्थ होय गम्भीर ।
सो तुम वाणीमें खिरै, बन्दत भवदधि तीर ॥ ३५३ ॥

ओं ह्रीं परमार्थगवे नमः अर्घं ।

मोह क्षोभ परशांत हो, तुम वाणी उरधार ।
भविजनको सन्तुष्ट कर, भव आताप निवार ॥ ३५४ ॥

ओं ह्रीं प्रशांतगवे नमः अर्घं ।

बारह सभा सु प्रश्न कर, समाधान करतार ।
मिथ्यामति विध्वंस करि, बन्दूं मनमें धार ॥ ३५५ ॥

ओं ह्रीं प्राश्निकगिरे नमः अर्घं ।

महापुरुष महादेव हो, सुरनर पूजन योग ।
वाणी सुन मिथ्यात तज, पावैं शिवसुख भोग ॥ ३५६ ॥

ओं ह्रीं याज्यश्रुते नमः अर्घं ।

शिवमग उपदेशक सुश्रुत, मनमें अर्थ विचार ।

साक्षात् उपदेश तुम, तारे भविजन पार ॥ ३५७॥

ओं ह्रीं श्रुते नमः अर्घं ।

तुम समान तिहुं लोकमें, नहीं अर्थ परकाश ।
भविजन सम्बोधे सदा, मिथ्यामतिको नाश ॥ ३५८ ॥

ओं ह्रीं महाश्रुते नमः अर्घं ।

जो निज आत्म-कल्याणमें, बरतै सो उपदेश ।
धर्म नाम तिस जानियो, बन्दूं चरण हमेश ॥ ३५९ ॥

ॐ ह्रीं धर्मश्रुते नमः अर्घं ।

जिन शासनके अधिपती, शिव मारग बतलाय ।
वा भविजन सन्तुष्ट करि, बन्दूं तिनके पांय । ३६० ।

ओं ह्रीं श्रुतपतये नमः अर्घं ।

धारण हो उपदेशके, केवलज्ञान संयुक्त ।
शिवमारग दिखलात हो, तुमको बन्दन युक्त ॥ ३६१ ॥

ओं ह्रीं श्रुतधृताय नमः अर्घं ।

जेसो है तैसो कहै, परम्पराय सु रीत।
सत्यारथ उपदेशतें, धर्म मार्गकी रीत ॥ ३६२ ॥

ओं ह्रीं ध्रुवश्रुतये (वृतये) नमः अर्घं।

मोक्षमार्गको देखियो औरनको दिखलाय।
तुम सम हितकारक नहीं, वन्दूं हूं तिन पांय ॥ ३६३ ॥

ओं ह्रीं निर्वाणमार्गोपदेशकाय नमः अर्घं।

स्वर्ग मोक्ष मारग कहो, यति श्रावकको धर्म।
तुमको वन्दत सुख महा, लहै ब्रह्मपद पर्म।

ओं ह्रीं यतिश्रावकमार्गदेशकाय नमो अर्घं। ३६४।

तत्त्व अतत्त्वस् जानियो, तुम सब ही परतक्ष।
निज आतम सन्तुष्ट हो, देखो लक्ष अलक्ष ॥

ओं ह्रीं तत्त्वमार्गदृशे नमः अर्घं। ३६५।

सार तत्त्व वर्णन कियो, अयथार्थ मत नाश।
स्वपर परकाशन हो महा, वन्दूं तिनको वास।

ओं ह्रीं सारतत्त्वयथार्थाय नमः अर्घं । ३६६ ।

आप तीर्थ औरन प्रती, सर्व तीर्थ करतार ।
उत्तम शिवपुर पहुंचना, यही विशेषण सार ।

ओं ह्रीं तीर्थपरमतीर्थकृताय नमः अर्घं । ३६७ ।

दृष्टा लोकालोकके, रेखा हस्त समान ।
युगपत सबको देखिये, कियो भर्म तम हान ।

ओं ह्रीं दृष्टाय नमः अर्घं । ३६८ ।

जिनवाणीके रसिक हो, तासों रति दिन रैन ।
भोग उपभोग करो सदा, बन्दत हौं सुखचैन ।

ओं ह्रीं वाग्मीश्वराय नमः अर्घं । ३६६ ।

जो संसार–समुद्रसे, पार करत सो धर्म ।
तुम उपदेश्या धर्मकूं, नमत मिटै भव भर्म ।

ओं ह्रीं धर्मशासनाय नमः अर्घं । ३७० ।

धर्म रूप उपदेश है, भवि जीवन हितकार ।

मैं बन्दूं तिनको सदा, करौ भवार्णव पार।

ओं ह्रीं धर्मदेशकाय नमः अर्घं । ३७१ ।

सब विद्याके ईश हो, पूरन ज्ञान सु जान।
तिनको बन्दूं भावसैं, पाऊं ज्ञान महान।

ओं ह्रीं योगीश्वराय नमः अर्घं । ३७२ ।

सुमति नार भरतार हो, कुमति कुसौत विडार।
मैं पूजूं हूं भावसों, पाऊं सुमती सार।

ओं ह्रीं त्रयीनाथाय नमः अर्घं । ३७३ ।

धर्म अर्थ अरु मोक्षके, हो दाता भगवान।
मैं नित प्रति पाइन परूं, देहो परम कल्यान।

ओं ह्रीं त्रिभङ्गीशाय नमः अर्घं । ३७४ ।

गिरा कहै जिन वचनको, तिसका अन्त सु धर्म।
मोक्ष करै भविजननको, नाशै मिथ्या भर्म।

ओं ह्रीं गिरांपतये नमः अर्घं । ३७५ ।

जाकी सीमा मोक्ष है, पूरण सुख स्थान।
शरणागतको सिद्ध है, नमूं सिद्ध धरि ध्यान।

ओं ह्रीं सिद्धांगाय नमः अर्घं ॥३७६॥

नय प्रमाणसों सिद्ध है, तुम वाणी रवि सार।
मिथ्या तिमिर निवारकैं, करै भव्य जन पार।

ओं ह्रीं सिद्धवाङ्मयाय नमः अर्घं ॥३७७॥

निज पुरुषारथ साधकै, सिद्ध भये सुखकार।
मन वच तन करि मैं नमूं, करो जगतसैं पार ॥ ३७८ ॥

ओं ह्रीं सिद्धाय नमः अर्घं।

सिद्ध करे निज अर्थको, तुम शासन हितकार।
भविजन मानै सरदहै, करै कर्म रज छार ॥ ३७९ ॥

ओं ह्रीं सिद्धशासनाय नमः अर्घं।

तीन लोकमें सिद्ध है, तुम प्रसिद्ध सिद्धान्त।
अनेकान्त परकाश कर, नाशै मिथ्या ध्वांत ॥ ३८० ॥

ओं ह्रीं जगत्प्रसिद्धसिद्धान्ताय नमः अर्घं ।

ओंकार यह मंत्र है, तीन लोक परसिद्ध ।
तुम साधक कहलात हो, जपत मिले नवनिद्ध ॥ ३८१ ॥

ओं ह्रीं सिद्धमंत्राय नमः अर्घं ।

सिद्ध यज्ञको कहत है, संशय विभ्रम नाश ।
मोक्षमार्गमें ले धरै, निजानन्द परकास ॥ ३८२ ॥

ओं ह्रीं सिद्धवाचिने नमः अर्घं ।

मोहरूप मलसो धुली, वाणी कही पवित्र ।
भव्य स्वच्छता धारिके, लहै मोक्षपद तत्र ॥ ३८३ ॥

ओं ह्रीं शुचिवाचिने नमः अर्घं ।

कर्ण विषयमें होत ही, करै आतम कल्याण ।
तुम वाणी शुचिता धरै, नमैं सन्त धरि ध्यान ॥ ३८४ ॥

ओं ह्रीं शुचिश्रवसे नमो अर्घं ।

वचन अगोचर पद धरो, कहते पंडित लोग।
तुम महिमा तुमहीं विषें, सदा बन्दने योग्य ॥ ३८५॥
ओं ह्रीं निरुक्तोक्ताय नमः अर्घं ।

सुरनर मानें आन सब, तुम आज्ञा शिर धार।
मानो तंत्र विधान करि, बांधे एक लगार ॥ ३८६ ॥
ओं ह्रीं तंत्रकृते नमो अर्घं ।

जाकरि निश्चय कीजिए, वस्तु प्रमेय अपार।
सो तुमसे परगट भयो, न्यायशास्त्र रुचि धार ॥ ३८७ ॥
ओं ह्रीं न्यायशास्त्रकृते नमः अर्घं ।

गुण अनन्त पर्याय युत, द्रव्य अनन्तानन्त।
युगपति जानो श्रेष्ठ गुन, धरो महा सुखवन्त ॥ ३८८ ॥
ॐ ह्रीं महाज्येष्ठाय नमः अर्घं ।

तुम पद पावै सो महा, तुम गुण पार लहाय।

शिवलक्ष्मीके नाथ हो, पूजूं तिनके पाय ॥ ३८९ ॥

ॐ ह्रीं महानंदाय नमः अर्घं ।

तुम सम कविवर जगतमें, और न दूजो कोय ।
गणधरसे श्रुतकार भी, अर्थ लहैं हैं सोय ॥ ३९० ॥

ॐ ह्रीं कवींद्राय नमः अर्घं ।

हित करता षट् कायके, महा इष्ट तुम बैन ।
तुमको बन्दूं भावसों, मोक्ष महासुख दैन ॥ ३९१ ॥

ओं ह्रीं महेष्टाय नमः अर्घं ।

मोक्ष दान दातार हो, तुम सम कौन महान ।
तीन लोक तुमको जजैं, मनमें आनन्द ठान ॥ ३९२ ॥

ओं ह्रीं महानदाताराय नमः अर्घं ।

द्वादशांग श्रुतकों रचै, गणधरसे कविराज ।
तुम आज्ञा शिर धारके, नमूं निजातम काज ॥ ३९३ ॥

ओं ह्रीं कवीश्वराय नमः अर्घं ।

देव महा ध्वनि करत हैं, तुम सन्मुख धर भाव ।
केवल अतिशय कहत हैं, मैं पूजूं युतचाव ॥ ३१४ ॥

ॐ ह्रीं दुंदुमीश्वराय नमः अर्घं ।

इन्द्रादिक नित पूजते, भक्ति पूर्व शिर नाय ।
त्रिभुवन नाथ कहात हो, हम पूजत नित पांय ॥ ३१५ ॥

ओं ह्रीं त्रिभुवननाथाय नमः अर्घं ।

गणी मुनीश फणीशपति, कलेन्द्रनके नाथ ।
अहमिन्द्रनके नाथ हो, तुमहि नमूं धरि माथ ॥ ३१६ ॥

ओं ह्रीं महानाथाय नमः अर्घं ।

भिन्न भिन्न देख्यो सकल, लोकालोक अनन्त ।
तुम सम दृष्टि न औरकी, तुमैं नमैं नित सन्त ॥ ३१७ ॥

ओं ह्रीं परद्रष्टाय नमः अर्घं ।
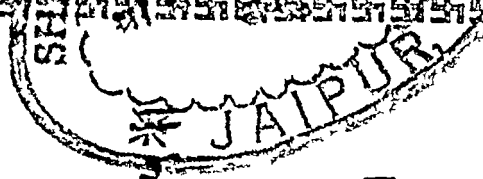
यति जगके भरतार जग, मुनि गणमें परधान।
तुमको पूजैं भावसों, होत सदा कल्याण॥ ३९८॥
ॐ ह्रीं जगतपतये नमः अर्घं।

श्रावक या मुनिराज हो, तुम आज्ञा शिर धार।
वरतैं धम पुरुषार्थमें, पूजत हूं सुखकार॥ ३९९॥
ॐ ह्रीं स्वामिने नमः अर्घं।

धर्म कार्य करता सही, हो ब्रह्मा परमार्थ।
मालिक हो तिहुं लोकके, पूजनीक सत्यार्थ॥ ४००॥
ओं ह्रीं कर्त्रे नमः अर्घं।

तीन लोकके नाथ हो, शरणागत प्रतिपाल।
चार संघके अधिपती, पूजूं हूं नभ भाल॥ ४०१॥
ओं ह्रीं भर्त्रे नमः अर्घं।

तुम सम और विभव नहीं, धरो चतुष्ट अनन्त।

क्यों न करो उद्धार अब, दास कहावै सन्त ॥ ४०२ ॥

ओं ह्रीं विभवे नमो अर्घं ।

जामें विघन न हो कभी, ऐसी श्रेष्ठ विभूत ।
पाई निज पुरुषार्थ करि, पूजत शुभ करतूत ॥ ४०३ ॥

ओं ह्रीं अभवे नमो अर्घं ।

तुम सम शक्ति न औरकी, शिवलक्ष्मीको पाय ।
भोगे सुख स्वाधीन कर, वन्दूं तिनके पाय ॥ ४०४ ॥

ॐ ह्रीं ईश्वराय नमो अर्घं ।

तुमसे अधिक न और में, पुरुषारथ कहूं पाइ ।
हो अधीश सब जगतके, वन्दूं तिनके पांइ ॥ ४०५ ॥

ओं ह्रीं अधीश्वराय नमो अर्घं ।

अग्रेश्वर चउ संघके, शिवनायक शिरमोर ।

पूजत हुं नित भावसों, शीश दोऊ कर जोर ॥ ४०६ ॥
ओं ह्रीं अधीशाय नमो अर्घं ।

छायक सुमति सुहावनी, बीजभूत तिग जान ।
तुमसे शिवमारग चले, मैं बन्दूं धरि ध्यान ॥ ४०७ ॥
ॐ ह्रीं अधीशानाय नमः अर्घं ।

सहज सुभाव प्रयत्न विन, तीन लोक आधीश ।
शुद्ध सुभाव विराजते, बन्दूं पद धर शीश ॥ ४०८ ॥
ओं ह्रीं अधिशिवाय नमः अर्घं ।

स्वयं बुद्ध शिवनाथ हो, धर्म तीर्थ करतार ।
तुम सम सुमति न को धरै, मैं बन्दूं निरधार ॥ ४०९ ॥
ओं ह्रीं ईशित्रे नमः अर्घं ।

पूरण शक्ति सुभाव धर, पूरण ब्रह्म प्रकाश ।
पूरण पद पायो प्रभू, पूजत पाप विनाश ॥ ४१० ॥

ओं ह्रीं ईशानाय नमः अर्घं ।

तुमसे अधिक न और है, त्रिभुवन ईश कहाय ।
तीन लोक अतियन्त सुख, पायो बंन्दू ताय ॥ ४११ ॥

ओं ह्रीं अधिपतये नमो अर्घं ।

तीन लोक पूजत चरण, ईश्वर तुमको जान ।
मैं पूजों हों भावसों, सबसे बड़े महान ॥ ४१२ ॥

ॐ ह्रीं ईशाय नमः अर्घं ।

सूरज सम परकाश कर, मिथ्या तम परहार ।
भविजन कमल प्रबोधको, पायो निज हितकार ॥ ४१३ ॥

ओं ह्रीं ईनाय नमो अर्घं ।

क्रीडा करि शिवमार्गमें, पाय परम पद आप ।
आज्ञा भंग न हो कभी, वन्दत नाशे पाप ॥ ४१४ ॥

ओं ह्रीं इन्द्राय नमो अर्घं ।

उत्तम हो तिहूं लोकमें, सबके हो शिरताज।
शरणागत प्रतिपाल हो, पूजूं आतम काज ॥ ४१५ ॥
ॐ ह्रीं अधिपाय नमः अर्घं ।

अधिक भूतिके हो धनी, सर्व सुखी निरधार।
सुरनर तुम पदको लहै, पूजत हूं सुखकार ॥ ४१६॥
ओं ह्रीं अधिभुवे नमः अर्घं ।

तीन लोक कल्याण कर, धर्म मार्ग बतलाय।
सब देवनके देव हो, महादेव सुखदाय ॥ ४१७ ॥
ॐ ह्रीं महेश्वराय नमः अर्घं ।

महा ईश महाराज हो; महा प्रताप धराय।
महा जीव पूजें चरण, सब जन शरण सहाय ॥ ४१८ ॥
ओं ह्रीं महेशाय नमो अर्घं ।

परम कहो उतकृष्टको, धर्म तीर्थ वरताय।

परमेश्वर यातें भये, बन्दूं तिनके पांय ॥ ४१९ ॥
ओं ह्रीं परमेश्वराय नमः अर्घं ।

तुम समान कोई नहीं, जग ईश्वर जगनाथ ।
महा विभव ऐश्वर्यको, धरो नमूं निज माथ ॥ ४२० ॥
ओं ह्रीं विभवमहेशाय नमः अर्घं ।

चार प्रकारनमें सदा, देव तुम्हें शिर नाय ।
सब देवनमें श्रेष्ठ हो, नमूं युगल तुम पांय ॥ ४२१ ॥
ओं ह्रीं अधिदेवाय नमः अर्घं ।

तुम समान नहिं देव अरु, तुम देवनके देव ।
यो महान पदवी धरौ, तुम पूजत हूं एव ॥ ४२२ ॥
ओं ह्रीं महादेवाय नमः अर्घं ।

शिवमारग तुममें सही, देव पूजने योग ।
तुम गुण है सहचारणी, और कुदेव अयोग ॥ ४२३ ॥

ओं ह्रीं देवाय नमो अर्घं ।

तीन लोक पूजत चरण, तुम आज्ञा शिर धार ।
त्रिभुवन ईश्वर हो सही, मैं पूजूं निरधार ॥ ४२४ ॥

ओं ह्रीं भुवनेश्वराय नमः अर्घं ।

विश्वपती तुमको नमें, नित कल्याण विचार ।
सर्व विश्वके तुम पती, मैं पूजूं उर धार ॥ ४२५ ॥

ओं ह्रीं विश्वेशाय नमः अर्घं ।

जगत जीव कल्याण कर, लोकालोक अनन्द ।
षट्कायक आह्लादकर, जिम कुमोदनी चन्द ॥ ४२६ ॥

ओं ह्रीं विश्वभूतेशाय नमः अर्घं ।

इन्द्रादिक जे विश्वपति, तुमको पूजत आन ।
यातें तुम विश्वेश हो, सांच नमूं धर ध्यान ॥ ४२७ ॥

ॐ ह्रीं विश्वेशाय नमः अर्घं ।

विश्व बन्ध दृढ तोड़के, विश्व शिखर ठहराय ।
चरण कमल तल जगत है, यूं सब पूजत पाय ॥ ४२८ ॥
ॐ ह्रीं विश्वेश्वराय नमः अर्घं ।

शिव मारगकी रीति तुम, बरतायो शुभ योग ।
तिहूं काल तिहूं लोकमें, और कुनीति अयोग ॥ ४२९ ॥
ॐ ह्रीं अधिराज्ञे नमः अर्घं ।

लोक तिमिर हर सूर्य हो, तारण लोक जिहाज ।
लोकशिखर राजत प्रभू, मैं बन्दूं हित काज ॥ ४३० ॥
ओं ह्रीं लोकेश्वराय नमः अर्घं ।

तीन लोक प्रतिपाल हो, तीन लोक हितकार ।
तीन लोक तारण तरण, तीन लोक सरदार ॥ ४३१॥
ओं ह्रीं लोकपते नमः अर्घं।

लोक पूज्य सुखकार हो, पूजत हैं हित धार ।

मैं पूजों नित भावसों, करो भवार्णव पार ॥ ४३२ ॥
ओं ह्रीं लोकनाथाय नमो अर्घं ।

पूजनीक जगमें सही, तुम्हैं कहैं सब लोग ।
धर्म मार्ग प्रगटित कियो, यातें प्रजत योग ॥ ४३३ ॥
ॐ ह्रीं जगत्पतये नमः अर्घं ।

ऊरध अधो सु मध्य है, तीन भाग यह लोय ।
तिनमें तुम उतकृष्ट हो, तुम्हैं देत नित धोक ॥ ४३४ ॥
ओं ह्रीं त्रिलोकनाथाय नमः अर्घं ।

तुम समान समरथ नहीं, तीन लोकमें और ।
स्वयं शिवालय राजते, स्वामी हो शिरमोर ॥ ४३५ ॥
ॐ ह्रीं लोकेशाय नमः अर्घं ।

जगत नाथ जग ईश हो, जगपति पूजें पाय ।
मैं पूजूं नित भाव युत, तारण तरण सहाय ॥ ४३६ ॥

ओं ह्रीं जगन्नाथाय नमः अर्घं ।

मह्रा भूत इस जगतमें, धारत हो निरभंग ।
सब विभूति जग जीतिकै, पायो सुख सरवंग ॥

ओं ह्रीं जगत्प्रभवे नमो अर्घं । ४३७ ।

मुनि मन करण पवित्र हो, सब विभावको नाश ।
तुमको अंजुलि जोरकर, नमूं होत अघ नाश ॥

ओं ह्रीं पवित्राय नमो अर्घं । ४३८ ।

मोक्ष रूप परधान हो, ब्रह्मज्ञान परवीन ।
वंध रहित शिव–सुख सहित, नमें संत आधीन ॥

ओं ह्रीं पराक्रमाय नमः अर्घं । ४३९ ।

जामें जन्म मरण नहीं, लोकोत्तर कियो वास ।
अचल सुथिर राजै सदा, निजानन्द परकाश ॥

ओं ह्रीं परनाय नमः अर्घं । ४० ।

मोहादिक रिपु जीतिके, विजयवन्त कहलाय ।
जैत्र नाम परसिद्ध है, बन्दूं तिनके पाय ।

ॐ ह्रीं जैत्राय नमः अर्घं । ४४१ ।

रक्षक हो षट् कायके, कर्म शत्रु क्षयकार ।
निजग लक्ष्मी नाथ हो, मैं पूजूं सुखकार ।

ओं ह्रीं जिष्णवे नमो अर्घं । ४४२ ।

करता हो विधि कर्मके, हरता पाप विशेष ।
पुन्य पाप सु विभाग कर, भ्रम नहीं राखो लेश ।

ओं ह्रीं कर्त्रे नमः अर्घं । ४४३ ।

स्वानन्द ज्ञान विनाश विन, अचल सुथिर रहै राज ।
अविनाशी अविकार हो, बन्दूं निज हित काज ।

ओं ह्रीं अविनश्वराय नमः अर्घं । ४४४ ।

इन्द्रादिक पूजत चरन, महा भक्ति उर धार ।

तुम महान ऐश्वर्यको, धारत हो अधिकार ।

ॐ ह्रीं प्रभविष्णवे नमः अर्घं । ४४५ ।

गुण समूह गुरुता धरै, महा भाग सुख रूप ।
तीन लोक कल्याण कर, पूजूं हूं शिव भूप ।

ओं ह्रीं भ्राजिष्णवे नमो अर्घं । ४४६ ।

महा विभवको धरत हैं, हितकारण सितकार ।
धर्मनाथ परमेश हो, पूजत हूं सुखकार ।

ओं ह्रीं प्रभूष्णवे नमो अर्घं । ४४७ ।

विन कारण असहाय हो, स्वयं प्रभा अविरुद्ध ।
तुमको बन्दूं भावसों, निज आतम कर शुद्ध ।

ओं ह्रीं स्वयंप्रभाय नमो अर्घं । ४४८ ।

लोकवासको नाश कर, लोक सम्बन्ध निवार ।
अचल विराजै शिवपुरी, पूजत हूं उर धार ।

ॐ ह्रीं लोकजिते नमो अर्घं । ४४९ ।

विश्व नाम संसार है, जन्म मरण सो होय ।
सोई व्याधि विनासियो, जजूं जोर कर दोय ।

ओं ह्रीं विश्वजिते नमो अर्घं । ४५० ।

विश्व कषाय निवारके, जग सम्बन्ध विनाश ।
जनम मरण विनु ध्रुव लसै, नमूं ज्ञान परकाश ।

ओं ह्रीं विश्वजैत्रे नमो अर्घं । ४५१ ।

विश्व वास तुम जीतियो, विश्व नमावै शीश ।
पूजत हैं हम भक्तिसों, जयवन्तो जगदीश ॥ ४५२ ॥

ॐ ह्रीं विश्वजिते नमः अर्घं ।

इन्द्रादिक जिनको नमें, ते तुम शीश नवाय ।
विश्वजीत तुम नाम हैं, शरणागत सुखदाय ॥ ४५३ ॥

ॐ ह्रीं विश्वजित्वराय नमः अर्घं ।

तीन लोककी लक्ष्मी, तुम चरणांबुज ठौर ।
यातैं सब जग जीतिके, राजत हो शिर मौर ॥ ४५४ ॥

ॐ ह्रीं जगज्जेत्रे नमः अर्घं ।

तीन लोक कल्याण कर, कर्मशत्रुको जीत ।
भव्यन प्रति आनन्द कर, मेटत तिनकी भीति ॥ ४५५ ॥

ॐ ह्रीं जगज्जिष्णवे नमः अर्घं ।

जग जीवनको अन्ध कर, फैलो मिथ्या घोर ।
धर्म मार्ग प्रगटाय कर, पहुंचायो शिव ठौर ॥ ४५६ ॥

ॐ ह्रीं जगन्नेत्राय नमः अर्घं ।

मोहादिक जिन जीतियो, सोई जगजय नाम ।
सो तुम पद पायो महा, तुम पद करूं प्रणाम ॥ ४५७ ॥

ॐ ह्रीं जगज्जयाय नमः अर्घं ।

जो तुम धर्म न प्रगट करि, जिय आनन्द न होय ।

अग्र भये कल्यान कर, तुम पद प्रणमूं सोय ॥ ४५८ ॥

ॐ ह्रीं अग्रण्ये नमः अर्घं ।

रक्षा करि पट कायकी, विषय कषाय न लेश ।
त्रास हरो जमराजको, जयवन्तो गुण शेष ॥ ४५९ ॥

ओं ह्रीं दयामूर्तये नमः अर्घं ।

सत्य असत्य लखन करै, सोई नेत्र कहाय ।
पुद्गल नेत्र न नेत्र हो, सांचे नेत्र सुखाय ॥ ४६० ॥

ॐ ह्रीं दिव्यनेत्राय नमः अर्घं

सुरनर मुनि आज्ञानितें, जानैं निज कल्याण ।
ईश्वर हो सब जगतके, आनन्द सम्पति खान ॥ ४६१ ॥

ॐ ह्रीं अधीश्वराय नमः अर्घं ।

धर्म्माभास मनोक्तके, मूल नाश कर दीन ।
सत्य मार्ग बतलाइयो, कियो भव्य सुख लीन ॥ ४६२ ॥

ॐ ह्रीं धर्म्मनायकाय नमः अर्घं ।

ऋद्धिनमें परसिद्ध है, केवल ऋद्धि महान ।
सो तुम पायो सहज ही, योगीश्वर मुनि मान ॥ ४६३ ॥

ॐ ह्रीं ऋद्धीशाय नमः अर्घं ।

जो प्राणी संसारमें, तिन सबके हितकार ।
आनन्दसों सब नमत हैं, पावैं भवदधि पार ॥ ४६४ ॥

ओं ह्रीं भूतनाथाय नमः अर्घं ।

प्राणिनके भरतार हो, दुख टारन सुखकार ।
तुम आश्रय करि जीव सब, आनन्द लहै अपार ॥ ४६५ ॥

ओं ह्रीं भूतभर्त्रे नमः अर्घं ।

सत्य धर्मके मार्ग हो, ज्ञान मात्र निरशंस ।
तुम ही आश्रय पायके, रहै न अघको अंश । ४६६

ओं ह्रीं जगत्पतये नमः अर्घं ।

अतुल वीर्य स्वशक्ति हो, जीते कर्म जरार।
तुम सम बल नहीं और है, हो असहाय अवार। ४६७।
ओं ह्रीं याजसे नमः अर्घं।

धर्म मूर्ति धरमातमा, धर्म तीर्थ वरताय।
स्वे सुभाव सो धर्म है, पायो सहज उपाय। ४६८।
ओं ह्रीं वृषाग नमः अर्घं।

हिंसाको वर्जित कियो, जे अपराध महान।
परिग्रह अर आरंभके, त्यागी श्री भगवान। ४६९।
ओं ह्रीं परिग्रहत्यागीजिनाय नमः अर्घं।

सर्व सिद्ध तुम सुलभ कर, पायो स्वयं उपाय।
सांचें हो वश करणको, जगमें मंत्र कहाय। ६७०।
ॐ ह्रीं मंत्रकृते नमः अर्घं।

जितने कछु शुभ चिह्न हैं, दीस अनोख स्वरूप।

शुभ लक्षण सोहत अति, सहजे तुम शिवभूप । ४७१ ।

ॐ ह्रीं शुभलक्षणाय नमः अर्घं ।

लोकविषै तुम मार्गको, मानत है बुधवन्त ।
तर्क हेतु करुणा लिये, यातैं माने सन्त । ४७२ ।

ओं ह्रीं लोकाध्यक्षाय नमः अर्घं ।

काहूके वशमें नहीं, काहू नमत न शीश ।
कठिन रीति धारै प्रभू, नमूं सदा जगदीश ॥ ४७३ ॥

ओं ह्रीं दुरोध्रष्टाय नमः अर्घं ।

दासनिके प्रतिपाल कर, शरणागति हितकार ।
भवि दुखियनको पोषकर, दियो अखै पद सार । ४७४ ।

ओं ह्रीं भृत्यबन्धवे नमः अर्घं ।

निराकरण करि कर्मको, सरल सिद्ध गति धार ।

४३३

शिव थल जाय सुवास लहि, धर्म द्रव्य सहकार। ४७५।

ओं ह्रीं निस्तमस्काय नमः अर्घं।

मुनि ध्यावै पावै सुपद, निकट भव्य धरि ध्यान।

पावे निज कल्याण नित, ध्यान योग तुम मान। ४७६।

ओं ह्रीं परमध्येयजिनाय नमः अर्घं।

रक्षक हो जगके सदा, धर्म दान दातार।

पोषित हो सब जीवके, बन्दूं भाव लगार। ४७७।

ओं ह्रीं जगत्तापहराय नमः अर्घं।

मोह प्रचंड बली जयो, अतुल वीर्य भगवान।

शीघ्र गमन करि शिव गये, नमूं हेत कल्याण। ४७८।

ओं ह्रीं अतिजयाय नमः अर्घं।

तीन लोक शिर मोर सब, पूजत हैं हरषाय।

परमेश्वर हो जगतके, वंदत हूं नित पाय। ४७९।

ओं ह्रीं त्रिजगत्परमेश्वराय नमः अर्घं।

लोकशिखरपर अचल नित, राजत हैं तिहुं काल।
सर्वोत्तम आसन लियो, लोक शिरोमणि भाल। ४८०।

ओं ह्रीं विश्वात्मने नमः अर्घं।

विश्वभूति प्राणीनके, ईश्वर हैं भगवान।
सबके शिरपर पग धरैं, सर्व आन तिन मान। ४८१।

ओं ह्रीं विश्वभूतेशाय नमः अर्घं।

मोक्ष संपदा होत ही, नित अक्षय ऐश्वर्य।
कौन मूढ़ कौड़ी लहै, सर्वोत्तम धनवर्य। ४८२।

ओं ह्रीं विभवाय नमः अर्घं।

त्रिभुवन ईश्वर हो तुम्हीं, और जीव हैं रंक।
तुम तज चाहै औरको, ऐसो को बुध बंक। ४८३।

ओं ह्रीं त्रिभुवनेश्वराय नमः अर्घं।

उत्तरोत्तर तिहूं लोकमें, दुर्लभ लब्धि कराय ।
तुम पद दुर्लभ कठिन है, महा भाग सो पाय । ४८४ ।

ओं ह्रीं त्रिजगदुर्लभाय नमः अर्घं ।

बढवारी परणामसों, अभ्युदय पूरण पाय ।
भई अनन्त विशुद्धता, भये विशुद्ध अथाय । ४८५ ।

ओं ह्रीं अभ्युदयाय नमः अर्घं ।

तीन लोक मंगल करण, दुखहारण सुखकार ।
हमको मंगल द्यो महा, पूजों वारम्वार । ४८६ ।

ओं ह्रीं त्रिजगन्मंगलोदयाय नमः अर्घं ।

आप धर्मके सामने, और धर्म लुप जाय ।
धर्म चक्र आयुध धरो, शत्रु नाश तव पाय । ४८७ ।

ओं ह्रीं धर्मचक्रायुधाय नमः अर्घं ।

सत्य शक्ति तुम ही सही, सत्य पराक्रम जोर ।

है प्रसिद्ध इस जगतमें, कर्म शत्रु शिरमोर । ४८८ ।

ओं ह्रीं सद्योजाताय नमः अर्घं ।

मंगलमय मंगल करण, तीन लोक विख्यात ।
सुमरण ध्यान सुकरत ही, सकल पाप नश जात ॥ ४८९ ॥

ओं ह्रीं त्रिलोकमंगलाय नमः अर्घं ।

द्रव्य भाव दऊ वेद विन, स्वातम रति सुख मान ।
पर आलिंगन रतिकरण, निरइच्छक भगवान ॥ ४९० ॥

ओं ह्रीं अवेदाय नमः अर्घं ।

घातिरहित स्वपर दया, निजानन्द रसलीन ।
सुखसों अवगाहन करैं, सन्त चरण आधीन ॥ ४९१ ॥

ओं ह्रीं अप्रतिघाताय नमः अर्घं ।

निजानन्द स्वैदेशमें, खंड खंड नहीं होय ।
पूरण अविनाशी सुखी, पूजत हूं भ्रम खोय ॥ ४९२ ॥

ओं ह्रीं अछेद्याय नमः अर्घं ।

सिद्ध समान सु शुभ नहीं, और नाम विख्यात।
कभू न जगमें जन्म फिर, सोई दृढ़ कहलात ॥ ४९३ ॥

ओं ह्रीं द्रढ़ीयसे नमः अर्घं ।

जन्म मरणके कष्टसे, सर्व लोक भयवंत।
ताको नाश अभय करण, तुम्हें नमें जिय संत ॥ ४९४ ॥

ओं ह्रीं अभयंकराय नमः अर्घं ।

ज्ञानानन्द स्व लक्ष्मी, भोगत हो निरखेद।
महा भोग यातें भये, हैं स्वाधीन अखेद ॥ ४९५ ॥

ओं ह्रीं महाभोगाय नमः अर्घं ।

असाधारण असमान हो, सर्वोत्तम उतकृष्ट।
परसों भिन्न अखिन्न हो, पायो पद अविनष्ट। ४९६ ।

ॐ ह्रीं निरुपमसुखस्वरूपाय नमः अर्घं ।

दश लक्षण शुभ धर्मके, राजसम्पदा भोग।
नायक हो जिन धर्मके, पूज नमैं तिहूं योग। ४९७ ।

ओं ह्रीं धर्मसाम्राज्यनायकाय नमः अर्घं ।

अधिपति स्वामि स्वभाव निज, पर कृत भाव विडार ।
तिहुं वेद रति मान विन, संपूरण सुखकार । ४९८ ।

ओं ह्रीं निर्वेदप्रवृत्ताय नमः अर्घं ।

यथायोग्य पद पाइयो, यथायोग्य संपूर्ण ।
नमूं त्रियोग संभारिके, करूं पाप मल चूर्ण । ४९९ ।

ओं ह्रीं संपूर्णयोगिने नमः अर्घं ।

सव इंद्रिय मन रोकके, आरोहण तिस भाव ।
श्रेणी उच्च चढ़ावमें, तत्पर अंत सु पाव । ५०० ।

ओं ह्रीं समारोहणतत्पराय नमः अर्घं ।

एकाश्रय निज धर्ममें, परसों भिन्न सदीव ।
सहज स्वभाव विराजते, सिद्धराज सब जीव । ५०१ ।

ओं ह्रीं सामायिकाय नमः अर्घं ।

राग द्वेष विन सहज ही, राजत शुद्ध स्वभाव ।

मन विकल्प नहीं भावमें, पूजत हों धरि चाव । ५०२ ।

ओं ह्रीं सामायिकिने नमः अर्घं ।

निजानन्द स्वै लक्ष्मी, भोगत ग्लानि न होय ।

अतुल वीर्य परभावतैं, परमादी नहीं होय । ५०३ ।

ओं ह्रीं निष्प्रमादाय नमः अर्घं ।

है अनादि संतान करि, कभी भयो नहीं आदि ।

नित्य शिवालय पूर्णता, बसै जगत अघ वादि ॥ ५०४ ॥

ॐ ह्रीं अकृताय नमः अर्घं ।

पर पदार्थ नहीं इष्ट हैं, स्वैंपदमें लवलीन ।

विघ्न हरण मंगल करण, तुम पद मस्तक दीन ॥ ५०५ ॥

ओं ह्रीं परमभावाय नमः अर्घं ।

नित्य शौच संतोष मय, पर पदार्थसों रोक ।

निश्चय सम्यक् भाव मय, है प्रधान यूं धोक ॥ ५०६ ॥

ओं ह्रीं प्रधानाय नमः अर्घं ।

ज्ञान ज्योति स्वै धरत हो, निश्चल परम सु ठाम ।
लोकालोक परकाश कर, मैं बन्दूं सुख धाम ॥ ५०७ ॥

ॐ ह्रीं स्वभामपरभासनाय नमो अर्घं ।

एक स्थान सु थिर सदा, निश्चय चारित भूप ।
शुद्ध उपयोग प्रभावतें, कर्म खिपावन रूप ॥ ५०८ ॥

ओं ह्रीं प्राणायामचरणाय नमः अर्घं ।

विषय स्वादसों हट रहैं, इन्द्री मन थिर होय ।
निज आतम लवलीन हैं, शुद्ध कहावैं सोय । ५०९ ।

ॐ ह्रीं शुद्धप्रतीहाराय नमः अर्घं ।

इन्द्री विषयन वश रहै, स्वै आतम लवलाय ।
हो जितेन्द्र स्वाधीन हैं, बन्दूं तिनके पाय ॥ ५१० ॥

ओं ह्रीं जितेन्द्रियाय नमः अर्घं ।

ध्यान विषैं सो धारणा, निज आतम थिर धार ।
ताके अधिपति हो महा, भये भवार्णव पार ॥ ५११ ॥

ओं ह्रीं धारणाधीश्वराय नमः अर्घं ।

रागादिक मल नाशिके, ध्यान सु धर्म लहाय ।
अचल रूप राजे सदा, वन्दूं मन वच काय ॥ ५१२ ॥

ॐ ह्रीं धर्मध्याननिष्ठाय नमः अर्घं ।

निजानन्दमें मगन हैं, पर पद राग निवार ।
समदृष्टी राजत सदा, हमें करो भव पार । ५१३ ।

ओं ह्रीं समाधिराजाय नमः अर्घ ।

वीतराग निर्विकल्प हैं, ज्ञान उदय निरशंस ।
समरस भाव परम सुखी, नमत मिटैं दुख अंश । ५१४ ।

ॐ ह्रीं स्फुरितसमरसीभावाय नमः अर्घं ।

एकै रूप विराजते, नय विकल्प नहिं ठौर ।
वचन अगोचर शुद्धता, पाप विनाशो मोर । ५१५ ।

ओं ह्रीं एकीभावनयरूपाय नमः अर्घं ।

परम दिगम्बर मुनि महा, समदृष्टी मुनिनाथ ।

ध्यावै पावै परम पद, नमूं जोर जुग हाथ। ५१६।

ओं ह्रीं निर्ग्रन्थनाथाय नमः अर्घं।

योग साधि योगी भये, तिनके इन्द्र महान।
ध्यावत पावत परम पद, पूजत निज कल्याण। ५१७।

ओं ह्रीं योगींद्राय नमः अर्घं।

शिव मारग सिद्धांतके, पार भये मुनि ईश।
तारण तरण जिहाज हो, तुम्हैं नमूं नित शीश। ५१८।

ॐ ह्रीं ऋषये नमः अर्घं।

निज स्वरूपको साधिकर, साधु भये जग माहिं।
निजपर हितकर गुण धरैं, तीन लोक नमि ताहि। ५१९।

ओं ह्रीं साधवे नमः अर्घं।

रागादिक रिपु जीतिके, भये यती शुभ नाम।
धर्म धुरंधर परम गुरु, जुगपद करूं प्रणाम। ५२०।

ओं ह्रीं युगपते नमः अर्घं।

पर संपतिसूं विमुख हो, स्वै पद रुचि करि नेम।
मुनि मन रंजन पद महा, तुम धारत हो एम। ५२१।

ओं ह्रीं मुनये नमः अर्घं

महाश्रेष्ठ मुनिराज हो, स्वै पद पायो सार।
महा परम निरग्रंथ हो, पूजत हूं मन धार॥ ५२२॥

ओं ह्रीं महर्षिणे नमः अर्घं।

साधु भार दुर गमन है, ताहि उठावन हार।
शिव-मंदिर पहुंचात हो, महाबली सुखकार। ५२३।

ओं ह्रीं साधुधोरेयाय नमः अर्घं।

इन्द्री मन जित जे जती, तिनके हो तुम नाथ।
परम्परा मरजाद धर, देहु हमें निज साथ। ५२४।

ॐ ह्रीं यतीनाथाय नमः अर्घं।

चार संघ मुनिराजके, ईश्वर हो परधान।
पर हितकर सामर्थ्य हो, निज सम करि भगवान। ५२५।

ओं ह्रीं मुनीश्वराय नमः अर्घं ।

गणधरादि सेवक महा, तिन आज्ञा शिरधार ।
समकित ज्ञान सु लक्ष्मी, पावत हैं निरधार ॥ ५२६ ॥

ओं ह्रीं महामुनये नमः अर्घं ।

महामुनी सर्वस्व हो, धर्म मूर्ति सरवांग ।
तिनको बन्दूं भाव युत, पाऊं मैं धर्मांग ॥ ५२७ ॥

ओं ह्रीं महामौनये नमः अर्घं ।

इष्टानिष्ट विभाव विन, समदृष्टी स्वध्यान ।
मगन रहे निज पद विषैं, ध्यान रूप भगवान ॥ ५२८ ॥

ओं ह्रीं महाध्यानपतये नमः अर्घं ।

स्व सुभाव नहीं त्याग है, नहीं ग्रहण पर माहिं ।
पाप कलाप न आपमें, परम शुद्ध नमूं ताहि ॥ ५२९ ॥

ॐ ह्रीं महाव्रतये नमः अर्घं ।

क्रोध प्रकृति विनाशके, धरे क्षमा निज भाव ।
समरस स्वादसु लहत है, वन्दूं शुद्ध स्वभाव ॥ ५३० ॥

ओं ह्रीं महाक्षमाय नमः अर्घं ।

मोह रूप सन्ताप विन, शीतल महा स्वभाव ।
पूरण सुख आकुल नहीं, वन्दूं मन धर चाव ॥

ॐ ह्रीं महाशीतलाय नमः अर्घं ॥ ५३१ ॥

मन इन्द्रियके क्षोभ विन, महा शांति सुखरूप ।
स्वैपद रमण स्वभाव नित, मैं वन्दूं शिवभूप ॥

ॐ ह्रीं महाशांताय नमः अर्घं ॥ ५३२ ॥

मन इन्द्रियको दमन कर, पायो ज्ञान अतीन्द्र ।
स्वाभाविक स्वशक्ति कर, वन्दूं भये जितेन्द्र ॥

ओं ह्रीं महोदयाय नमो अर्घं ॥ ५३३ ॥

पर पदार्थको क्लेश तजि, व्यापै निज पद माहिं ।

स्वच्छ स्वभाव विराजते, पूजत हूं निल ताहि ॥

ओं ह्रीं निर्लेपाय नमो अर्घं ॥ ५३४ ॥

संशयादि दृष्टी नहीं, सम्यक ज्ञान मझार ।

सब पदार्थ प्रत्यक्ष लख, महा तुष्ट सुखकार ॥

ॐ ह्रीं निर्भ्रांताय नमो अर्घं ॥ ५३५ ॥

शांतिरूप निज शांति गुण, सो तुमहीमें पाय ।

निज मन शांति सुभाव धर, पूजत हूं युग पाय ।

ओं ह्रीं प्रशांताय नमः अर्घं ॥ ५३६ ॥

मुनि श्रावक द्वै धर्मके, तुम अधिपति शिवनाथ ।

भविजनको आनंद करि, तुम्हैं नवाऊं माथ ॥

ओं ह्रीं धर्माध्यक्षाय नमः अर्घं ॥ ५३७ ॥

दया नीति बरताइयो, सुखी किये जगजीव ।

कल्पित राग असत नहीं, जानत मार्ग सदीव ॥

ॐ ह्रीं दयान्वजाग नमः अर्घं ॥ ५३८ ॥

केवल ब्रह्म स्वरूप हो, अन्तर बाह्य अदेह ।
ज्ञान ज्योति घन नमत हूं, मन वच तन धरि नेह ॥

ॐ ह्रीं ब्रह्मयोनये नमो अर्घं ॥ ५३९ ॥

स्वयं बुद्ध अविरुद्ध हो, स्वयं ज्ञान परकाश ।
स्वे परभाव दिखात हो, दीपक सम प्रतिभास ॥

ओं ह्रीं स्वयंबुद्धा नमो अर्घं ॥ ५४० ॥

रागादिक मल नाशियो, महापवित्र सुखाय ।
शुद्ध स्वभाव धरै करै, सुरनर थुति न अघाय ॥

ओं ह्रीं पूतात्मने नमः अर्घं ॥ ५४१ ॥

वीतराग श्रद्धानता, संपूरण वैराग ।
द्वेष रहित शुभ गुण सहित, रहूं सदापग लाग ।

ओं ह्रीं स्नातकाय नमः अर्घं ॥ ५४२ ॥

माया मद आदिक हरे, भये शुद्ध सुख खान।
निर्मल भाव थको जजूं, होत पापकी हान ॥

ओं ह्रीं अमदभावाय नमः अर्घ ॥ ५४३ ॥

अतुल वीर्य जा ज्ञानमें, सूर्य समान प्रकाश।
मोक्ष नाथ निज धर्म जुत, स्व ऐश्वर्य विलास ॥

ओं ह्रीं परमैश्वर्याय नमः अर्घं ॥ ५४४ ॥

मत्सर क्रोध न ईरषा, परमें द्वेष सु भाव।
सो तुम नाशो सहज ही, निंदित दुखित विभाव।

ॐ ह्रीं वीतमत्सराय नमः अर्घं ॥ ५४५ ॥

धरम भार सिर धारकर, समाधान परकाज।
तुम सम श्रेष्ठ न धर्म अरु, तारण तरण जिहाज।

ओं ह्रीं धर्मवृषाय नमः अर्घ ॥ ५४६ ॥

क्रोध कर्म जडसै नसौ, भयो क्षोभ सब दूर ।
महा शांति सुखरूप हो, पूजत अघ सब चूर ।

ओं ह्रीं अक्षोभाय नमः अर्घं ॥ ५४७ ॥

इष्टमिष्ट बादर झरी, विद्युत विध कर खण्ड ।
जिष्णु महा कल्याण कर, शिवमग भाग प्रचण्ड ।

ओं ह्रीं महाविधिखण्डाय नमः अघ ॥ ५४८ ॥

अमृतमय तुम जन्म है, लोक तुष्टताकार ।
जन्मकल्याणक इन्द्र कर, क्षीर नीर कर धार ।

ओं ह्रीं अमृतोद्भवाय नमः अर्घं ॥ ५४९ ॥

इन्द्री विषय सुविषहरण, काम पिशाच विडार ।
मूर्तीक शुभ मंत्र हो, देव जजैं हित धार ।

ओं ह्रीं मंत्रमूर्तये नमः अर्घं ॥ ५५० ॥

सौम्य दिशा परगट तनी, जाति विरोधी जीव ।

वैर छांड समभाव धर, सेवत चरण सदीव ।

ओं ह्रीं निर्वैरसौम्यभावाय नमो अर्घं ॥ ५५१ ॥

पराधीन इन्द्री विना, राग विरोध निवार ।
हो स्वाधीन न कर्णपर, स्वयं सिद्ध सुखकार ।

ओं ह्रीं स्वतंत्राय नमः अर्घं ॥ ५५२ ॥

ब्रह्मरूप नहीं बाह्य तन, संभव ज्ञान स्वरूप ।
स्वयं प्रकाश विलास धर, राजत अमल अनूप ।

ओं ह्रीं ब्रह्मसम्भवाय नमः अर्घं ॥ ५५३ ॥

आनंदधार सु मगन है, सव विकल्प दुख टार ।
पर आश्रित नहीं भाव है, पूजूं आनंद धार ।

ओं ह्रीं महाप्रसन्नाय नमः अर्घं ॥ ५५४ ॥

परिपूरण गुण सीम है, सर्व शक्ति भण्डार ।
तुमसे सुगुण न शेष हैं, जो न होय सुखकार ॥

ओं ह्रीं गुणांबुधये नमः अर्घं ॥ ५५५ ॥

ग्रहण त्यागको भाव तज, शुभ वा अशुभ अभेद ।
व्याधिकार है वस्तुमें, तुमें नमूं निरखेद ॥

ओं ह्रीं पुन्यपापनिरोधकाय नमः अर्घं ॥ ५५६ ॥

सूक्षम रूप अलक्ष है, गणधर आदि अगम्य ।
आप गुप्त परमातमा, इन्द्रिय द्वार अरम्य ॥

ओं ह्रीं अर्हं महाअगम्यसूक्ष्मरूपाय नमः अर्घं ॥ ५५७ ॥

अन्तरगुण स्वै आत्मरस, ताको पान करात ।
पर प्रवेश नहीं रंच है, केवल मग्न सु जात ॥

ॐ ह्रीं सुगुप्तात्मने नमः अर्घं ॥ ५५८ ॥

स्वै कारक स्वै कर्णकर, स्वै पद स्वै आधार ।
सिद्ध कियो स्वै रस लियो, पूजत हैं हितकार ।

ओं ह्रीं सिद्धात्मने नमः अर्घं । ५५९ ।

नित्य उदै विन अस्त हो, पूरण दुति घन आप ।
ग्रहै न राहू जास शशि, सो हो हर सन्ताप ।

ओं ह्रीं निरुपप्लवाय नमः अर्घं । ५६० ।

लियो अपूरव लाभको, अचल भये सुखधाम ।
पूज रचैं जे भावसों, पूरण होइ सब काम ॥

ओं ह्रीं महोदर्काय नमो अर्घं । ५६१ ।

है प्रशंस तिहुं लोकमें, तुम पुरुषार्थ उपाय ।
पायो पर्म सु धामको, पूजों तिनके पाय ॥

ॐ ह्रीं महोपायाय नमः अर्घं । ५६२ ।

गणधरादि जे जगतपति, तथा सुरेन्द्र सुरीश ।
तुमको पूजत भक्तिकरि, चरण धरैं निज शीश ॥

ओं ह्रीं जगत्पितामहाय नमः अर्घं । ५६३ ।

तुमहीसों भवि सुख लहै, तुम विन दुख ही पाय ।

नेमरूप यह हेतु है, महोनाम इमगाय ॥

ओं ह्रीं महाकारणाय नमः अर्घं । ५६४ ।

महा सुगुणकी रास हो, राजत हो गुण रूप ।
लौकिक गुण औगुण सही, सब ही द्वेष सरूप ॥

ओं ह्रीं शुद्धगुणाय नमः अर्घं । ५६५ ।

जन्म मरण आदिक महा, क्लेश ताहि निरवार ।
परम सुखी तुमको नमूं, पाऊं भवदधि पार ॥

ओं ह्रीं महाक्लेशनिवारणाय नमः अर्घं । ५६६ ।

रागादिक नहीं भाव है, द्रव्य देह नहीं धार ।
दोऊ मलिनता छांडिके, स्वच्छ भये निरधार ॥ ५६७ ॥

ओं ह्रीं महाशुचये नमः अर्घं ।

आधि व्याधि नहीं रोग है. नित प्रसन्न निज भाव ।
आकुलता विन शांति सुख, धारत सहज सु भाव ॥ ५६८ ॥

ओं ह्रीं अरुजाय नमः अर्घं ।

यथायोग्य पद थिर सदा, यथायोग्य निज लीन ।
अविनाशी अविकार है, नमैं सन्त नित दीन ॥ ५६९ ॥

ॐ ह्रीं सदायोगाय नमः अर्घं ।

स्वामृत रसको पान करि, भोगत हैं निज स्वाद ।
पर निमित्त चाहैं नहीं, करै न तिनको याद ॥ ५७० ॥

ओं ह्रीं सदाभोगाय नमः अर्घं ।

निर उपाधि निज धर्ममें, सदा रहैं सुखकार ।
रत्नत्रयकी मूरती, अनागार आगार ॥ ५७१ ॥

ओं ह्रीं सदाधृतये नमः अर्घं ।

रागद्वेष नहीं मूल है, है मध्यस्थ स्वभाव ।
ज्ञाता द्रष्टा जगतके, परसों नहीं लगाव ॥ ५७२ ॥

ओं ह्रीं परमौदासीनाय नमः अर्घं ।

आदि अन्त विन वहत है, परम धार निरधार ।
अन्तर परत न एक छिन, निज सुख परमाधार ॥ ५७३ ॥
ओं ह्रीं शाश्वते नमः अर्घं ।

मूल देह आकृति रहै, हो नहिं अन्य प्रकार ।
सत्याशन इम नाम हैं, पूजूं भक्ति लगार ॥ ५७४ ॥
ॐ ह्रीं सत्याशने नमः अर्घं ।

परम शांति सुखमय सदा, क्षोभ रहित तिस स्वाम ।
तीन काल प्रति शांति कर, तुम पद करूं प्रणाम ॥ ५७५ ॥
ॐ ह्रीं शांतिनायकाय नमः अर्घं ।

काल अनंतानंत करि, रुल्यो जीव जगमांहिं ।
आतमज्ञान नहीं पाइयो, तुम पायो है ताहि ॥ ५७६ ॥
ओं ह्रीं अपूर्वविद्याय नमः अर्घं ।

यथाख्यात चारित्रको, जानो मानो भेद ।

आतमज्ञान केवल थकी, पायो पद निरभेद ॥ ५७७ ॥

ओं ह्रीं योगज्ञायकाय नमो अर्घं ।

धर्मरूप सर्वस्व हो, राजत शुद्ध स्वभाव ।
धर्ममूर्ति तुमको नमूं, पाऊं मोक्ष उपाव ॥ ५७८ ॥

ओं ह्रीं धर्ममूर्तये नमः अर्घं ।

स्व आतम परदेशमें, अन्य मिलाप न होय ।
आकृति है निज धर्मकी, निज विभावको खोय ॥ ५७९ ॥

ओं ह्रीं धर्मदेहाय नमः अर्घं ।

स्वामी हो निज आतमके, अन्य सहाय न पाय ।
स्वयं सिद्ध परमातमा, हम पर होउ सहाय ॥ ५८० ॥

ॐ ह्रीं ब्रह्मेशाय नमः अर्घं ।

निज पुरुषारथ करि लियो, मोक्ष परम सुखकार ।
करना था सो करि चुके, तिष्ठो सुख आधार ॥ ५८१ ॥

ओं ह्रीं कृतकृत्याय नमो अर्घं ।

असाधारण तुम गुण धरत, इन्द्रादिक नहीं पाय ।
लोकोत्तम बहु मान्य हो, बन्दूं हूं युग पाय ॥ ५८२ ॥

ओं ह्रीं गुणात्मकाय नमो अर्घं ।

तुम गुण परम प्रकाश कर, तीन लोक विख्यात ।
सूर्य समान प्रताप धर, निरावरण उघरात ॥ ५८३ ॥

ओं ह्रीं निरावरणगुणप्रकाशाय नमः अर्घं ।

समय मात्र नहीं आदि हैं, वहैं अनादि अनन्त ।
तुम प्रवाह इस जगतमें, तुम्हैं नमैं नित सन्त ॥ ५८४॥

ओं ह्रीं निर्निमेपाय नमः अर्घं ।

योग द्वार विन करम रज, चढै न निज परदेश ।
ज्यों विन छिद्र न जल ग्रहै, नवका शुद्ध हमेश ॥ ५८५ ॥

ओं ह्रीं निराश्रवाय नमो अर्घं ।

परम ब्रह्म पद पाइयो, पूरण ज्ञान प्रकाश।
तीन लोकके जीव सब, पूजें चरण निवास॥ ५८६॥
ओं ह्रीं महाब्रह्मपतये नमः अर्घं।

द्रव्य पर्यार्थिक नय दोऊ, साधत वस्तु स्वरूप।
गुण अनन्त अवरोध कर, कहत सरूप अनूप॥ ५८७॥
ॐ ह्रीं सुनयाय नमः अर्घं।

सूर्य समान प्रकाश कर, कर्म दुष्ट हनि सूर।
शरण गही तुम चरणकी, करो ज्ञान दुति पूरि॥ ५८८॥
ओं ह्रीं सूरये नमः अर्घं।

तुम सम और न जगतमें सत्यारथ तत्त्वज्ञ।
सम्यग्ज्ञान प्रभावतें, हो अदोष सर्वज्ञ॥ ५८९॥
ओं ह्रीं तत्त्वज्ञानाय नमो अर्घं।

तीन लोक हितकार हो, शरणागति प्रतिपाल।

भव्यनि मन आनन्द करि, बन्दूं दीनदयाल ॥ ५९० ॥
ॐ ह्रीं महामित्राय नमो अर्घं ।

समता सुखमें मगन हैं, राग द्वेष संक्लेश ।
ताको नाश सुखी भए, युग युग जयो जिनेश ॥ ५९१ ॥
ओं ह्रीं साम्यभावधारकजिनाय नमः अर्घं ।

निरावरण निज ज्ञानमें, संशय विभ्रम नाहिं ।
सम्यग्ज्ञान प्रकाशते, वस्तु प्रमाण दिखाय ॥ ५९२ ॥
ओं ह्रीं प्रक्षीणबन्धाय नमः अर्घं ।

एक रूप परकाश कर, दुविधि भाव विनशाय ।
पर निमित्त लवलेश नहीं, बन्दूं तिनके पाय ॥ ५९३ ॥
ॐ ह्रीं निर्द्वन्दाय नमो अर्घं ।

मुनि विशेष स्नातक कहै, परमातम परमेश ।
तुम ध्यावत निर्वाण पद, पावै भविक हमेश ॥ ५९४ ॥

ओं ह्रीं परमर्षये नमः अर्घं ।

पंच प्रकार शरीर बिन, दीस रूप निजरूप ।
सुर मुनि मन रमणीय हैं, पूजत हूं शिवभूप ॥

ॐ ह्रीं अनंगाय नमः अर्घं । ५६५ ।

द्वय प्रकार बन्धन रहित, बन्दूं मोक्ष सरूप ।
भविजन बन्ध विनाशकर, देहो मोक्ष अनूप ॥

ॐ ह्रीं निर्वाणाय नमः अर्घं । ५६६ ।

सुगुण रत्नकी राशके, आप महा भण्डार ।
अगम अथाह विराजते, बन्दूं भाव विचार ॥

ओं ह्रीं सागराय नमः अर्घं । ५६७ ।

मुनिजन ध्यावैं भावयुत, महा मोक्षपद साध ।
सिद्ध भये मैं नमत हूं, चहूं संघ आराध ॥

ओं ह्रीं महासाधवे नमो अर्घं । ५६८ ।

ज्ञान जोति प्रतिभासमें, रागादिक मल नाहिं।
विशद अनूपम लसत हो, दीप्त ज्योति शिव राह ॥
ओं ह्रीं विमलभावाय नमो अर्घं। ५९९।

द्रव्यभाव मल नाश कर, शुद्ध निरञ्जन देव।
निज आतममें रमत हो, आश्रय विन स्वयमेव ॥
ओं ह्रीं शुद्धात्मने नमः अर्घं। ६००।

शुद्ध अनन्त चतुष्ट गुण, धरत तथा शिवनाथ।
श्रीधर नाम कहात हो, हरिहर नावत माथ ॥
ॐ ह्रीं श्रीधराय नमः अर्घं। ६०१।

मरणादिक भयसे सदा, रक्षित है भगवान।
स्वयं प्रकाश बिलासमें, राजत सुखको खान ॥
ॐ ह्रीं मरणभयनिवारणाय नमः अर्घं। ६०२।

राग द्वेष नहीं भावमें, शुद्ध निरञ्जन आप।

ज्योंके त्यों तुम थिर रहो, तनक न व्यापै पाप ॥

ॐ ह्रीं विमलाभाय नमः अर्घं । ६०३ ।

भवसागरसे पार हो, पहुंचे शिवपद तीर ।
भाव सहित तिन नमत हूं, लहूं न फुनि भव पीर ॥

ॐ ह्रीं उद्धाराय नमः अर्घं । ६०४ ।

अग्निदेव वा अग्नि दिश, ताके देव विशेष ।
ध्यावत हैं तुम चरणयुग, इन्द्रादिक सुर शेष ॥

ॐ ह्रीं अग्निदेवाय नमः अर्घं । ६०५ ।

विषय कषाय न रंच है, निरावरण निरमोह ।
इन्द्री मनको नमन कर, बन्दूं सुन्दर सोह ॥

ॐ ह्रीं मोहविजयसंयमधारकजिनाय नमः अर्घं । ६०६ ।

मोहरूप कल्याण कर, सुख–सागरके पार ।
महादेव स्वशक्ति धर, विद्या तिय भरतार ।

ॐ ह्रीं शिवाय नमः अर्घं । ६०७ ।

पुष्प भेट धर जजत सुर, निजकर अंजुलि जोड़ ॥
कमलापति कर कमलमें, धरै लक्ष्मी होड़ ॥

ॐ ह्रीं पुष्पांजलये नमः अर्घं । ६०८ ।

पूरण ज्ञानानंद मय, अजर अमर अमलान ।
अविनाशी ध्रुव निखिल पद, अविकारी सब मान ।

ॐ ह्रीं शिवगुणाय नमः अर्घं । ६०९

रोग शोक भय आदि विन, राजत नित आनंद ।
खेद रहित रति अरति विन, विकसत पूरणचन्द्र ॥

ॐ ह्रीं परमोत्साहजिनाय नमः अर्घं । ६१० ।

जे गुण शक्ति अनंत हैं, ते सब ज्ञान मझार ।
एक मिष्ट आकृति विविध, सोहत हैं अविकार ॥

ॐ ह्रीं ज्ञानाय नमः अर्घं । ६११ ।

परम पूज्य परधान हैं, परम शक्ति आधार ।
परम पुरुष परमातमा, परमेश्वर सुखकार ॥

ॐ ह्रीं परमेश्वराय नमः अर्घं । ६१२ ।

दोष अपोष अरोष हो, सम सन्तोष अलोष ।
पंच परम पद धारियत, भविजनको परपोष ॥ ६१३ ।

ओं ह्रीं विमलेशाय नमः अर्घं ।

पंचकल्याणक युक्त हैं, समोशरण ले आदि ।
इन्द्रादिक नित करत हैं, तुम गुण गण अनुवाद ॥६१४।

ओं ह्रीं यशोधराय नमः अर्घं ।

कृष्ण नाम तीर्थेश हैं, भावी काल कहाय ।
सुमति गोपियन संग रमत, निज लीला दर्शाय ॥६१५।

ॐ ह्रीं कृष्णाय नमः अर्घं ।

सम्यग्ज्ञान समाधि धर, मिथ्या मोह निवार ।

पर हितकर उपदेश है, निश्चय वा व्यवहार ॥६१६।

ॐ ह्रीं मोहतिमिरविनाशकाय (ज्ञानपतये) नमः अर्घं ।

वीतराग सर्वज्ञ हैं, उपदेशक हितकार ।
सत्यारथ परमाण कर, अन्य सुमति दातार ॥६१७।

ओं ह्रीं सुमतये नमः अर्घं ।

मायाचार न शल्य है, शुद्ध सरल परिणाम ।
ज्ञानानन्द स्वलक्ष्मी, भोगत हैं अभिराम ।६१८।

ॐ ह्रीं भद्राय नमः अर्घं ।

शील स्वभाव सु जन्म लै, अन्त समय निरवाण ।
भविजन आनन्दकार हैं, सर्व कलुषता हान ॥६१९।

ओं ह्रीं शांतिजिनाय नमः अर्घं ।

धरम रूप अवतार हो, लोक पापको भार ।
मृतक स्थल पहुंचाइयो, सुलभ कियो सुखसार ॥६२०।

ॐ ह्रीं वृषभाय नमः अर्घं ।

अन्तर बाहिर शत्रुको, निमिष परै नहीं जोर ।
विजय लक्ष्मी नाथ हो, पूजूं हूं कर जोर ।६२१।

ॐ ह्रीं अजिताय नमः अर्घं ।

तीन लोक आनंद हो, श्रेष्ठ जन्म तुम होत ।
स्वर्ग मोक्ष दातार हो, पावत नहीं कुमोत ॥६२२।

ओं ह्रीं संभवाय नमः अर्घं ।

परम सुखी तुम आप हो, पर आनंद कराय ।
तुमको पूजत भावसों, मोक्ष लक्ष्मी पाय ॥६२३।

ओं ह्रीं अभिनन्दनाय नमो अर्घं ।

सब कुवादि एकांतको, नाश कियो छिन माहिं ।
भविजन मन संशय हरण, और लोकमें नाहिं ॥६२४।

ओं ह्रीं सुमतये नमः अर्घं ।

भविजन मधुकर कमल हो, धरत सुगन्ध अपार।
तीन लोकमें विस्तरी, सुयश नामकी धार।६२५।

ओं ह्रीं पद्मप्रभाय नमः अर्घं।

पारस लोहा हेम करि, तुम भव बंध निवार।
मोक्ष हेतु तुम श्रेष्ठ गुण, धारत हो हितकार॥६२६।

ॐ ह्रीं सुपार्श्वाय नमः अर्घं।

तीन लोक आताप हर, मुनि मन मोदन चन्द।
लोक प्रिय अवतार हो, पाऊं सुख तुम बन्द॥६२७।

ॐ ह्रीं चन्द्रप्रभाय नमः अर्घं।

मन मोहन सोहन महा, धारै रूप अनूप।
दरशत मन आनंद हो, पायो स्वै रस कूप॥६२८।

ओं ह्रीं पुष्पदंताय नमः अर्घं।

भव भव दाह निवार कर, शीतल भए जिनेश।

मानो अमृत सींचियो, पूजत सदा सुरेश ॥६२६।

ओं ह्रीं शीतलनाथाय नमः अर्घं ।

तीर्थंकर श्रेयांश हम, देहो श्री शुभ भाग ।

श्री सु अनंत चतुष्ट है, और सकल दुरभाग ॥६३०।

ओं ह्रीं श्रेयांशनाथाय नमः अर्घं ।

त्रस नाड़ी या लोकमें, तुम ही पूज्य प्रधान ।

तुमको पूजत भावसों, पाऊं सुख निरवाण ॥६३१।

ओं ह्रीं वासपूज्याय नमः अर्घं ।

द्रव्य भाव मल रहित हैं, महा मुनिनके नाथ ।

*इन्द्रादिक पूजत सदा, नमूं पदांबुज माथ ॥६३२।

ओं ह्रीं विमलनाथाय नमः अर्घं ।

जाको पार न पाइयो, गणधर और सुरेश ।

---

* "भक्तनको सुखकार हो, नमूं पदांबुज माथ ।" ऐसा "क" प्रतिमें पाठ है ।

थकित रहै असमर्थ करि, प्रणमें सन्त हमेश ।६३३।

ॐ ह्रीं अनंतनाथाय नमः अर्घं ।

अनागार आगारके, उद्धारक जिनराज ।
धर्मनाथ प्रणमूं सदा, पाऊं शिवसुख साज ।६३४।

ओं ह्रीं धर्मनाथाय नमः अर्घं ।

शांति रूप पर शांति कर, कर्म दाह विनिवार ।
शांति हेत बन्दूं सदा, पाऊं भवदधि पार ॥६३५।

ओं ह्रीं शांतिनाथाय नमः अर्घं ।

क्षुद्र वीर्य सब जीवके, रक्षक हैं तीर्थेश ।
शरणागति प्रतिपाल कर, ध्यावैं सदा सुरेश ॥६३६।

ओं ह्रीं कुन्थुनाथाय नमः अर्घं ।

पूजनीक सब जगतके, मंगलकारक देव ।
पूजत हैं हम भावसों, विनशै अघ स्वयमेव ॥६३७।

ओं ह्रीं अरहनाथाय नमः अर्घं ।

मोह काम भट जीतियो, जिन जीतो सब लोक ।
लोकोत्तम जिनराजके, नमूं चरण दे धोक ।६३८।

ओं ह्रीं मल्लिनाथाय नमः अर्घं ।

पंच पापको त्यागकरि, भव्य जीव आनन्द ।
भये जासु उपदेशतें, पूजत हूं पद वृन्द ॥६३९।

ओं ह्रीं मुनिसुव्रताय नमः अर्घं ।

सुरनर मुनि नित नमन करि, जान धरम अवतार ।
तिनको पूजूं भाव युत, लहूं भवार्णव पार ।६४०।

ओं ह्रीं नमिनाथाय नमः अर्घं ।

नेम धर्ममें नित रमें, धर्मधुरा भगवान ।
धर्मचक्र जगमें फिरे, पहुंचावै शिव थान ॥६४१।

ओं ह्रीं नेमिनाथाय नमः अर्घं ।

शरणागति निज पास दो, पाप फांस दुख नाश।
तिसको छेदो मूलसों, देहु मुकत गति वास ।६४२।

ओं ह्रीं पार्श्वनाथाय नमः अर्घं ।

वृद्ध भावतें उच्चपद, लोक शिखर आरूढ़ ।
केवल लक्षमी बर्द्धता, भई सु अन्तर गूढ़ ॥ ६४३ ॥

ओं ह्रीं वर्द्धमानाय नमः अर्घं ।

अतुल वीर्य तन धरत है, अतुल वीर्य मन बीच ।
कामिन वश नहीं रंच भी, जैसे जल बिच मीच ॥ ६४४ ॥

ॐ ह्रीं महावीराय नमः अर्घं ।

मोह सुभटकूं पटकियो, तीन लोक परशंस ।
श्रेष्ठ पुरुष तुम जगतमें, कियो कर्म बिध्वंस ॥ ६४५ ॥

ओं ह्रीं सुवीराय नमो अर्घं ।

मिथ्या-मोह निवार करि, महा सुमति भण्डार ।
शुभ मारग दरशाइयो, शुभ अरु अशुभ विचार ॥ ६४६ ॥

ओं ह्रीं सन्मतये नमः अर्घं ।

निज आश्रय निर्विघ्न नित, स्वै लक्ष्मी भण्डार ।
चरणाम्बुज नित नमत हम, पुष्पांजलि शुभ धार ॥ ६४७ ॥

ओं ह्रीं महापद्माय नमः अर्घं ।

हो देवाधिदेव तुम, नमत देव चउ भेद ।
धरो अनन्त चतुष्टपद, परमानन्द अभेव ॥ ६४८ ॥

ओं ह्रीं सुरदेवाय नमः अर्घं ।

निरावर्ण आभास है, ज्यों बिन पटल दिनेश ।
लोकालोक प्रकाश करि, सुंदर प्रभा जिनेश । ६४९ ।

ओं ह्रीं सुप्रभाय नमः अर्घं ।

आतमीक निज गुण लिये, दीप्ति सरूप अनूप ।
स्वयं जोति परकाशमय, बंदत हूं शिवभूप । ६५० ।

ओं ह्रीं स्वयंप्रभाय नमः अर्घं ।

स्वै शक्ती स्वै करण हैं, साधन बाह्य अनेक ।

मोह सुभट क्षय करनको, आयुधराशि विवेक । ६५१ ।

ॐ ह्रीं सर्वायुधाय नमः अर्घं ।

जय जय सुर धुनि करत हैं, तथा विजय निधि देव ।
तुम पद जे नर नमत हैं, पावै सुख स्वयमेव । ५२ ।

ॐ ह्रीं जयदेवाय नमः अघ ।

तुम सम प्रभा न औरमें, धरो ज्ञान परकाश ।
नाथ प्रभा जगमें भ्रमत, नमत मोहतम नाश । ५३ ।

ओं ह्रीं प्रभादेवाय नमः अर्घं ।

रक्षक हो षट् कायके, दया सिन्धु भगवान ।
शशि सम जिय आल्हाद करि, पूजनीक धरि ध्यान । ५४ ।

ओं ह्रीं उदकदेवाय नमः अर्घं ।

समाधान सबके करैं, द्वादश सभा मझार ।
सर्व अर्थ परकाश कर, दिव्य ध्वनि सुखकार । ५५ ।

ॐ ह्रीं प्रश्नकीर्तये नमः अर्घं ।

काहू विधि बाधा नहीं, कबहूं नहीं व्यय होय।
उन्नति रूप विराजते, जयवन्तो जग सोय। ५६।

ओं ह्रीं जयरूपजिनाय जयाय नमः अर्घं।

केवलज्ञान स्वभावमें, लोक त्रय इक भाग।
पूरणताको पाइयो, छांडि सकल अनुराग। ५७।

ओं ह्रीं पूर्णबुद्धाय नमः अर्घं।

पर आलिंगन भाव तज, इच्छा क्लेश विडार।
निज सन्तोष सुखी सदा, पर सम्बन्ध निवार। ५८।

ॐ ह्रीं निजानंदसंतुष्टजिनाय (निःसंगाय) नमः अर्घं।

मोहादिक मल नाशकर, अतिशय करि अमलान।
विमल जिनेश्वर मैं नमूं, तीन लोक परधान। ५९।

ओं ह्रीं विमलाय नमः अर्घं।

स्वेपदमें नित रमत हैं, कभी न आरति होय।
अतुल वीर्य विधि जीतियो, नमूं जोर कर दोय। ६०।

ओं ह्रीं महाबलाय नमो अर्घं ।

द्रव्य भाव मल कर्म हैं, ताको नाश करान ।
शुद्ध निरंजन हो रहै, ज्यों बादल विन भान । ६६१ ।

ओं ह्रीं निर्मलाय नमः अघ ।

तुम चित्राम अरूप है, सुरनर साधु अगम्य ।
निराकार निर्लेप है, धारत भाव असम्य । ६२ ।

ओं ह्रीं चित्रगुप्ताय नमः अर्घं ।

मग्न भये निज आतममें, पर पदमें न्हीं वास ।
अक्ष अलक्ष विराजते, पूरो मनकी आश । ६३ ।

ओं ह्रीं समाधिगुप्तये नमः अर्घं ।

निज गुण आतम ज्ञान है, पर सहाय नहीं चाह ।
स्वयं भाव परकाशियो, नमत मिटै भव दाह । ६४ ।

ओं ह्रीं स्वगंभुवे नमः अर्घं ।

मन मोहन सोहन महा, मुनि मन रमण अनन्द ।

महा तेज परताप हैं, पूरण ज्योति अमन्द । ६५ ।

ओं ह्रीं कंदर्पाय नमः अर्घं ।

विजय लक्ष्मी नाथ हैं, जीते कर्म प्रधान ।
तिनको पूजैं सर्व जग, मैं पूजों धरि ध्यान । ६६ ।

ओं ह्रीं विजयनाथाय नमः अर्घं ।

गणधरादि योगीश जे, विमलाचारी सार ।
तिनके स्वामी हो प्रभू, राग द्वेष मल जार । ६६७ ।

ओं ह्रीं विमलेशाय नमः अर्घं ।

दिव्य अनक्षर ध्वनि खिरै, सर्व अर्थ गुणधार ।
भविजन मन संशय हरन, शुद्ध बोध आधार । ६६८ ।

ओं ह्रीं दिव्यवादाय नमः अर्घं ।

नहीं पार जा वीर्यको, स्वाभाविक निरधार ।
सो सहजैं गुण धरत हो, नमूं लहूं भवपार । ६६९ ।

ओं ह्रीं अनन्तवीर्याय नमः अर्घं ।

पुरुषोत्तम परधान हो, परम निजानन्द धाम।
चक्रपती हरिबल नमें, मैं पूजूं निष्काम। ६७०।

ॐ ह्रीं महापुरुषदेवाय नमः अर्घं।

शुभ विधि सब आचरण हैं, सर्व जीव हितकार।
श्रेष्ठ बुद्ध अति शुद्ध हैं, नमूं तजो भवपार। ६७१।

ओं ह्रीं सविधये नमो अर्घं।

है प्रमाण करि सिद्ध जे, ते हैं बुद्धि प्रमाण।
सो विशुद्धमय रूप हैं, संशय तमको भान। ७२।

ओं ह्रीं प्रज्ञाप्रमिताय नमः अर्घं।

समय प्रमाण न मित तनी, कभी अंत नहीं होय।
अविनाशी थिर पद धरैं, मैं प्रणमूं हूं सोय। ७३।

ओं ह्रीं अव्ययाय नमः अर्घं।

प्रतिपालक जगदीश हैं, सर्व मान परमान।
अधिक शिरोमणि लोकगुरु, पूजत नित कल्याण। ७४।

ओं ह्रीं पुराणपुरुषाय नमः अर्घं ।

धर्मसहायक हो प्रभू, धर्म मार्गकी लीक ।
शुद्ध मर्यादा बन्ध प्रति, करण चलावन ठीक । ७५ ।

ओं ह्रीं धर्मसारथये नमः अर्घं ।

शिव मारग दिखलाय कर, भविजन कियो उद्धार ।
धर्म सुयश विस्तार कर, बतलायो शुभ सार । ७६ ।

ओं ह्रां शिवकीर्तिजिनाय नमः अर्घं ।

मोह अंध हन सूर्य हो, जगदीश्वर शिवनाथ ।
मोक्षमार्ग परकाश कर, नमूं जोर जुग हाथ । ७७ ।

ओं ह्रीं मोहांधकारविनाशकजिनाय (विश्वकर्माय) नमः अर्घं ।

मन इन्द्री व्यापार विन, भाव रूप विध्वंश ।
ज्ञान अतीन्द्रिय धरत हो, नमत नशै अघवंश । ७८ ।

ओं ह्रीं अतीन्द्रियज्ञानरूपजिनाय (अनक्षाय) नमः अर्घ ।

पर उपदेश परोक्ष विन, साक्षात परतक्ष ।

जानत लोकालोक सब, धारैं ज्ञान अलक्ष । ६७९ ।

ओं ह्रीं सर्वज्ञकेवलज्ञानजिनाय (अछद्मस्थाय) नमः अर्घं ।

व्यापक हो तिहुं लोकमें, ज्ञान ज्योति सब ठौर ।

तुमको पूजत भावसों, पाऊं भवदधि ओर । ८० ।

ओं ह्रीं विश्वभूतये नमः अर्घं ।

इन्द्रादिक कर पूज्य हो, मुनिजन ध्यान धराय ।

तीन लोक नायक प्रभू, हमपर होउ सहाय । ८१ ।

ॐ ह्रीं विश्वनायकाय नमः अर्घं ।

तुम देवनके देव हो, महादेव है नाम ।

विन ममत्व शुद्धात्मा, तुम पद करूं प्रणाम । ८२

ओं ह्रीं दिगम्बराय नमः अर्घं ।

सर्व व्यापि कुमती कहैं, करो भिन्न विश्राम ।

जगसों तजी समीपता, राजत हो शिवधाम । ८३ ।

ओं ह्रीं निरंतकाय नमः अर्घं ।

हितकारी अति मिष्ट हैं, अर्थ सहित गम्भीर।
प्रिय वाणी कर पोखते, द्वादश सभा सु तीर। ८४।

ओं ह्रीं मिष्टदिव्यध्वनिजिनाय (निरारेकाय) नमः अर्घं।

भवसागरके पार हो, सुखसागर गलतान।
भव्यजीव पूजत चरन, पावै पद निरवाण॥

ॐ ह्रीं भवांताय नमः अर्घं। ८५।

नहीं चलाचल भाव हैं, पाप कलाप न लेश।
दृढ़ परिणत स्वै आत्मरस, पूजूं श्री मुक्तेश॥

ॐ ह्रीं दृढ़व्रताय नमः अर्घं। ८६॥

असंख्यात नय भेद हैं, यथायोग्य वच द्वार।
तिन सबको जानो सुविध, महा निपुण मति धार॥

ओं ह्रीं नियुक्तिज्ञानधारकजिनाय (नियोक्ताज्ञाय) नमः अर्घं। ८७।

क्रोधादिक सु उपाधि हैं, आत्म विभाव कराय।

तिनको त्याग विशुद्ध पद, पायो पूजूं पाय ॥

ओं ह्रीं निष्कषायाय नमः अर्घं । ८८ ॥

ज्यों शशि किरण उद्योत है, पूरण प्रभा प्रकाश ।

कलाधार सोहैं सु इम, पूजत अघ तम नाश ॥

ओं ह्रीं पूर्णकलाधराय नमः अर्घं । ८९ ।

जन्म मरणको आदि ले, जगमें क्लेश महान ।

तिसके हंता हो प्रभू, भोगत सुख निर्वाण ॥

ॐ ह्रीं विश्वक्लेशहननाय नमः अर्घं । ९० ।

ध्रुव स्वरूप थिर हैं सदा, कभी अन्त नहीं होय ।

अव्याबाध विराजते, पर सहायको खोय ॥

ॐ ह्रीं ध्रौव्यरूपजिनाय नमो अर्घं । ९९१ ।

व्यय उत्पाद सुभाव हैं, ताको गौण कराय ।

अचल अनन्त स्वभावमें, तीन लोक सुखदाय ॥

ॐ ह्रीं अक्षयअनंतस्वभावात्मकजिनाय (क्षयंताय) नमो अर्घं । ९२ ।

स्व ज्ञानादि चतुष्ट पद, हृदे माहिं विकसाय।
सोहत हैं शुभ चिह्न करि, भवि आनंद कराय॥
ॐ ह्रीं वत्सलांछनाय नमः अर्घं।६३।

धर्म रीति परगट कियो, युगकी आदि मझार।
भविजन पोषे सुख सहित, आदि धर्म अवतार॥
ओं ह्रीं ब्रह्मणे नमः अर्घं।६४।

चतुरानन परसिद्ध हैं, दर्श होय चहुं ओर।
चउ अनुयोग बखानते, सब दुख नासौ मोर॥
ओं ह्रीं चतुर्मुखाय नमः अर्घं।६५।

जगत जीव कल्याण कर, धर्म मर्याद बखान।
ब्रह्म विष्णु भगवान हो, महामुनी सब मान।
ओं ह्रीं जगतजीनकल्याणकारणजिनाय (धात्रे) नमः अर्घं।६६।

प्रजापति प्रतिपाल कर, ब्रह्मा विधि करतार।
मन्मथ इन्द्री वश करन, वन्दूं सुख आधार।

ओं ह्रीं विधात्रे नमो अर्घं ॥ ६७ ।

तीन लोककी लक्ष्मी, तुम चरणाम्बुज बास ।
श्रीपति श्रीधर नाम शुभ, दिव्यासन सुखरास ॥

ओं ह्रीं कमलासनाय नमः अर्घं । ६८ ।

वहुरि न जगमें भ्रमण है, पंचम गतिमें बास ।
नित्य अमरता पाइयो, जरा मृत्युको नाश ॥

ॐ ह्रीं अजन्मिने नमः अर्घं । ६६ ।

पांच काय पुद्गलमई, तामें एक न होय ।
केवल आत्म प्रदेश ही, तिष्ठत हैं दुख खोय ॥

ओं ह्रीं आत्मभुवे नमः अर्घं । ७०० ॥

लोक शिखर सुखसो रहैं, ये ही ता जान ।
धारत हैं तिहुं लोकमें, अधिक प्रभ परधान ॥

ओं ह्रीं लोकशिखरनिवासिने(शृंगाय) नमः अर्घं । ७०१

अधिक प्रताप प्रकाश है, मोह तिमिरको नाश ।

शिवमग दिखलावन सही, सूरज शशि प्रतिभास ॥ ७०२ ॥
ओं ह्रीं सुरज्येष्ठाय नमः अर्घं ।

प्रजापाल हित धार उर, शुभ मारग वरताय ।
सत्यारथ ब्रह्मा कहैं, तुमरे बन्दूं पाय ॥ ७०३ ॥
ओं ह्रीं प्रजापतये नमः अर्घं ।

गर्भ समय षट्मास ही, प्रथम इन्द्र हर्षाय ।
रत्नवृष्टि नित करत हैं, उत्तम गर्भ कहाय ॥ ७०४ ॥
ॐ ह्रीं हिरण्यगर्भाय नमः अर्घं ।

तुम ही चार अनुयोगके, अंग कहै मुनिराज ।
तुमसों प्ररण श्रुत सही, अंतर मंगल काज ॥ ७०५ ॥
ओं ह्रीं वेदांगाय नमः अर्घं ।

तुम उपदेश थकी कहैं, द्वादशांग गणराज ।
प्ररण ज्ञान तुम्हीं धरो, प्रनमूं मैं शिवकाज ॥ ७०६ ॥

ओं ह्रीं पूर्णवेदज्ञाय (वेदज्ञानाय) नमः अर्घं ।

पार भये भवसिंधुके, तथा सुवर्ण समान ।
उत्तम निर्मल थुति धरैं, नमत कर्ममल हान ॥ ७०७ ॥

ॐ ह्रीं भवसिंधुपारगाय नमः अर्घं ।

सुखाभास पर निमित्ततें, पर उपाधितें होत ।
स्वतः सुभाव धरो सही, सत्यानंद उद्योत ॥ ७०८ ॥

ओं ह्रीं सत्यानंदाय नमः अर्घं ।

मोहादिक परबल महा, सो इसको तुम जीत ।
औरनकी गिनती कहां, तिष्ठो सदा अभीत ॥ ७०९ ॥

ओं ह्रीं अजयाय नमो अर्घं ।

दिव्य रत्नमय ज्योति हैं, अमित अकंप अडोल ।
मनवांछित फलदाय हो, राजत अक्षय अमोल ॥७१० ॥

ओं ह्रीं मनवांछितफलदाय (मणवे) नमः अर्घं ।

देह धार जीवन मुक्त, परमातम भगवान ।
सूर्य समान सुदीप्त धर, महा ऋषीश्वर जान ॥ ७११ ॥
ॐ ह्रीं जीवनमुक्तजिनाय (हंसजाताय) नमः अर्घं ।

स्व भय आदिकसे परै, पर भय आदि निवार ।
पर उपाधि बिन नित सुखी, बन्दूं भाव समार ॥७१२ ॥
ॐ ह्रीं त्रातानंदाय नमो अर्घं ।

ईश्वर हो तिहुँ लोकके, परम पुरुष परधान ।
ज्ञानानन्द स्वलक्ष्मी, भोगत नित अमलान ॥ ७१३ ॥
ॐ ह्रीं विष्णवे नमः अर्घं ।

रत्नत्रय पुरुषार्थ करि, हो प्रसिद्ध जयवंत ।
कर्मशत्रुको क्षय कियो, शीश नमें नित सन्त ॥ ७१४ ॥
ओं ह्रीं त्रिविक्रमाय नमः अर्घं ।

सूरज हो शिवराहके, कर्म दलन बलि सूर ।

संशय केतुनि ग्रहण ग्रसि, महा सहज सुख पूर ॥ ७१५ ॥

ओं ह्रीं मोक्षमार्गप्रकाशकआदित्यरूपजिनाय (सूरये) नमो अर्घं ।

सुभग अनंत चतुष्टपद, सोई लक्ष्मी भोग ।

स्वामी हो शिवनारिके, नमूं जोरि तिहुं योग ॥ ७१६ ॥

ओं ह्रीं श्रीपतये नमः अर्घं ।

इन्द्रादिक पूजत जिन्हैं, पंचकल्याणक थाप ॥

अद्भुत पराक्रमको धरैं, नमत नसैं भव पाप ॥ ७१७ ॥

ओं ह्रीं पुरुषोत्तमाय नमः अर्घं ।

निज प्रदेशमें बसत हैं, परमातमको वास ।

आप मोक्षके नाथ हो, आप हि मोक्ष निवास ॥ ७१८ ॥

ॐ ह्रीं वैकुण्ठाधिपतये नमः अर्घं ।

सर्व लोक कल्याणकर, विष्णु नाम भगवान ।

श्री कहिये स्व लक्ष्मी, ताके भरता जान ॥ ७१९ ॥

ओं ह्रीं सर्वलोकश्रेयस्करजिनाय (पुंडरीकाक्षाय) नमः अर्घं ।

मुनिमन कुमुदिन मोदकर, भव संताप विनाश ।
पूरण चन्द्र त्रिलोकमें, पूरण प्रभा प्रकाश ॥ ७२० ॥

ओं ह्रीं हृषीकेशाय (ऋक्षेशाय) नमो अर्घं ।

दिनकर सम परकाश कर, हो देवनके देव ।
ब्रह्मा विष्णु कहात हो, शशि सम दुति स्वयमेव ॥ ७२१ ॥

ओं ह्री हरये नमो अर्घं ।

स्वयं विभवके हो धनी, स्वयं ज्योति परकाश ।
स्वयं ज्ञान दृग वीर्य सुख, स्वयं सुभाव विलास ॥ ७२२ ॥

ॐ ह्रीं स्वयंभुवे नमः अर्घं ।

धर्म भारधर धारिणी, हो जिनेन्द्र भगवान ।
तुमको पूजों भावसों, पाऊं पद निर्वाण ॥ ७२३ ॥

ओं ह्रीं विश्वंभराय नमः अर्घं ।

असुर काम अर हास्य इन, आदि कियो विध्वंश।
महा श्रेष्ठ तुमको नमूं, रहै न अघको अंश ॥ ७२४ ॥

ओं ह्रीं कामादिअसुरध्वंसिने नमः अर्घं ।

सुधाधार द्यो अमरपद, धर्म फूलकी वेल।
शुभ मति गोपिन संगमें, हमें राख निज गेल ॥ ७२५ ॥

ओं ह्रीं माधवाय नमः अर्घं ।

विषय कषाय स्व वश करी, बलि वश कियो जु राम।
महा बली परसिद्ध हो, तुम पद करूँ प्रणाम ॥ ७२६ ॥

ओं ह्रीं बलिबन्धनाय नमः अर्घं ।

तीन लोक भगवान हो, स्वै परके हितकार।
सुरनर पशु पूजत सदा, भक्ति भाव उर धार ॥ ७२७ ॥

ॐ ह्रीं अधोक्षजाय नमः अर्घं ।

हितमित मिष्ट प्रिय वचन, अमृत सम सुखदाय।

धर्म मोक्ष परगट करन, बन्दूं तिनके पाय ॥ ७२८ ॥

ॐ ह्रीं हितमितप्रियवचनजिनाय (मघवे) नमः अर्घं ।

निज लीलामें मगन हैं, सांचा कृष्ण सु नाम ।

तीन खण्ड तिहुं लोकके, नाथ करूं परणाम ॥ ७२९ ॥

ओं ह्रीं केशवाय नमः अर्घ ।

सूके तृण सम जगतकी, विभव जान करवास ।

धरै सरलता जोगमें, करै पापको नाश ॥ ७३० ॥

ओं ह्रीं विष्टरश्रवसे नमः अर्घं ।

श्री कहिये आतम विभव, ताकरि हो शुभ नीक ।

सोहत सुन्दर वदन करि, सज्जन चित रमणीक ॥ ७३१ ॥

ओं ह्रीं श्रीवत्सलांछनाय नमः अर्घं ।

सर्वोत्तम अतिश्रेष्ठ हैं, जिन सन्मति थुति योग ।

धर्म मोक्ष मारग कहैं, पूजत सज्जन लोग ॥ ७३२ ॥

ॐ ह्रीं श्रीमतये नमः अर्घं ।

अविनाशी अविकार हैं, नहीं चिगे निज भाव ।
स्वयं सुआश्रय रहत हैं, मैं पूजूं धर चाव ॥ ७३३ ॥

ओं ह्रीं अच्युताय नमः अर्घं ।

नाशौ लौकिक कामना, निर इक्षक योगीश ।
नारशृंगार न मन वसे, वंदत हूं लोकीश ॥ ७३४ ॥

ॐ ह्रीं नरकान्तकाय नमो अर्घं ।

व्यापक लोकालोकमें, विष्णुरूप भगवान ।
धर्मरूप तरु लहि लहै, पूजत हूं धर ध्यान ॥ ७३५ ॥

ओं ह्रीं निश्चक्सेनाय नमः अर्घं ।

धर्म चक्र सन्मुख चलै, मिथ्यामति रिपुघात ।
तीन लोक नायक प्रभू, पूजत हूं दिनरात ॥ ७३६ ॥

ॐ ह्रीं चक्रपाणये नमः अर्घं ।

सुभग स्वरूपी श्रेष्ठ अति, जन्म धर्म अवतार ।
तीन लोककी लक्ष्मी, है एकत्र उदार ॥ ७३७ ।
ओं ह्रीं पद्मनाभाय नमः अर्घं ।

मुनिजन आदर जोग हो, लोक सराहन योग ।
सुरनर पशु आनंद कर, सुभग निजातम भोग ॥ ७३८ ॥
ओं ह्रीं जनार्दनाय नमः अर्घं ।

सब देवनके देव हो, महादेव विख्यात ।
ज्ञानामृत सुखसों खिरै, पीवत भवि सुख पात ॥ ७३९ ॥
ॐ ह्रीं श्रीकण्ठाय नमों अर्घं ।

पाप पुंजका नाश करि, धर्म रीति प्रगटाय ।
तीन लोकके अधिपती, हमपर दया कराय ॥ ७४० ॥
ओं ह्रीं त्रिलोकाधिपशंकराय नमः अर्घं ।

स्वयं व्यापि निज ज्ञान करि, स्वयं प्रकाश अनूप ।

स्वयं भाव परमातमा, बन्दूं स्वयं सरूप ॥ ७४१ ॥

ओं ह्रीं स्वयंभवे नमः अर्घं ।

सब देवनके देव हो, महादेव है नाम ।
स्वपर सुगंधित रूप हो, तुम पद करूं प्रणाम ॥ ७४२ ॥

ओं ह्रीं लोकपालाय नमः अर्घं ।

धर्मध्वजा जग फरहरै, सब जग माने आन ।
सब जग शीश नमें चरण, सब जगको सुखदान ॥ ७४३ ॥

ॐ ह्रीं वृषभकेतने नमः अर्घं ।

जन्म जरा मृत जीतिकैं, निश्चल अव्यय रूप ।
सुखसों राजत नित्य हो, बन्दूं हूं शिवभूप ॥ ७४४

ओं ह्रीं शिवरूपमहामृत्युंजयाय नमः अर्घं ।

सब इन्द्री मन जीतिके, करि दीनो तुम व्यर्थ ।
स्वयं ज्ञान इन्द्री जय्यो, नमूं सदा शिव अर्थ । ७४५ ।

ॐ ह्रीं विरूपाक्षाय नमः अर्घं ।

सुन्दर रूप मनोज्ञ है, मुनिजन मन वशकार ।
असाधारण शुभ तन लगै, केवलज्ञान मझार । ७४६ ।

ओं ह्रीं कामदेवाय नमः अर्घं ।

सम्यग्दर्शन ज्ञान अरु, चारित एक सरूप ।
धर्म मार्ग दरशात है, लोकित रूप अनूप । ७४७ ।

ओं ह्रीं त्रिलोचनाय नमः अर्घं ।

निजानन्द स्व लक्ष्मी, ताके हो भरतार ।
शिव कामिन नित भोगते, परम रूप सुखकार । ७४८ ।

ओं ह्रीं उमापतये नमो अर्घं ।

जे अज्ञानी जीव हैं, नित प्रति बोध करान ।
रक्षक हो षट् कायके, तुम सम कौन महान । ७४९ ।

ॐ ह्रीं पशुपतये नमो अर्घं ।

रमण भाव निज शक्तिसो, धरै तथा दुति काम।
कामदेव तुम नाम हैं, महाशक्ति बल धाम। ७५०।

ओं ह्रीं शम्बरारये नमो अर्घं।

कामदाहको दम कियो, ज्यों अगनी जलधार।
स्वै आतम आचरण नित, महाशील श्रिय सार। ७५१।

ॐ ह्रीं त्रिपुरांतकाय नमो अर्घं।

स्वै सन्मति शुभ नारसो, मिले रले अरधांग।
ईश्वर हो परमातमा, तुम्हैं नमूं सर्वांग। ७५२।

ओं ह्रीं अर्द्धनारीश्वराय नमः अर्घं।

नहीं चिगे उपयोगसे, महा कठिन परिणाम।
महावीर्य धारक नमूं, तुमको आठो जाम। ७५३।

ॐ ह्रीं रुद्राय नमः अर्घं।

गुण पर्याय अनन्त युत, वस्तु स्वयं परदेश।

स्वयं काल स्व क्षेत्र हो, स्वपर [illegible]

ॐ ह्रीं भावाय नमः अर्घं ।

सूक्षम गुण स्वगुण धरै, महा शुद्धता धार ।
चार ज्ञान धर नहीं लखै, मैं पूजूं सुखकार ॥ ७५५ ॥

ॐ ह्रीं गर्भकल्याणकजिनाय नमः अर्घं ।

शिव तिय संग सदा रमें, काल अनन्त न और ।
अविनाशी अविकार हो, महादेव शिरमौर ॥ ७५६ ॥

ओं ह्रीं सदाशिवाय नमः अर्घं ।

जगत कार्य तुमसों सधै, सब तुमरे आधीन ।
सबके तुम सरदार हो, आप धनी जगदीन ॥ ७५७ ॥

ओं ह्रीं जगत्कर्त्रे नमः अर्घं ।

महा घोर अंधियार है, मिथ्या मोह कहाय ।

३२

जगमें शिव मग लुप्त था, ताको तुम दरशाय ॥ ७५८ ॥

ओं ह्रीं अन्धकारांतकाय नमः अर्घं ।

सन्तति पक्ष जुदी नहीं, नहीं आदि नहीं अन्त ।

सदा काल विन काल तुम, राजत हो जयवन्त ॥ ७५९ ॥

ओं ह्रीं अनादिनिधनाय नमः अर्घं ।

तीन लोक आराध्य हो, महा यज्ञको ठाम ।

तुमको पूजत पाइये, महा मोक्षसुख धाम ॥ ७६० ॥

ॐ ह्रीं हराय नमः अर्घं ।

महा सुभट गुणराम हो, सेवत हैं तिहुं लोक ।

शरणागति प्रतिपालकर, चरणाम्बुज दूं धोक ॥ ७६१ ॥

ओं ह्रीं महासेनाय नमः अर्घं ।

गणधरादि सेवें चरण, महा गणपती नाम ।

पार करो भवसिंधुतें, मंगलकर सुख धाम ॥ ७६२ ।

ॐ ह्रीं तारकाय नमः अर्घं ।

चार संघके नाथ हो, तुम आज्ञा शिर धार ।
धर्म मार्ग प्रवर्त्त कर, बन्दूं पाप निवार ॥ ७६३ ॥

ओं ह्रीं गणनाथाय नमः अर्घं ।

मोह सर्पके दमनको, गरुड समान कहाय ।
सबके आदरकार हो, तुम गणपति सुखदाय ॥ ७६४ ॥

ओं ह्रीं विनायकाय नमः अर्घं ।

जे मोही अल्पज्ञ हैं, तिनसों हो प्रतिकूल ।
धर्माधर्म विरोध कर, धरूं शीश पग धूल ॥ ७६५ ॥

ओं ह्रीं विरोधनाय नमः अर्घं ।

जितने दुख संसारमें, तिनको वार न पार ।
इक तुम ही जानो सही, ताहि तजो दुख भार । ७६६ ॥

ओं ह्रीं विपद्विनाशकजिनाय नमः अर्घं ।

सब विद्याके जीव हो, तुम वाणी परकाश।
सकल अविद्या मूलतें, इक छिनमें हो नाश॥ ७६७॥
ओं ह्रीं द्वादशात्मने नमः अर्घं।

पर निमित्तसे जीवको, रागादिक परिणाम।
तिनको त्याग सुभावमें, राजत है सुखधाम॥ ७६८॥
ओं ह्रीं विभावरहिताय नमः अर्घं।

अन्तर बाहिर प्रबल रिपु, जीत सके नहीं कोय।
निर्भय अचल सुथिर रहै, कोटि शिवालय सोय॥ ७६९॥
ओं ह्रीं दुर्जयाय नमः अर्घं।

घन सम गर्जत वचन हैं, भागे कुनई कुवाद।
प्रबल प्रचण्ड सुवीर्य है, धरै सुगुण इत्यादि॥ ७७०॥
ओं ह्रीं बृहद्भावाय नमः अर्घं।

पाप सघन वन दाह दव, महादेव शिव नाम।

अतुल प्रभा धारो महा, तुम पद करूं प्रणाम ॥ ७७१ ॥

ओं ह्रीं चित्रभानवे नमः अर्घं ।

तुम अजन्म विन मृत्यु हो, सदा रहो अविकार ।
ज्योंके त्यों मणि दीप सम, पूजत हूं मन धार ॥ ७७२ ॥

ओं ह्रीं अजरअमरजिनाय (अनुत्पादाय) नमः अर्घं ।

संस्कारादि स्वगुण सहित, तिन करि हो आराध्य ।
तुमको वन्दो भावसों, मिटै सकल दुख व्याध्य ॥ ७७३ ॥

ओं ह्रीं द्विजाराध्याय नमः अर्घं ।

निज आतम स्वै ज्ञान है, तामें रुचि परतीत ।
पर पद सोहै अरुचिता, पाई अक्षय जीत ॥ ७७४ ॥

ॐ ह्रीं सुधारोचये (अमृताय) नमः अर्घं ।

जन्म मरणको आदि लै, सकल रोगको नाश ।
दिव्य औषधी तुम धरो, अमर करन सुखरास ॥ ७७५ ॥

ओं ह्रीं औषधीशाय नमः अर्घं ।

पूरण गुण परकाश कर, ज्यों शशि किरण उद्योत ।
मिथ्या तप निरवारतै, दर्शित आनन्द होत ॥ ७७६ ॥

ओं ह्रीं कलानिधये नमः अर्घं ।

सूर्य प्रकाश धरै सही, धर्म मार्ग दिखलाय ।
चार संघ नायक प्रभू, वन्दूं तिनके पाय ॥ ७७७ ॥

ओं ह्रीं नक्षत्रनाथाय नमः अर्घं ।

भव तप हर हो चन्द्रमा, शीतलकारकपूर ।
तुमको जो नर सेवते, पाप कर्म हो दूर ॥ ७७८ ॥

ॐ ह्रीं शुभ्रांशवे नमः अर्घं ।

स्वर्गादिककी लक्ष्मी, तारों भी कल्यान ।
स्वैपदमें आनन्द है, तीन लोक भगवान ॥ ७७९ ॥

ओं ह्रीं सौम्यभावरतये नमः अर्घं ।

पर पदार्थको इष्ट लखि, होत नहीं अभिमान।
हो अबन्ध इस कर्मतें, स्व आनन्द निधान ॥ ७८० ॥
ओं ह्रीं कुमुदबांधवाय नमः अर्घं ।

सब विभावको त्याग करि, हैं स्वधर्ममें लीन।
तातें प्रभुता पाइयो, हैं नहीं बन्धाधीन ॥ ७८१ ॥
ओं ह्रीं धर्मरतये नमः अर्घं ।

आकुलता नहीं लेश है, नहीं रहै चित भंग।
सदा सुखी तिहुं लोकमें, चरण नमूं सब अंग ॥ ७८२ ॥
ओं ह्रीं आकुलितारहितजिनाय नमः अर्घं ।

शुभ परिणति प्रगटायके, दियो स्वर्गको दान।
धर्मध्यान तुमसे चले, समरत हो शुभ ध्यान ॥ ७८३ ॥
ओं ह्रीं पुण्यजिनाय नमः अर्घं ।

भविजन करत पवित्र अति, पाप मैल प्रक्षाल।

ईश्वर हो परमातमा, नमूं चरण निज भाल ॥ ७८४ ॥
ओं ह्रीं पुण्यजिनेश्वराय नमः अर्घं ।

श्रावक या मुनिराज हो, धर्म आपमें होय ।
धर्मराज शुभ नीति करि, उन्मार्गको खोय ॥ ७८५ ॥
ओं ह्रीं धर्मराजाय नमः अर्घं ।

स्वयं स्व आतम रस लहो, ताही कहिये भोग ।
अन्य कुपरिणति त्यागिये, नमूं पदांबुज योग ॥ ७८६ ॥
ओं ह्रीं भोगराज्याय नमः अर्घं ।

दर्शन ज्ञान सुभाव धरि, ताहीके हो स्वाम ।
तामें लीनता त्यागियो, भये शुद्ध परिणाम ॥ ७८७ ॥
ॐ ह्रीं दर्शनज्ञानचारित्रात्मजिनाय (चिन्ताय) नमः अर्घं ।

सत्य उचित शुभ न्यायमें, है आनन्द विशेख ।
सब कुनीतिको नाशकर, सर्व जीव सुख देख ॥ ७८८ ॥

ॐ ह्रीं भूतानन्दाय नमो अर्घं ।

पर पदार्थके संगसे, दुखित होत सब जीव ।
ताके भयसों भय रहित, भोगें मोक्ष सदीव ॥ ७८९ ॥

ओं ह्रीं सिद्धिकान्तजिनवराय नमः अर्घं ।

जाको कभी न नाश हो, सो पायो आनन्द ।
अचल रूप निज आतममय, भाव अशावी छंद ॥ ७९० ॥

ॐ ह्रीं अक्षयानंदाय नमः अर्घं ।

शिव मारग परगट कियो, दोष रहित वरताय ।
दिव्यध्वनि करि गर्ज सम, सर्व अर्थ दिखलाय ॥ ७९१ ॥

ओं ह्रीं बृहतांपतये नमः अर्घं ।

चौपाई छन्द—हितकारक अपुर्व उपदेश, तुम सम और नहीं देवेश ।
सिद्धसमूह जजूं मन लाय, भव भवमें सुखसंपतिदाय । ७९२ ।

ओं ह्रीं अपूर्वदेवोपदेष्ट्रे नमः अर्घं ।

कर्म विषैं संस्कार विधान, तीन लोकमें विस्तर जान।
सिद्धसमूह जजूं मन लाय, भव भवमें सुखसंपतिदाय। ७६३।

ॐ ह्रीं सिद्धसमूहेभ्यो नमः अर्घं।

धर्म उपदेश देत सुखकार, महाबुद्ध तुम हो अवतार।
सिद्धसमूह जजूं मन लाय, भव भवमें सुखसंपतिदाय॥ ७६४॥

ओं ह्रीं शुद्धबुद्धाय नमः अर्घं।

तीन लोकमें हो शशि सूर, निज कर्णावलि करि तम चूर।
सिद्धसमूह जजूं मन लाय, भव भवमें सुखसंपतिदाय। ७६५।

ओं ह्रीं दर्शबलाय नमः अर्घं।

धर्ममार्ग उद्योत करान, सब कुवादको कर हो हान।
सिद्धसमूह जजूं मन लाय, भव भवमें सुखसंपतिदाय। ७६६।

ओं ह्रीं धर्ममार्गदर्शकजिनाय (शाक्याय) नमः अर्घं।

सर्व शास्त्र मिथ्या वा सांच, तुम निज दृष्टि लियो है जांच।

सिद्धसमूह जजूं मन लाय, भव भवमें सुखसंपतिदाय । ७९७ ।

ओं ह्रीं षड्विधाय नमः अर्घं ।

पंचमगति विन श्रेष्ठ न और, सो तुम पाय त्रिजग शिर मौर ।

सिद्धसमूह जजूं मन लाय, भव भवमें सुखसंपतिदाय । ७९८ ।

ओं ह्रीं शुभगतये नमः अर्घं ।

श्रेष्ठ सुमति तुम्हीं में एक, शिवमारगकी जानो टेक । सिद्धसमूह० ।

ओं ह्रीं समंतभद्राय नमः अर्घं ॥ ७९९ ॥

धर्म मर्जाद भली विधि थाप, भविजन मेटो सब संताप । सिद्ध० । ८००

ओं ह्रीं सुगतये नमः अर्घं ।

श्रेष्ठ करै कल्याण सु ज्ञान, संपूरण संकल्प निशान । सिद्ध० । ८०१

ओं ह्रीं धनाय नमः अर्घं ।

निज ऐश्वर्य धरो संपूर्ण, पर विभूति विन हो अघ चूर्ण । सिद्ध० । ८०२

ओं ह्रीं भूतमतये नमः अर्घं ।

श्रेष्ठ शुद्ध निजब्रह्म रमाय, मंगलमय पर मंगलदाय । सिद्ध० । ८०३ ।

ओं ह्रीं परब्रह्मणे नमः अर्घं ।

श्री जिनराज कर्मरिपु जीति, पूजनीक हैं सबके मीत । सिद्ध० । ८०४ ।

ॐ ह्रीं कर्मारिजिते नमः अर्घं ।

षट् पदार्थ नव तत्त्व कषाय, धर्म अधर्म भलीविधि गाय । सिद्ध० ८०५

ॐ ह्रीं सर्वशास्त्रज्ञजिनाय नमः अर्घं ।

है शुभ लक्षणमय परिणाम, पर उपाधिको नहिं कछु काम । सिद्ध० ८०६

ॐ ह्रीं क्षणिकैकसुलक्षणाय नमः अर्घं ।

सत्य ज्ञानमय है तुम बोध, हेय अहेय बतायो सोध । सिद्ध० । ८०७ ।

ओं ह्रीं सर्वबाधसत्त्वाय नमः अर्घं

इष्टानिष्ट न राग न द्वेष ज्ञाता दृष्टा हो अविशेष । सिद्ध० । ८०८ ।

ओं ह्रीं निर्विकल्पाय नमः अर्घं ।

दूजो तुम सम नहीं भगवान, धर्माधर्म रीति बतलान ।

सिद्धसमूह जजूं मन लाय, भव भवमें सुखसंपतिदाय ॥ ८०६ ॥
ओं ह्रीं अद्वितीयबोधजिनाय नमः अर्घं ।
महादुखी संसारी जान, तिनके पालक हो भगवान ।
सिद्धसमूह जजूं मन लाय, भव भवमें सुखसंपतिदाय ॥ ८१० ॥
ओं ह्रीं लोकपालाय नमः अर्घं ।
जग विभूति निर इच्छक होय, मान रहित आतम रत सोय । सिद्ध० ८११
ओं ह्रीं आत्मरसरतजिनाय नमः अर्घं ।
ज्यों शशि तपहर है अनिवार, अतिशय सहित शांति करतार । सिद्ध० ८१२
ॐ ह्रीं शांतातिशयाय नमः अर्घं ।
हो निरभेद अछेद अशेष, सब इकसार स्वयं परदेव । सिद्ध० ८१३
ओं ह्रीं सामान्यलक्षणाय नमः अर्घं ।
मायाकृत सम पांचों काय, निजसों भिन्न लखो मन भाय । सिद्ध० ।
ओं ह्रीं पंचस्कंधायात्मदृशे नमः अर्घं ॥ ८१४ ॥

घीती वात देख संसार, भवतन भोग विरक्त उदार। सिद्ध०

ओं ह्रीं भूतार्थभावनारिद्धाय नमः अर्घं ॥ ८१५ ॥

धर्माधर्म जान सब ठीक, मोक्षपुरी दिखलायो लीक। सिद्ध०।

ओं ह्रीं चतुराननजिनाय नमः अर्घं ॥ ८१६ ॥

वीतराग सर्वज्ञ सु देव, सत्यवाक वक्ता स्वयमेव। सिद्ध०। ८१७।

ॐ ह्रीं सत्यवक्त्रे नमो अर्घं।

मन वच काय जोग परिहार, कर्मवर्गणा नाहि लगार। सिद्ध०। ८१८

ओं ह्रीं निराश्रवाय नमः अर्घं।

चार अनुयोग कियो उपदेश, भव्य जीव सुख लहत हमेश।
सिद्धसमूह जजूं मन लाय, भव भवमें सुखसंपतिदाय ॥ ८१९।

ओं ह्रीं चतुर्भूमिकशासनाय नमः अर्घं।

काहू पदसों मेल न होय, अन्वय रूप कहावै सोय। सिद्ध० ८२०

ओं ह्रीं अन्वयाय नमः अर्घं।

हो समाधिमें नित लवलीन, विन आश्रय नित ही स्वाधीन । सिद्ध० ८२१

ओं ह्रीं योगाय नमः अर्घं ।

लोक भाल हो तिलक अनूप, हो लोकोत्तम शेप स्वरूप । सिद्ध० ८२२

ओं ह्रीं लोकभालतिलकजिनाय (विशेपकाय) नमः अर्घं ।

अक्षाधीन हीन हैं शक्त, तिसको नाश करी निज व्यक्त । सिद्ध० ८२३

ओं ह्रीं तुच्छभावभिदे नमो अर्घं ।

जीवादिक पदार्थ षट् जान, तिनको भलीभांति है ज्ञान ।
सिद्धसमूह जजूं मन लाय, भव भवमें सुखसंपतिदाय ॥ ८२४ ॥

ॐ ह्रीं षट्पदार्थदर्शने नमः अर्घं ।

विकलरूप नय सकल प्रमाण, वस्तु भेद जानो स्वज्ञान । सिद्ध०

ओं ह्रीं सकलवस्तुविज्ञात्रे नमः अर्घं ॥ ८२५ ॥

सब पदार्थ दर्शत तुम वैन, संशय हरण करण सुख चैन । सिद्ध०

ओं ह्रीं षोडशपदार्थवादिने नमः अर्घं ॥ ८२६ ॥

वर्णन करि पंचासतिकाय, भव्य जीव संशय विनशाय । सिद्ध० ८२७

ओं ह्रीं पंचास्तिकायबोधकजिनाय नमः अर्घ ।

प्रतिबिंबित हो आरसि माहि, ज्ञानाध्यक्ष जान हो ताहि । सिद्ध० ।

ओं ह्रीं ज्ञानांतराध्यक्षाय नमः अर्घ । ८२८ ।

जामें ज्ञान जीव हो एक, सो परकाशो शुद्ध विवेक । सिद्ध० ।

ओं ह्रीं समवायसार्थकश्रुतये नमः अर्घ । ८२९ ।

भक्तनिके हो साध्य सु कर्म, अंतिम पौरुष साधन धर्म । सिद्ध० ।

ओं ह्रीं भक्तैकसाधकधर्माय नमः अर्घ । ८३० ।

बाकी रहो न गुण शुभ एक, ताको स्वादन हो प्रत्येक ।
सिद्धसमूह जजूं मन लाय, भव भवमें सुखसंपतिदाय ॥ ८३१ ॥

ओं ह्रीं निरनशेषगुणामृताय नमः अर्घ ।

नय सुपक्ष करि सांख्य सुवाद, तुम निरवाद पक्षकर साद । सिद्ध० ।

ओं ह्रीं सांख्यादिपक्षविध्वंसकजिनाय नमः अर्घ । ८३२ ।

सम्यग्दर्शन है तुम वैन, वस्तु परीक्षा भाखों ऐन । सिद्ध० ।

ओं ह्रीं समीक्षाय नमः अर्घं ।

धर्मशास्त्रके हो कर्तार, आदि पुरुष धारो अवतार । सिद्ध० ॥ ८३४ ॥

ओं ह्रीं कपिलाय नमः अर्घं ।

नय साधत नैयायक नाम, सो तुम पक्ष धरो अभिराम । सिद्ध० ।

ॐ ह्रीं पंचविंशतितत्त्ववेदकाय नमः अर्घं ॥ ८३५ ॥

स्वपर चतुष्क वस्तुको भेद, व्यक्ताव्यक्त करो निरखेद । सिद्ध० ।

ॐ ह्रीं व्यक्ताव्यक्तज्ञानविदे नमो अर्घं ॥ ८३६ ॥

दर्शन ज्ञान भेद उपयोग, चेतनता मय है शुभ योग । सिद्ध० ।

ॐ ह्रीं ज्ञानदर्शनचेतनभेदये नमः अर्घं ॥ ८३७ ॥

स्वसंवेदन शुद्ध धराय, अन्य जीव हैं मलिन कुभाय । सिद्ध० ।

ॐ ह्रीं स्वसंवेदनज्ञानवादिने नमः अर्घं ॥ ८३८ ॥

द्वादश सभा करैं सतकार, आदर योग वैन सुखसार । सिद्ध० ।

ॐ ह्रीं समोसरणद्वादशसभापतये नमः अर्घं ॥ ८३९ ॥

आगम अक्ष अनक्ष प्रमान, तीन भेदकर तुम पहिचान । सिद्ध० ।

ॐ ह्रीं त्रिमाणाय नमः अर्घं ॥ ८४० ॥

विशद शुद्ध मति हो साकार, तुमको जानत है सु विचार । सिद्ध० ।

ओं ह्रीं अक्षप्रमाणाय नमः अर्घं ॥ ८४१ ॥

नयसापेक्ष कहैं शुभ वैन, हैं अशंस सत्यार्थ ऐन ।
सिद्धसमूह जजूं मन लाय, भव भवमें सुखसंपतिदाय ॥ ८४२ ॥

ओं ह्रीं स्याद्वादद्दशे नमो अर्घं ।

लोकालोक क्षेत्रके माँहि, आप ज्ञानमें सब दरशाय ।
सिद्धसमूह जजूं मन लाय, भव भवमें सुखसंपतिदाय । ८४३ ।

ओं ह्रीं क्षेत्रज्ञाय नमो अर्घं ।

अन्तर बाह्य लेश नहीं और, केवल आतम मई अठौर । सिद्ध० ।

ओं ह्रीं शुद्धात्मने नमः अर्घं ॥ ८४४ ॥

अन्तिम पौरुष साध्यो सार, पुरुष नाम पायो सुखकार । सिद्ध० ।

ओं ह्रीं पुरुषाय नमो अर्घं ॥ ८४५ ॥

चहुंगतिमें नरदेह मझार, मोक्ष होत तुम नर आकार । सिद्ध० ।

ओं ह्रीं नराधिपाय नमः अर्घं ॥ ८४६ ॥

दर्श ज्ञान चेतनकी लार, निरावर्ण तुम हो अविकार । सिद्ध० ।

ॐ ह्रीं निरावरणचेतनाय नमः अर्घं ॥ ८४७ ॥

भाव न वेद वेद नरदेह, मोक्ष रूप है नहीं सन्देह । सिद्ध० । ८४८ ।

ओं ह्रीं मोक्षरूपजिनाय(पुंसे) नमः अर्घं ।

सत्य यथारथ हो सब ठीक, स्वयं सिद्ध राजो शुभ नीक ।
सिद्धसमूह जजूं मन लाय, भव भवमें सुखसम्पतिदाय ॥ ८४९ ॥

ओं ह्रीं अकृत्रिमाय नमः अर्घं ।

दोहा—जाकरि तुमको जानिये, सो है अगम्म अलक्ष ।

निर्गुण यातं कहत हैं, भव भयतैं हम रक्ष । ८५० ।

ओं ह्रीं निर्गुणाय नमः अर्घं ।

पुद्गलमें हैं अष्टगुण, सो तुममें इक नॉय ।

शुद्ध अमूरत देव हो, स्व प्रदेश चिद्राय । ८५१ ।

ओं ह्रीं अमूर्ताय नमो अर्घं ।

उमापती त्रिभुवन धनी, राजत भू भरतार ।

निजानन्दको आदि ले, महा तुष्ट निरधार । ८५२ ।

ओं ह्रीं भोक्ताय नमः अर्घ ।

व्यापक लोकालोकमें, ज्ञान ज्योतिके द्वार ।

लोकशिखर तिष्ठत अचल, करो भक्त उद्धार ॥ ८५३ ॥

ओं ह्रीं सर्वगताय नमः अर्घं ।

योग प्रबन्ध निवारियो, राग द्वेष निरवार ।

देहरहित निष्कंप हो, भये अक्रिया सार ॥ ॥ ८५४ ॥

ॐ ह्रीं अक्रियाय नमः अर्घं ।

सर्वोत्तम अति उच्च गति, जहां रहो स्वयमेव ।
देव वास है मोक्ष थल, हो देवनके देव ॥ ॥

ओं ह्रीं देवेष्टजिनाय (दिविष्ठये) नमः अर्घं ॥ ८५५ ॥

भवसागरके तीर हो, अचलरूप अस्थान ।
फिर नहीं जगमें जन्म है, राजत हो सुखथान ॥

ओं ह्रीं तटस्थाय नमो अर्घं ॥ ८५६ ॥

ज्योंके त्यों नित थिर रहो, अचलरूप अविनाश ।
स्वपदमय राजत सदा, स्वयं ज्योति परकाश ॥

ॐ ह्रीं कूटस्थाय नमः अर्घं ॥ ८५७ ॥

तत्त्व अतत्त्व प्रकाशियो, ज्ञाता हो सब भास ।
ज्ञान मूर्ति हो ज्ञान धन, ज्ञान ज्योति अविनाश ॥

ॐ ह्रीं ज्ञात्रे नमो अर्घं ॥ ८५८ ॥

पर निमित्तके योगतें, व्यापै नहीं विकार ।

स्वै स्वरूपमें थिर सदा, हो अबाध निरधार ॥

ओं ह्रीं निराबाधाय नमः अर्घ ॥ ८५९ ॥

चारवाक वा सांख्यमें, झूठी पक्ष धरात ।
अल्प मोक्ष नहीं होत है, राजत हो विख्यात ॥

ओं ह्रीं निराभावाय नमो अर्घ ॥ ८६० ॥

तारण तरण जिहाज हो, अतुल शक्ति के नाथ ।
भव वारिधसे पारकर, राखो अपने साथ ॥

ॐ ह्रीं भववारिधिपारकराय नमो अर्घ ॥ ८६१ ॥

बन्ध मोक्षकी कहन है, सो भी है व्यवहार ।
तुम विवहार अतीत हो, शुद्ध वस्तु निरधार ॥ ८६२ ॥

ॐ ह्रीं निर्मोक्षाय नमः अर्घ ।

चारों पुरुषारथ विषें, मोक्ष पदारथ सार ।
तुम साधो परधान हो, सबमें सुख आधार ॥ ८६३ ॥

ॐ ह्रीं प्रधानाय नमः अर्घ ।

कर्ममैल प्रक्षालकै, निज आतम लवलाय ।
हो प्रसन्न शिवथल विषै, अन्तर मल विनशाय ॥ ८६४ ॥

ओं ह्रीं कर्मव्याधिविनाशकजिनाय(व्यवधानाय) नमः अर्घं ।

निज सुभाव निज वस्तुता, निज सुभावमें लीन ।
बन्दूं शुद्ध स्वभावमय, अन्य कुभाव मलीन ॥ ८६५ ॥

ॐ ह्रीं प्रकृताय नमः अर्घं ।

निज स्वरूप परकाश है, निरावर्ण ज्यों सूर ।
तुमको पूजत भावसौं, मोह कर्मको चूर ॥ ८६६ ॥

ओं ह्रीं निरावरणसूर्यजिनाय नमः अर्घं ।

निज भावनतें मोक्ष हो, ते ही भाव रहात ।
स्वगुण स्व परजायमें, थिरता भाव धरात ॥ ८६७ ॥

ओं ह्रीं स्वरूपआरूढ़जिनाय नमः अर्घं ।

सब कुभावको जीतियो, शुद्ध भये निरमूल ।

शुद्धातम कहलात हो, नमत नशे अघ मूल ॥ ८६८ ॥
ॐ ह्रीं प्रकृतिप्राशाय नमः अर्घं ।

निज सन्मतिके सन्मती, निज बुधके बुधवान ।
शुभ ज्ञाता शुभ ज्ञान हो, पूजत मिथ्या हान ॥ ८६९ ॥
ओं ह्रीं विशुद्धसन्मतिजिनाय (सत्यभिज्ञानाय) नमः अर्घं ।

कर्म प्रकृतिको अंश बिन, उत्तर हो या मूल ।
शुद्ध रूप अति तेज घन, ज्यों रवि बिंब अधूल ॥ ८७० ॥
ओं ह्रीं प्रकृतये नमो अर्घं ।

आदि पुरुष आदीश जिन, आदि धर्म अवतार ।
आदि मोक्ष दातार हो, आदि कर्म हरतार ॥ ८७१ ॥
ओं ह्रीं ब्रह्मणे नमः अर्घं ।

नहीं विकार आवै कभी, रहो सदा सुखरूप ।
रोग शोक व्यापै नहीं, निवसै सदा अनूप ॥ ८७२ ॥
ओं ह्रीं निर्विकृतये नमः अर्घं ।

निज पौरुष करि सूर्य सम, हरो तिमिर मिथ्यात।
तुम पुरुषारथ सफल है, तीन लोक विख्यात ॥ ८७३ ॥

ॐ ह्रीं मिथ्यातिमिरविनाशकाय (कृतिने) नमः अर्घं ।

वस्तु परीक्षा तुम विना, और झूठ करखेद।
अंधकूपमें आप सर, डारत हैं निरभेद। ८७४।

ओं ह्रीं मीमांसकाय नमः अर्घं ।

होनहार था हो लई, या पइये इस काल।
अस्तरूप सब वस्तु हैं, तुम जानो यह हाल। ८७५।

ओं ह्रीं अस्तिसर्वज्ञाय नमः अर्घं।

जिनवाणी जिन सरस्वती, तुम गुणसों परिपूर।
पूज्य योग तुमको कहैं, करैं मोहमद चूर। ८७६।

ओं ह्रीं श्रुतपूज्याय नमः अर्घं।

स्वयं स्वरूप आनन्द हो, निज पद रमन सुभाव।
सदा विकाशित हो रहै, बन्दूं सहज सुभाव। ८७७।

ओं ह्रीं सदोत्सवाय नमः अर्घं ।

मन इन्द्री जानत नहीं, जाको शुद्ध स्वरूप ।
वचनातीत स्वगुण सहित, अमल अकाय अरूप । ८७८ ।

ॐ ह्रीं परोक्षज्ञानागम्याय(वाक्यातीताय) नमः अर्घं ।

जो श्रुतज्ञान कला धरै, तिनको हो तुम इष्ट ।
तुमको नित प्रति ध्यावते, नाशे सकल अनिष्ट । ८७९ ।

ओं ह्रीं इष्टपाठकाय नमः अर्घं ।

निज समरथ कर साधियो, निज पुरुषारथ सार ।
सिद्ध भये सब काम तुम, सिद्ध नाम सुखकार । ८८० ।

ओं ह्रीं सिद्धकर्मक्षयाय नमः अर्घं ।

पृथ्वी जल अगनी पवन, जानत इनके भेद ।
गुण अनंत पर्याय सब, सो विभाग परिछेद । ८८१ ।

ओं ह्रीं चार्वाकाय नमः अर्घं ।

स्वैसंवेदन ज्ञानमें, देखत होय प्रत्यक्ष ।

रक्षक हो तिहूं लोकके, हम शरणागति पक्ष। ८८२।

ओं ह्रीं प्रत्यक्षैकप्रमाणाय नमः अर्घं।

विद्यमान शिवलोकमें, स्वगुण पर्याय समेत।
कहैं अभाव कुमती मती, निजपर धोका देत। ८८३।

ॐ ह्रीं अस्तिपरलोकाय नमः अर्घं।

तुम आगमके मूल हो, अपर गुरू हैं नाम।
तुम वानी अनुसार ही, भये शास्त्र अभिराम। ८८४।

ॐ ह्रीं गुरुश्रुतये नमः अर्घं।

तीन लोकके नाथ हो, ज्यों सुरगणमें इन्द्र।
स्वैपद रमन स्वभाव धर, नमें तुम्हें देवेन्द्र। ८८५।

ॐ ह्रीं त्रिलोकनाथाय नमः अर्घं।

सब स्वभाव अविरुद्ध हैं, स्वैपर घातक नाहिं।
सहचारी परिणाम हैं, निवसत हैं तुम माहिं। ८८६।

ॐ ह्रीं स्वस्वभावअविरुद्धजिनाय(अविरुद्धवर्णाय) नमः अर्घं।

ब्रह्म ज्ञानको वेदकर, भये शुद्ध अविकार ।
पूरण ज्ञानी हो नमूं, लहा वेदको सार । ८८७ ।
ॐ ह्रीं वेदांतनयाय नमो अर्घं ।

शब्द ब्रह्मके ज्ञानतें, आतम-तत्त्व विचार ।
शुक्लध्यानमें लय भए, हो अतर्क अविचार । ८८८ ।
ओं ह्रीं शब्दाद्वैतब्रह्मणे(नयाय) नमः अर्घं ।

सूक्षम तत्त्व प्रकाश कर, सूक्षम कर्म उच्छेद ।
मोक्षमार्ग परगट कियो, कहो सु अन्तर भेद । ८८९ ।
ओं ह्रीं सूक्ष्मतत्त्वप्रकाशकजिनाय (विस्फोटनवादिने) नमः अर्घं ।

तीन शतक त्रेसठ जु हैं, सब मानै पाखण्ड ।
धर्म यथारथ तुम कहो, तिन सबके ताईं खण्ड । ८९० ।
ओं ह्रीं पाखण्डखण्डकाय नमः अर्घं ।

कर्णरूप करतार हो, कोईक नयके द्वार ।
सुर मुनि करि पूजत भए, माननीक सुखकार । ८९१ ।

ओं ह्रीं अखण्डानन्दजिनाय नमः अर्घं ।

केवलज्ञान उपाइकें, तदन्तर हो मोक्ष ।
साक्षात बड़भागसैं, पूजूं इहां परोक्ष । ८९२ ।

ॐ ह्रीं अन्तकृते नमः अर्घं ।

शरणागतको पार कर, देत मोक्ष अभिराम ।
तारण तरण सु नाम हैं, तुम पद करूं प्रणाम । ८९३ ।

ओं ह्रीं पारकृताय नमः अर्घं ।

भव समुद्र गम्भीर है, कठिन जासको पार ।
निज पुरुषार्थ करि तिरै, गहो किनारो सार । ८९४ ।

ओं ह्रीं तीरप्राप्ताय नमः अर्घं ।

एकवार जो शरण गहि, ताको हो हितकार ।
यातें सब जग जीवकें, हो आनंद दातार । ८९५ ।

ओं ह्रीं परहितस्थिताय नमः अर्घं ।

रत्नत्रय निज नेत्रसों, मोक्षपुरी पहुंचात।
महादेव हो जगत पितु, तीन लोक विख्यात। ८९६।

ॐ ह्री रत्नत्रयनेत्रजिनाय(त्र्यक्षणे) नमः अर्घं।

तीन लोकके नाथ हो, महा ज्ञान भण्डार।
सरल भाव विन कपट हो, स्वच्छ शुद्ध अविकार। ८९७।

ॐ ह्रीं शुद्धबुद्धजिनाय (द्व्यक्षणे) नमः अर्घं।

निश्चै वा व्यवहारके, हो तुम जाननहार।
वस्तुरूप निज साधियो, पूजत हूं निरधार। ८९८।

ओं ह्रीं ज्ञानकर्मसमुच्चाय नमः अर्घं।

सुरनर पशु न अघावते, सभी ध्यावते ध्यान।
तुमको नित ही ध्यावते, पावै सुख निर्वाण। ८९९।

ओं ह्रीं नित्यतृप्तजिनाय (संहृतध्वनये) नमः अर्घं।

कर्म मैल प्रक्षाल करि, तीनो योग समारि।

पाप शैल छिन्न भिन्न कर, भये अयोग सुखार । ९०० ।

ओं ह्रीं पापमैलनिवारकाय (उत्पादनयोगाय) नमः अर्घं ।

सूरज हो स्वै ज्ञान घन, ग्रहण उपद्रव नाहिं ।
वे खटके शिवपंथ सब, दीखत हैं जिस माहिं । ९०१ ।

ओं ह्रीं निरावारणज्ञानजिनाय नमः अर्घं ।

जोग योग संकल्प कर, हरो देहको साथ ।
रहो अकंपित थिर सदा, मैं नाऊँ निज माथ । ९०२ ।

ओं ह्रीं योगक्लेशापहाय नमः अर्घं ।

जोग सुथिरताको हरै, करै आगमन कर्म ।
तुम तासों निर्लेप हो, नशौ मोहमद शर्म । ९०३ ।

ओं ह्रीं योगकृतनिर्लेपाय नमः अर्घं ।

निज आतममें स्वस्थ हैं, स्वपद योग रमाय ।
निर्भय तुम निर द्वन्द्व हो, नमूं जोर कर पाँय । ९०४ ।

ओं ह्रीं स्वस्थलयोगरतये नमः अर्घं ।

महादेव गिरिराज पर, जन्म समै जिन सूर ।
योग किरण विकसात हो, शोकतिमिर कर दूर । ६०५ ।

ओं ह्रीं गिरिसंयोगजिनाय नमः अर्घं ।

सूक्ष्म निज परदेश तन, सूक्ष्म क्रिया परिणाम ।
चितवत मन नहिं वश चलै, राजत हो शिवधाम । ९०६ ।

ओं ह्रीं सूक्ष्मीकवपुःक्रियाय नमः अर्घं ।

सूक्षम तत्त्व परकाश हैं, शुभ प्रिय वचनन द्वार ।
भविजनको आनंद करि तीन जगत गुरु सार । ९०७ ।

ओं ह्रीं सूक्ष्मवाक्चितयोगाय नमः अर्घं ।

कर्म रहित शुद्धात्मा, निश्चल क्रिया रहात ।
स्वप्रदेश मय थिर सदा, कृत्याकृत्य सुख पात । ९०८ ।

ओं ह्रीं निःकर्माय नमः अर्घं ।

विद्यमान प्रत्यक्ष है, चेतनराय प्रकाश।
कर्म कालिमासों रहित, पूजत हो अघ नाश। ९०९।

ओं ह्रीं भूताभिव्यक्तचेतनाय नमः अर्घं।

ग्रहि स्वाचरण सुभेद करि, धर्मरूप सत्यांश।
एक तुम्हीं हो धर्म करि, पायो शिवपुर वास। ९१०।

ओं ह्रीं दण्डिने नमः अर्घं।

सूर्य प्रकाशन मोह तम, हरता हो शुभ पंथ।
पाप क्रिया विन राजते, महायती निरग्रंथ ॥ ९११ ॥

ओं ह्रीं परमहंसाय नमः अर्घं।

बंध रहित सर्वस्व करि, निर्मल हो निर्लेप।
शुद्ध सुवर्ण दिपै सदा, नहीं मोह मल लेप ॥ ९१२ ॥

ॐ ह्रीं परमसंवराय नमः अर्घं।

मेघ पटल विन सूर्य जिम, दीप्त अनन्त प्रताप।
निरावर्ण तुम शुद्ध हो, पूजत मिट है पाप ॥ ११३ ॥
ॐ ह्रीं निरावर्णाय नमः अर्घं ।

कर्म अंश सब झर गिरे, रहो न एक लगार।
परम शुद्धता धारकै, तिष्ठो हो अविकार ॥ ११४ ॥
ओं ह्रीं परमनिर्जराय नमो अर्घं ।

तेज प्रचण्ड प्रभाव है, उदय रूप परताप।
अन्य कुदेव कुआगिया, झूठा धरत कलाप ॥ ११५ ॥
ओं ह्रीं प्रज्वलितप्रभावाय नमः अर्घं ।

भये निरर्थक कर्म सब, शक्ति भई है हीन।
तिनकों जीते छनकर्में, भये सुखी स्वाधीन ॥ ११६ ॥
ओं ह्रीं समस्तकर्मक्षयजिनाय (मोघकर्मणे) नमः अर्घं ।

कर्म प्रकृतिको रोग सम, जानो हो क्षयकार।

निज स्वरूप आनन्दमें, कहो विगार निहार ॥ ११७ ॥
ओं ह्रीं कर्मविस्फोटकाय नमो अर्घं ।

हीन शक्ति परमादको, आप कियो है अन्त ।
निज पुरुषार्थ सुवीर्यसों, सुखी भए सु अनन्त ॥ ११८ ॥
ओं ह्रीं अनंतवीर्यजिनाय(शैथिल्यान्ताय) नमः अर्घं ।

एक रूप रस स्वादमें, निर आकुलित रहाय ।
विविध रूप रस पर निमित, ताको त्याग कराय ॥ ११९ ॥
ॐ ह्रीं एकाकाररसास्वादाय नमः अर्घं ।

इन्द्री मनके सब विषय, त्याग दिये इक लार ।
निजानन्दमें मगन हैं, छांडो जग व्यापार ॥ १२० ॥
ओं ह्रीं विश्वाकाररसास्वादाकुलिताय नमो अर्घं ।

पर सम्बन्धी प्राण बिन, निज प्राणनि आधार ।
सदा रहै जीतव्यता, जरा मृत्युको टार ॥ १२१ ॥

ॐ ह्रीं जीविताय नमः अर्घं ।

निज रसके सागर धनी, महा प्रिय स्वादिष्ट ।
अमर रूप राजै सदा, सुर मुनिके हो इष्ट ॥ ९२२ ॥

ओं ह्रीं अमृताय नमः अर्घं ।

पूरण निज आनन्दमें, सदा जागते आप ।
नहिं प्रमादमें लिप्त हैं, पूजत विनशे पाप ॥ ९२३ ॥

ॐ ह्रीं जाग्रताय नमः अर्घं ।

क्षीण (दिपै) ज्ञान ज्ञानावरण, करै जीवको नित्य ।
सो आवर्ण विनाशियो, रहो अस्वप्न सुवित्य ॥ ९२४ ॥

ओं ह्रीं अस्वप्नाय नमः अर्घं ।

स्व प्रमाणमें थिर सदा, स्वयं चतुष्टय सत्य ।
निराबाध निर्भय सुखी, त्यागत भाव असत्य ॥ ९२५ ॥

ॐ ह्रीं अशून्यताय नमः अर्घं ।

श्रम करि नहीं आकुलित हो, सदा रहो निरखेद ।
स्वस्थरूप राजो सदा, वेदो ज्ञान अभेद । ६२६ ।

ओं ह्रीं अप्रयासाय नमः अर्घं ।

मन वच तन व्यापार था, तावत रहो शरीर ।
ताको नाश अकंप हो, बन्दूं मन धर धीर । ६२७ ।

ओं ह्रीं अयोगिने नमः अर्घं ।

जितने शुभ लक्षण कहे, तुममें हैं एकत्र ।
तुमको बन्दूं भावसों, हरो पाप सर्वत्र । ९२८ ।

ओं ह्रीं चतुरशीतिलक्षणाय नमः अर्घ ।

तुम लक्षण सूक्षम महा, इन्द्रिय विषय अतीत ।
वचन अगोचर गुण धरो, निर्गुण कहत सुनीत । ६२९ ।

ॐ ह्रीं अगुणाय नमः अर्घं ।

अगुरुलघू पर्यायके, भेद अनन्तानन्त ।

गुण अनन्त परिणाम करि, नित्य नमें तुम संत ।

ओं ह्रीं अनन्तानन्तपर्यायाय नमः अर्घं । ६३० ।

रागद्वेषके नाशतें, नहीं पूर्व संस्कार ।
निज सुभावमें थिर रहैं, अन्य वासना टार ।

ॐ ह्रीं पूर्वसंस्कारवर्ज्याय नमः अर्घं । ६३१ ।

गुण चतुष्टमें वृद्धता, भई अनन्तानन्त ।
तुम सम और न जगतमें, सदा रहो जयवंत ॥ ६३२ ॥

ओं ह्रीं वृद्धाय नमः अर्घ ।

आर्ष कथित उत्तम वचन, धर्म मार्ग अरहन्त ।
सो सब नाम कहो तुम्हीं, शिवमारगके सन्त ॥ ६३३ ॥

ओं ह्रीं प्रियवचनाय नमः अर्घं ।

महाबुद्धिके धाम हो, सूक्षम शुद्ध अवाच्य ।
चार ज्ञान नहीं गम्य हो, वस्तुरूप सो साध्य ॥ ६३४ ॥

ओं ह्रीं अणुकाय नमः अर्घं ।

सूक्षमतें सूक्षम विषैं, तुमको है परवेश ।
आपै सूक्षम रूप हो, राजत निज परदेश ॥ ९३५ ॥

ॐ ह्रीं अनीशाय नमः अर्घं ।

कर्म प्रबन्ध सुघन पटल, ताकी छांय निवार ।
रविघन ज्योति प्रगट भई, पूरणता विधि धार ॥ ९३६ ॥

ओं ह्रीं अनणुपर्यायाय नमः अर्घं ।

निज प्रदेशमें थिर सदा, योग निमित्त निवार ।
अचल शिवालयके विषैं, तिष्ठै सिद्ध अपार ॥ ९३७ ॥

ओं ह्रीं स्थेयसे नमः अर्घं।

सन्त नमन प्रिय हो अती, सज्जन वल्लभ जान ।
मुनि जन मन प्यारे सही, नमत होत कल्याण ॥ ९३८ ॥

ॐ ह्रीं श्रेष्ठाय नमः अर्घं ।

काल अनन्तानन्त करि, गहै शिवालय वास ।
अव्यय अविनाशी सुथिर, स्वयं जोति परकाश । ९३९ ।

ओं ह्रीं स्थिराय नमः अर्घं ।

स्व आतममें वास है, रुलत नहीं संसार ।
ज्योंके त्यों निश्चल सदा, बंदत भवदधि पार । ९४० ।

ओं ह्रीं निष्ठाय नमः अर्घं ।

सुभग सराहन योग्य हैं, उत्तम भाव धराय ।
तीन लोकमें सार है, मुनि जन बंदित पाय । ९४१ ।

ओं ह्रीं श्रेष्ठाय नमः अर्घं ।

सबके अग्रेसर भये, सबके हो सिरताज ।
तुमसे बड़ा न और है, सबके कर हो काज । ९४२ ।

ओं ह्रीं जेष्ठाय नमः अर्घं ।

स्व प्रदेश निष्कम्प हैं, द्रव्य भाव विधि नाश ।

इष्टानिष्ट निमिति धरै, निज आनन्द विलास ।
ओं ह्रीं सुनिष्ठाय नमः अर्घं । ६४३ ।
उचित क्षमादिक अर्थ सब, सत्य सुनाय सुलब्ध ।
तिन सबके स्वामी नमूं, पूरण सुखी अनब्ध । ९४४ ।
ओं ह्रीं भूतार्थेश्वराय नमः अर्घं ।
महा कठिन आशक्य है, यह संसार निकाश ।
तुम पायो पुरुषार्थ करि, लहो स्वलब्धि अवास । ९४५ ।
ओं ह्रीं पूज्यपादजिनाय (भूतार्थकराय) नमः अर्घं ।
परमारथ निज गुण कहे, मोक्ष प्राप्तिमें होय।
स्वारथ इन्द्रिय जन्य है, सो तुम इनको खोय । ९४६ ।
ओं ह्रीं परमार्थगुणाय नमः अर्घं ।
पर निमित्त या भेद करि, या उपचरित कहाय ।
सो तुममें सब लय भए, मानों स्वप्न कराय ॥

ओं ह्रीं व्यवहारसुप्ताय नमः अर्घं । ९४७ ।

निज पदमें नित रमत है, अप्रमाद अधिकाय ।
निज गुण सदा प्रकाश है, अतुलबली नमूं पाय ।

ॐ ह्रीं अतिजागरूकाय नमः अर्घं । ९४८ ।

सकल उपद्रव मिटि गये, जे थे परकी साथ ।
निर्भय सदा सुखी भये, बन्दूं नमि निज माथ ।

ओं ह्रीं स्वस्थिताय नमः अर्घं । ९४९ ।

कहै हुवे हो नेमसैं, परमाराध्य अनादि ।
तुम महातमा जगतके, और कुदेव कुवादि । ९५० ।

ओं ह्रीं उदितोदितमाहात्म्याय नमः अर्घं।

तत्त्वज्ञान अनुकूल सब, शब्द प्रयोग विचार ।
तिसके तुम अध्याय हो, धर्म प्रकाशनहार । ९५१ ।

ॐ ह्रीं तत्त्वज्ञानानुकूलजिनाय (निरूपणाध्यायाय) नमः अर्घं ।

ना काहूंसो जन्म हो, ना काहूंसो नाश।
स्वयं सिद्ध विन पर निमित, स्वस्वरूप परकाश। १५२।
ॐ ह्रीं अकृत्रिमाय नमः अर्घं।

अप्रमाण अत्यन्त है, तुम सन्मति परकाश।
तेजरूप उत्सवमई, पाप-तिमिरको नाश॥ १५३॥
ओं ह्रीं अप्रमेयमहिम्ने नमः अर्घं।

रागादिक मलको धरे, तनक नहीं अनवास।
महा विशुद्ध अत्यन्त हैं, हरो पाप अहि डांस॥ १५४॥
ओं ह्रीं अत्यन्तशुद्धाय नमो अर्घं।

सिद्ध स्वयं भरतार हो, शिव कामिनके संग।
रमण भाव स्वै योगमें, मानों अरह अनंग॥ १५५॥
ओं ह्रीं संवराय नमः अर्घं।

विविध प्रकार न धरत है, है अजन्म अव्यक्त।

सूक्षम सिद्ध समान हैं, स्वयं स्वभाव सुव्यक्त ॥ १५६ ॥
ओं ह्रीं सिद्धानुजाताय नमः अर्घं ।

मोक्षरूप शुभ वासके, आप मार्ग निरखेद ।
भविजन सुलभ गमन करैं, जगत वासको छेद ॥ १५७ ॥
ओं ह्रीं शिवपुरीपथाय नमः अर्घं ।

गुणसमूह अत्यंत है, कोई न पावै पार ।
थकित रहै श्रुतकेवली, निजबल कथन अगार ॥ १५८ ॥
ओं ह्रीं सिद्धगुणतीर्थाय नमः अर्घं ।

इक अवगाह प्रदेशमें, हो अवगाह अनन्त ।
पर उपाधि निग्रह कियो, मुख्य प्रधान फनन्त ॥ १५९ ॥
ओं ह्रीं संगोन्मुखाय नमः अर्घं ।

स्वयं सिद्ध निज वस्तु हो, आगम इन्द्रिय ज्ञान ।
कर्त्तादिक(कर्मादिक) लक्षण नहीं, स्वयं स्वभाव प्रमान ॥१६०

ओं ह्रीं सिद्धालिंगाय नमः अर्घं ।

हो प्रच्छन्न इंद्रिय अगम, प्रगट न जाने कोय ।
सकल अगुणको लय कियो, निज आतमसे खोय ॥ ९६१ ॥

ओं ह्रीं सिद्धोपगूहकाय नमः अर्घं ।

निज गुण करि निज पोखियो, सकल क्षुद्रता त्याग ।
पूरण निजपद पाय करि, तिष्ठत हो बडभाग ॥ ९६२ ॥

ओं ह्रीं पुष्टाय नमः अर्घं ।

ब्रह्मचर्य पूरण धरैं, निजपद रमता धार ।
सहस अठारह भेद करि, शील सुभाव सु सार । ९६३ ।

ओं ह्रीं अष्टादशसहस्रशीलेश्वराय नमः अर्घं ।

महा पुन्य शिवपद्कमल, ताके दल विकसान ।
मुनि मन भ्रमर रमण सुथल, गन्धानन्द महान ॥ ९६४ ॥

ओं ह्रीं पुण्यसंकुलाय नमः अर्घं ।

मति श्रुत अवधि त्रिज्ञान युत, स्वयं बुद्ध भगवान ।
क्रत युगमें मुनि व्रत धरो, शिव साधक परधान ॥ ९६५ ॥

ओं ह्रीं व्रताग्न्याय नमः अर्घं ।

परम शुक्ल शुभ ध्यानमें, तुम सेवन हितकार ।
संत उपासक आयके, कर्मबन्ध छुटकार ॥ ९६६ ॥

ओं ह्रीं परमक्लेशोपचारकृतये नमः अर्घं ।

खारवार इस जलधिको, शीघ्र कियो तुम अन्त ।
गोखुरकार उलंघियो, धरो स्व भुज बलवन्त । ९६७ ।

ॐ ह्रीं क्षेपिष्ठाय नमः अर्घं ।

एक समयमें गमन कर, कियो शिवालय वास ।
काल अनन्त अचल रहो, मेटो जग भ्रम त्रास । ९६८ ।

ॐ ह्रीं अन्तरक्षणसिद्धये नमः अर्घं ।

पंच अक्षर लघु जापमें, जितना लागे काल ।

अन्तिम पाया शुक्लका, ध्याय वसै जग भाल । ६६६ ।

ॐ ह्रीं पंचलघुअक्षरस्थितये नमो अर्घं ।

द्वादश प्रकृति अशेष हैं, जबतक मोक्ष न होय ।
सब ही प्रकृतिको मेटकैं, पहुंचे शिवपुर सोय । ६७० ।

ओं ह्रीं द्वादशप्रकृत्याशेषाय नमः अर्घं ।

तेरह विधि चारित्रके, तुम हो पूरण शूर ।
निज पुरुषार्थ थकी लियो, शिवपुर आनन्द पूर । ६७१ ।

ओं ह्रीं त्रयोदशचारित्रपूर्णताय नमः अर्घं ।

निज सुखमें अन्तर नहीं, परसों हानि न होय ।
स्वस्थ रूप परदेश जिन, तिन पूजत हूं सोय । ६७२ ।

ओं ह्रीं अच्छेद्याय नमो अर्घं ।

निज पूजनमें देत हो, शिव संपति अधिकाय ।
यातें पूजन योग्य हो, पूजूं मन वच काय । ७७३ ।

ॐ ह्रीं याजकाय नमः अर्घं ।

मोह महा परचण्ड बल, सकै न तुमको जीत ।
नमूं तुम्हें जयवंत हो, धार सु उरमें प्रीत । ६७४ ।

ओं ह्रीं अजय्याय नमः अर्घं ।

जज्ञ विधानमें जजत ही, आप मिलो निधि रूप ।
तुम समान नहीं और धन, हरत दरिद्र दुख कूप । ६७५ ।

ओं ह्रीं याज्याय नमः अर्घं ।

लोकोत्तर संपद् विभव, है सर्वस्व अघाय ।
तुमसे अधिक न और है, सुख विभूति शिवराय । ६७६ ॥

ओं ह्रीं अनर्घप्रग्रहाय नमः अर्घं ।

तुमको आह्वानन यजन, प्रासुक विधिसे योग ।
त्रिजग अमोलिक निधि सही, देत पर्म सुख भोग । ६७७ ॥

ओं ह्रीं अनर्घहेतवे नमो अर्घं ।

एक देश मुनिराज हैं, सर्व देश जिनराज।
भव तन भोग विरक्तता, निर्ममत्व सुख साज ॥ ९७८ ॥

ॐ ह्रीं परमनिष्पृहाय नमो अर्घं ।

परदुखमें दुख हो जहां, मोह प्रकृतिके द्वार।
दया कहैं तिसको सुमति, सो तुम मोह निवार। ९७९ ।

ओं ह्री अत्यन्तनिर्दयाय नमः अर्घं ।

स्वयं बुद्ध भगवान हो, सुर मुनि पूजन योग।
विन शिक्षा शिवमार्गको, साधो हो धरि योग ।९८०।

ॐ ह्रीं अशिष्याय नमः अर्घं।

तुम एकत्व अन्यत्व हो, परसों नहीं सम्बन्ध।
स्वयं सिद्ध अविरुद्ध हो, नाशो जगत प्रबन्ध ॥ ९८१ ॥

ओं ह्रीं परसम्बन्धविनाशकाय नमः अर्घं ।

काहूको नहि यजन करि, गुरुका नहिं उपदेश ।
स्वयंबुद्ध स्वेशक्ति हो, राजो शुद्ध हमेश ॥ १८२ ॥
ओं ह्रीं अदीक्षाय नमो अर्घं ।

तुम त्रिभुवनके पूज्य हो, यजो न काहू ओर ।
निज हितमें रत हो सदा, पर निमित्तको छोर ॥ १८३ ॥
ओं ह्रीं अदीक्षिताय नमः अर्घं ।

अरहन्तादि उपासना, मोह उदयसों होय ।
स्वयं ज्ञानमें लय भए, मोह कर्मको खोय ॥ १८४ ॥
ॐ ह्रीं अदीक्षकाय नमः अर्घं ।

गौण रूप परिणाम हैं, सुख ध्रुवता गुण धार ।
अक्षय अवनीश्वर स्वपद, स्वस्थ सुथिर अविकार । १८५
ॐ ह्रीं अक्षयाय नमः अर्घं ।

सूक्षम शुद्ध स्वभाव को, लहै न गणधर पार ।

इन्द्र तथा अहमिन्द्र सब, अभिलाषित उर धार। ९८६।

ॐ ह्रीं अगम्याय नमः अर्घं।

अचल शिवालयके विषैं, टंकोत्कीर्ण समान।
सदा विराजो सुख सहित, जगत भ्रमणको हान। ९८७।

ओं ह्रीं अगमकाय नमो अर्घं।

रमण योग छद्मस्थके, नाहिं अलिंग सरूप।
पर प्रवेश विन शुद्धता, धारत सहज अनूप। ९८८।

ओं ह्रीं अरम्याय नमो अर्घं।

पर पदार्थ इच्छक नहीं, इष्टानिष्ट निवार।
सुथिर रहो निज आत्ममें, बन्दत हूं हित धार। ९८९।

ॐ ह्रीं अरमकाय नमः अर्घं।

जाको पार न पाइयो, अवधि रहित अत्यन्त।
सो तुम ज्ञान महान है, आशा राखे सन्त। ९९०।

ओं ह्रीं ज्ञाननिर्भराय नमः अर्घं ।

मुनिजन जिन सेवन करैं, पावैं निज पद सार ।
महा शुद्ध उपयोग मय, वरतत हैं सुखकार । ९९१ ।

ओं ह्रीं महायोगीश्वराय नमः अर्घं ।

भाव शुद्ध सो देहमें, द्रव्य शुद्ध विन देह ।
कर्म वर्गणा लिये, पूजत हूं धरि नेह । ९९२ ।

ॐ ह्रीं द्रव्यशुद्धाय नमः अर्घं ।

पंच प्रकार शरीरको, मूल कियो विध्वंश ।
स्व प्रदेशमय राजते, पर मिलाप नहीं अंश । ९९३ ।

ओं ह्रीं अदेहाय नमः अर्घं।

जाको फेर न जन्म है, फिर नाहीं संसार ।
सो पंचमगति शिवमई, पायो तुम निरधार । ९९४ ।

ॐ ह्रीं अपुनर्भवाय नमः अर्घं ।

सकल इन्द्रियां व्यर्थ करि, केवलज्ञान सहाय।
सव द्रव्यनिको ज्ञान है, गुण अनन्त पर्याय ॥ ९९५ ॥

ॐ ह्रीं ज्ञानैकविदे नमः अर्घं।

जीव मात्र निज धन सहित, गुण समूह मणि खान।
अन्य विभाव विभव नहीं, महा शुद्ध अविकार ॥ ९९६ ॥

ओं ह्रीं जीवधनाय नमः अर्घं।

सिद्ध भये परसिद्ध तुम, निज पुरुषारथ साध।
महा शुद्ध निज आतम मय, सदा रहे निरबाध ॥ ९९७ ॥

ओं ह्रीं सिद्धाय नमः अर्घ।

लोकशिखरपर थिर भए, ज्यों मंदिर मणि कुंभ।
निज शरीर अवगाहमें, अचल सु थान अलुंभ ॥ ९९८ ॥

ॐ ह्रीं लोकाग्रस्थिताय नमः अर्घं।

सहज निरामय भेद विन, निराबाध निस्संग।

एक रूप सामान्य हो, निज विशेष मई अंग ॥ ९९९ ॥

ओं ह्रीं निर्द्वंदाय नमः अर्घं ।

जे अविभाग प्रछेद हैं, इक गुणके सु अनन्त ।
तुममें पूरण गुण सही, धरो अनन्तानन्त ॥ १००० ॥

ओं ह्रीं अनन्तानन्तगुणाय नमः अर्घं ।

पर मिलाप नहीं लेश है, स्वप्रदेशमय रूप ।
क्षयोपशम ज्ञानी तुम्है, जानत नाहिं स्वरूप ॥ १००१ ॥

ओं ह्रीं आत्मरूपाय नमः अर्घं ।

क्षमा आत्मको भाव है, क्रोध कर्मसों घात ।
सो तुम कर्म खिवाइयो, क्षमा सु भाव धरात ॥ १००२ ॥

ॐ ह्रीं महाक्षमाय नमः अर्घं ।

शील सुभाव सु आत्मको, क्षोभ रहित सुखदाय ।
निर आकुलता धार है, बंदूं तिनके पाय ॥ १००३ ॥

ओं ह्रीं महाशीलाय नमः अर्घं ।

शशि स्वभाव ज्यों शांति धर, और न शांति धराय ।
आप शांति पर शांतिकर, भवदुख दाह मिटाय ॥ १००४ ॥

ओं ह्रीं महाशांताय नमः अर्घं ।

तुम सम को बलवान है, जीत्यो मोह प्रचण्ड ।
धरो अनन्त स्व वीर्यको, निज पद सुथिर अखण्ड ॥ १००५ ॥

ॐ ह्रीं अनन्तवीर्यात्मकाय (अनंतोजस्विने) नमः अर्घं ।

लोकालोक विलोकियो, संशय विन इकवार ।
खेद रहित निश्चल सुखी, स्वच्छ आरसी सार ॥ १००६ ॥

ॐ ह्रीं लोकालोकज्ञाय नमः अर्घं ।

निरावर्ण स्वै गुण सहित, निजानन्द रस भोग ।
अव्यय अविनाशी सदा, अजर अमर शुभ योग । १००७ ॥

ओं ह्रीं निरावरणाय नमः अर्घं ।

परम मुनीश्वर ध्यान धर, पावे निजपद सार।
ज्यों रविबिंब प्रकाश कर, घटपट सहज निहार। १००८।

ओं ह्रीं ध्येयगुणाय नमः अर्घं ।

कवलाहारी कहत हैं, महा मूढ मतिमंद।
अशन असाता पीरबिन, आप भये सुखकंद ॥ १००६ ॥

ॐ ह्रीं अशनदग्धाय नमो अर्घं ।

लोक शीष छवि देत हो, धरो प्रकाश अनूप।
बुधजन आदर जोग हो, सहज अकम्प सरूप ॥ १०१० ॥

ॐ ह्रीं त्रिलोकमणये नमो अर्घं ।

महागुणनकी रास हो, लोकालोक प्रजन्त।
सुर मुनि पार न पावते, तुम्है नमें नित सन्त ॥ १०११ ॥

ॐ ह्रीं अनन्तगुणप्राप्ताय नमः अर्घं ।

परम सु गुण परिपूर्ण हो, मलिन भाव नहीं लेश।

जगजीवन आराध्य हो, हम तुम यही विशेष ॥ १०१२ ॥

ओं ह्रीं परमात्मने नमः अर्घं ।

केवल ऋद्धि महान है, अतिशय युत तप सार ।

सो तुम पायो सहज ही, मुनिगण बंदनहार ॥ १०१३ ॥

ओं ह्रीं महाऋषये नमः अर्घं ।

भूत भविष्यत् कालको, कभी न होवे अंत ।

नित प्रति शिवपद पायकर, होत अनन्तानन्त ॥ १०१४ ॥

ॐ ह्रीं अनन्तसिद्धेभ्यो नमः अर्घं ।

निर्भय निर आकुलित हो, स्वयं स्वस्थ निरखेद ।

काहू विधि घबराट नहीं, निज आनंद अभेद ॥ १०१५ ॥

ओं ह्रीं अक्षोभाय नमः अर्घं ।

जो गुण गुणी सुभेद करि, सो जड मती अजान ।

निज गुण गुणी सु एकता, स्वयं बुद्ध भगवान ॥ १०१६ ॥

ओं ह्रीं स्वयंबुद्धाय नमः अर्घं ।

निरावरण निज ज्ञानमें, सर्व स्पष्ट दिखाय ।
संशय विन नहिं भरम है, सुथिर रहो सुखपाय ॥ १०१७ ॥

ॐ ह्रीं निरावरणज्ञानाय (निर्ममाय) नमः अर्घं ।

राग द्वेषके अंशमें, मत्सर भाव कहात ।
सो तुम नासो मूल ही, रहै कहांसो पात ॥ १०१८ ॥

ओं ह्रीं वीतमत्सराय नमः अर्घं ।

अणुवत लोकालोक है, जाके ज्ञान मझार ।
सो तुम ज्ञान अथाह है, बन्दूं मैं चित धार ॥ १०१९ ॥

ॐ ह्रीं अनन्तानन्तज्ञानाय नमो अर्घं ।

हस्त रेख सम देख हो, लोकालोक सरूप ।
सो अनन्त दर्शन धरो, नमत मिटै भ्रम कूप ॥ १०२० ॥

ॐ ह्रीं अनन्तानन्तदर्शनाय नमः अर्घं ।

तीन लोकका पूज्यपन, प्रगट कहै दिखलाय।
तीन लोक शिरवास है, लोकोत्तम सुखदाय ॥ १०२१ ॥

ओं ह्रीं लोकाग्रवासिने नमः अर्घं।

निज पदमें लवलीन हैं, निज रस स्वाद अघाय।
परसों इह रस गुप्त है, कोटि यत्न नहीं पाय। १०२२।

ओं ह्रीं सुगुप्तात्मने नमः अर्घं।

कर्म प्रकृतिको मूल नहीं, द्रव्य रूप यह भाव।
महा स्वच्छ निर्मल दिपो, ज्यों रवि मेघ अभाव। १०२३।

ओं ह्रीं पूतात्मने नमः अर्घं।

हीन अभाव न शक्ति है, कर्मबन्धको नाश।
उदय भये तुम गुण सकल, महा विभवकी राश। १०२४।

ओं ह्रीं महोदयाय नमः अर्घं।

पाप रूप दुख नाशियो, मोक्ष रूप सुख रास।

दासन प्रति मंगल करण, स्वयं संत है दास। १०२५।

ओं ह्रीं महामंगलात्मकजिनाय नमः अर्घं।

इति अर्घ सम्पूर्ण।

दोहा—कहैं कहांलों तुम सुगुण, अंशमात्र नहीं अन्त।
मंगलीक तुम नाम ही, जानि भजैं नित सन्त। १।

इत्याशीर्वादः।

ओं ह्रीं अर्हं पूर्णस्वगुणजिनाय नमः इति अर्घं, पूर्णार्घं।

अथ जयमाला।

दोहा—होनहार तुम गुण कथन, जीभ द्वार नहीं होय।
काष्ठ पांवसैं अनिल थल, नाक सकै नहीं कोय ॥ १ ॥
सूक्षम शुद्ध स्वरूपको, कहना है व्यवहार।
सो व्यवहारातीत हो, यातें हम लाचार ॥ २ ॥

पै जो हम कछु कहत हैं, शांति हेत भगवंत।
वार वार थुति करनमें, नहीं पुनरुक्त भनन्त ॥ ३ ॥

पद्धड़ी छन्द मात्रा-१६।

जय स्वयं शक्ति आधार योग, जय स्वयं स्वस्थ आनंद भोग।
जय स्वयं विकाश आभास भास, जइ स्वयं सिद्ध निज पद निवास ४
जय स्वयं बुद्ध संकल्प टार, जय स्वयं शुद्ध रागादि जार।
जय स्वयं स्वगुण आधार धार, जय स्वयं सुखी अक्षय अपार ५
जय स्वयं चतुष्टय राजमान, जय स्वयं अनन्त सुगुण निधान।
जय स्वयं स्वस्थ सुस्थिर अयोग, जय स्वयं स्वरूप मनोग योग। ६।
जय स्वयं स्वच्छ निज ज्ञान पूर, जय स्वयं वीर्य रिपु वज्र चूर।
जय महामुनिन आराध्य जान, जय निपुणमती तत्त्वज्ञ मान। ७।
जय सन्तनि मन आनन्दकार, जय सज्जन चित वल्लभ अपार।

जय सुरगण गावत हर्ष पाय, जय कवि यश कथन न करि अघाय ॥ ८ ॥
तुम महा तीर्थ भवि तरण हेत, तुम महाधर्म उद्धार देत ।
तुम महामंत्र विष विघ्न जार, अघ रोग रसायन कहो सार ॥ ९ ॥
तुम महाशास्त्रकी मूल ज्ञेय, तुम महा तत्त्व है उपादेय ।
तिहुं लोक महामंगल सु रूप, लोकत्रय सर्वोत्तम अनूप ॥ १० ॥
तिहुं लोक शरण अघ हर महान, भवि देत परम पद सुख निधान ।
संसार महासागर अथाह, नित जन्म मरण धारा प्रवाह ॥ ११ ॥
सो काल अनन्त दियो विताय, तामें झकार दुख रूप खाय ।
मम दुखी देख उर दया आन, इम पार करो कर ग्रहण पान ॥ १२ ॥
तुम हो हो इस पुरुषार्थ जोग, अरु है अशक्त करि विषय रोग ।
सुर नर पशु दास कहे अनन्त, इनमेंसे भी इक जान सन्त ॥ १३ ॥

धत्ता--कवित्त ।

जय विघन जलधि जल हनन, पवन बल सकल पाप मल जारन हो ।
जय मोह उपल हन वज्र असल, दुख अनिल ताप जल कारन हो ॥

ज्यूं पंगु चढ़ै गिर, गूंग भरे सुर, अभुज सिन्धु तर कष्ट भरै।
त्यों तुम थुति काम महा लज ठाम, सु अंत संत परणाम करै॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशत्यधिकसहस्रगुणयुक्तसिद्धेभ्यो नमः अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

इति पूर्णार्घम्।

तीन लोकचूड़ामणि, सदा रहो जयवन्त।
विघ्नहरण मंगल करन, तुम्हें नमें नित सन्त॥ १॥

इत्याशीर्वादः।

अथ पूर्ण आशीर्वादः।

अडिल्ल छन्द।

पूरण मंगल रूप महा यह पाठ है, सरस सु रुचि सुखकार भक्तिको ठाठ है।
शब्द अर्थमें चूक होय तो हो कहीं, श्रुति वा चक सब शब्द अर्थ यामें सही।१।

जिन गुण करण आरम्भ हास्यको धाम है, वायसका नहिं सिंधु उतीरण काम है
पै भक्तनिकी रीति सनातन है सही, क्षमा करो भगवन्त शांति पूरण मही

इत्याशीर्वाद–परिपुष्पाञ्जलिं क्षिपेत् ।

इति श्री सिद्धचक्रपाठ भाषा–कवि संतलालजी कृत समाप्तं ।

जाप्य मंत्र–ॐ ह्रीं अ सि आ उ सा नमः ॥ १०८ ॥

समाप्त